गुमानमिश्रविरचित

काव्यकलानिधि

अर्थात्

हिन्दी नैषध चरित

संपादक

सत्य जीवन वर्म्मा

(श्रीभारतीय)



१९९९

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

वक्तव्य

संस्कृत के महत्वपूर्ण ग्रन्थों एव पुराणो के अनुवाद हिन्दी में प्रकाशित करने का विषय बहुत समय से सम्मेलन के सामने रहा है। सम्मेलन की साहित्य समिति ने श्रद्धेय पुरुषोत्तम दास जी टडन के आग्रह से इस प्रकार की एक योजना कार्यान्वित करने की स्वीकृति दी थी। इस बात की घोषणा उसी समय समाचार पत्रो मे कर दी गई थी और विद्वानों से इस कार्य मे सहयोग करने की मांग उपस्थित की गई थी। फलस्वरूप कुछ ग्रन्थ आए। उनमे से शिशुपालबध नामक ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद अभी सम्मेलन से प्रकाशित हो चुका है। यह दूसरा ग्रन्थ पाठको के सम्मुख है।

प्रथम संस्करण : २०० : मूल्य ३)

मुद्रक—ए० बी० वर्मा, शारदा प्रेस, नया-कटरा—प्रयाग

भूमिका

प्रस्तुत ग्रन्थ महाकवि श्रीहर्षरचित 'नैषध चरति' नामक संस्कृत वृहद्-काव्य का हिन्दी अनुवाद है। महाकवि श्रीहर्ष संस्कृत के प्रसिद्ध कवियों में गिने जाते हैं। ये संस्कृत के प्रकांड पंडित, कवि और अच्छे दार्शनिक थे। श्रीहर्षकृत नैषधचरित का पद्यानुवाद संवत् १८२५ में गुमानमिश्र ने किया था। गुमानमिश्र का नाम सर्वसुख मिश्र था। ये ज़िला खेरी के अन्तर्गत मोहमदी नगर के राजा अली अकबर खाँ के आश्रित थे। उन्हीं के प्रोत्साहन से गुमान कवि ने संस्कृत नैषधचरति का अनुवाद किया था।

राजा अलीअकबर खाँ के पिता का नाम अब्दुल्लाह खाँ था। ये सोमवंशी क्षत्रिय थे। इनसे औरंगाबाद के सैयद खुर्रम की पुत्री ब्याही थी। उनका हिन्दू नाम बदरसिंह था। ये अपने भाई बहादुर सिंह के साथ अपने नाना दानशाह अहिवंशी के यहाँ बढ़िय गाँव, परगना गोपामऊ, ज़िला हरदोई में रहते थे। सैयद खुर्रम ने संवत् १७२७ में दानशाह पर आक्रमण किया और गाँव वालों को मारकर बदरसिंह और बहादुर सिंह नामक दो लड़कों को बन्दी बना लिया। बहादुर सिंह को तो छोड़ दिया पर बड़े भाई बदरसिंह को उसने मुसलमान बना लिया। यह बदरसिंह उसकी सेना का नायक और प्रबन्धकर्त्ता हुआ। संवत् १७६६ में खुर्रम मर गया और उसके स्थान पर मुहम्मद अली मालिक हुआ। खुर्रम के एक और पुत्र था जो किसी हिन्दू स्त्री से उत्पन्न था। उसका नाम इमामुद्दीन खाँ था। उसने राज्य के लिए विवाद आरम्भ किया। अब्दुल्लाह ने उसकी सहायता की पर मुहम्मद अली ने सारी जायदाद पर अधिकार कर लिया और उसने इमामुद्दीन की माँ को क़ैदी

बना लिया। अब्दुल्लाह ने बड़ी चालाकी से उसे बंदीगृह से मुक्त किया और वह इमामुद्दीन को साथ लेकर संवत् १७८३ में दिल्ली भाग गया। वहाँ उसने दिल्ली सम्राट मुहम्मद शाह से प्रार्थना की। उसके दो वर्ष के प्रयत्न का फल यह हुआ कि सम्राट ने उसे परवाना दिया। उसे लेकर वह १७८५ में लौटा। लखनऊ के नवाब वजीर सआदत अली खाँ की सहायता से सारी सम्पत्ति पर इमामुद्दीन की माता का अधिकार हो गया। इसके दूसरे वर्ष इमामुद्दीन की माता का देहान्त हो गया। अब्दु-ल्लाह ने राजा नवलराय से मिलकर सारी सम्पत्ति पर अपना अधिकार कर लिया और मुहमदी नगर में एक किला बनवा कर राजा की उपाधि धारण कर ली। अबदुल्लाह खाँ का देहान्त सं० १७६४ में हुआ। उसके तीन पुत्र थे। उसकी मृत्यु के उपरान्त उसका ज्येष्ठ पुत्र महबूब अली खाँ मोहमदी नगर का राजा हो गया। पर वह पांच ही वर्ष बाद मर गया। महबूब अली खाँ के बाद उसका मझला भाई १० वर्ष तक राज करता रहा। पर उसके देहान्त के पश्चात् राज के लिए सबसे छोटेभाई अलीअकबर खाँ और महबूबअली खाँ के पुत्र गुलाममुहम्मद मे झगड़ा खड़ा हुआ। अली अकबर सं० १८१४ में अपने भतीजे गुलाम मुहम्मद को मार कर स्वयं राजा बन बैठा पर महबूब अली खाँ की रानी ने सेना लेकर अली अक-बर का सामना किया। अली अकबर हार कर भाग निकला, अन्त में कुछ दिन बाद दोनों भाइयों में सन्धि हुई। अली अकबर सं० १८३२ तक राज्य करता रहा। उसके पश्चात् उसके भतीजे गुलाम मुहम्मद का भाई गुलाम नबी मोहमदी नगर की गद्दी पर बैठा।

अली अकबर खाँ विद्वान् और हिन्दी कवियों के आश्रयदाता थे। उसके दरबार में गुमान कवि के अतिरिक्त प्रेमनाथ और निधान आदि कवि भी थे। गुमान कवि ग्रंथ परिचय देते हुए लिखते हैं :—

मिश्र सर्वसुख सुकविवर श्रीगुरुचरन मनाइ।
बरनि कथा हौं कहत हौं होइहैं बई सहाइ॥

सजुत प्रकृति पुरान से, संवत्सर निरदंभ।
सुरगुरु लह सित सत्तमी, किहेउ ग्रन्थ आरम्भ ॥

गुमान मिश्र के प्रस्तुत अनुवाद काव्यकलानिधि की कोई हस्त-लिखित प्रति अभी तक देखने में नहीं आई। दुख का विषय है कि आज तक हिन्दी में इस सुन्दर काव्य का कोई अच्छा सस्करण भी उपलब्ध नहीं है। केवल एकमात्र संस्करण श्रीवेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से स० १६६२ में प्रकाशित हुआ था। उसमें अनेक अशुद्धियाँ थीं। यह सस्करण उसी वेंकटेश्वर प्रेस के सस्करण के आधार पर मूल संस्कृत नैषध से मिलाकर तैयार किया गया है। इससे अधिक और कोई साधन उपलब्ध नहीं था जिससे कि इस ग्रन्थ का पाठ और प्रामाणिक बनाया जा सकता।

गुमान कवि का यह ग्रन्थ काव्यकलानिधि केवल अनुवाद ही नहीं है, इसमें अनेक ऐसे स्थल मिलेंगे जहाँ कवि ने अपनी प्रतिभा और कवित्व शक्ति का प्रदर्शन किया है। मूल नैषध मे केवल २२ सर्ग हैं परन्तु गुमान मिश्र ने काव्यकलानिधि में २३ सर्ग रक्खे हैं — अर्थात् आरम्भ का सर्ग (प्रस्तावना) अपनी ओर से जोड़ दिया है।

प्रस्तुत सस्करण की पांडुलिपि बहुत दिनों से पड़ी थी, इसके प्रकाशन की ओर गत वर्ष सम्मेलन का ध्यान आकृष्ट हुआ और इस सस्करण के प्रकाशित किये जाने का श्रेय वर्तमान साहित्य मन्त्री श्री रामचन्द्र जी टंडन को है जिन के ध्यान देने से इस वर्ष इस ग्रन्थ के अतिरिक्त अन्य बहुत सी पुस्तकें छप सकी हैं।

संक्रान्ति, जनवरी, १६४३ — संपादक

विषय-सूची

परिचय

श्रीहर्ष कवि परिचय

छप्पय

कविकुल मुकुटनि माह हीर सम कीरति राजै।
पिता हरि परसिद्ध तासु मति सुर गुरु लाजै॥
मामल्ल देवी माय पुण्य पतिव्रत गिरिजा सी।
सकल मुक्ति की दानि साधु सेवक को कासी॥
तेहि तनय भयो श्रीहर्ष कवि, हरख भारती तंत्र को।
भव भाजन परम प्रसादमय, जो चिंतामनि मंत्र को॥१॥

जपि चिंतामनि मंत्र ब्रह्म सम्मुख जिन कीन्हो।
निर्जन साधि समाधि तेज निर्गुन चित दीन्हो॥
कविता करी अनेक ग्रंथ नवरस रस साने।
बहुरि कर्‌यो दिग्विजय जीति पंडित सनमाने॥
जेहि भवन अवतरी ईश्वरी, कन्या रूप तनया सुछवि।
जिन गौड़ पाठ दुर्गा रची, ज्ञान वर्ष श्रीहर्ष कवि॥२॥

कनवजपति नरनाह जाहि उठि आसन साजै।
सभा माँहि सनमानि पान दै सुजस समाजै॥
चर्चा मम्मट भट्ट संग षट मास सोहाई।
जिन चरिकै बहु भाँति वाग्देवी लड़वाई॥
सुचि पुण्य पियूष विचित्र रस, व्यास देव बरनी भली।
नलराज कथा नैषध बड़े, तिहूँ लोक कीरति चली॥३॥

रचे सर्ग बाईस जाहि कवि ईस सराहै।
प्रति पद व्यंजक मंजु रीति गुन गन उत्साहै॥
पूर्व अर्ध अनूप गनत द्वै सहस सलोने।
ईस लोक सैंतीस अधिक पावैं जन टोने॥
द्वै सहस चारि श्लोक सों, उत्तर अरध सँवारि कै।
सब सहस चारि, श्लोक औ, इकतालीस बिचारिकै॥४॥

[ग्रन्थ परिचय]

दोहा

खाँ साहेब के सुयस वर, श्रीगुरु चरन सहाइ।
सो विचारि अनुसार मति, भाषा रच्यो बनाइ॥५॥
रचे अर्थ के भवर बहु, कठिन जोर सब ठौर।
खलको जल के भौंर सत, जनन कमल के भौंर॥६॥
सरल देखि हर्षत सुजन, निंदत कुजन अपार।
दाख मधुर जुर बावरो, कहत कटुक निरधार॥७॥
साधु सरल सों कटुक को, करत बड़ो सनमान।
संभु धर्यो गल में गरल, तज्यो सुधा को पान॥८॥
ताते मैं कर जोरि कै, कहत सबनि सिर नाइ।
सुकवि चतुर तिहु लोक में, बिनती तिन्है सुनाइ॥९॥
मेरी तो सब चूक है, वाको ठक तुम आप।
सो सँवारि करिये कृपा, परगट परम प्रताप॥१०॥
गौरि नन्द गिरिजा गिरिस, गुरु गोबिंद गुमान।
युग तौ लगि अविचल रहो, अकबर अली सुजान॥११॥



प्रस्तावना

वंदना

श्लोक

सुमुखश्चेकदन्तश्चकपिला गजकर्णिका ।
लम्बोदरश्चविकटो विघ्ननाशो विनायक. ॥१॥

छप्पय

गान सरस अलि करत परसि मद मोद रग रचि ।
उघटत ताल रसाल करन चल चाल चोप सचि ॥
चिंतामणिमय जटित-हेम-भूषण-गण बज्जत ।
चलत लोल-गति मृदुल अग नव-तंडब सज्जत ॥
लखि प्रणति समय सुख तात को बिहंसि मातु लिय लाई उर ।
जय जय मतंग आनन अमल जय जय जय तिहुँ लोक-गुर ॥२॥

अथ राजवर्णन

कवित्त

भूमि को तिलक दीप द्वीपनि के पालिबे को,
दुष्टन के घालिबे को बाने बिलसतु है ।
चारिहू बरन सुबरन साज साजत है,
सुबरन बानी सील सुधा बरसतु है ॥
सुखनि की सींव सोहै सुजस समूह फैलो,
मानो अमरावती को देखि के हँसतु है ।
धरम को धाम नर-नारी अभिराम जहाँ,
ऐसो महमदी नाम नगर बसतु है ॥३॥

खलनि को जोग जहाँ नाज ही में देखियत,
माफ करिबे ही माहँ होतु कर नासु है।
चौपर ही खाली ग्राह हारै सतरंज,
तरवारै बन्ध मुष्टि सेवै कोसनि को बासु है।
बेलिन ही फलै फूट केलिन ही केस ग्रह,
ताजन लगत जहाँ बाजिन बिलासु है।
पवन अगम गामी भीतैं बड़ी भवनन ही माँह,
ऐसो गाइयतु महमदी को प्रकासु है ॥४॥

छप्पय

नृप प्रथु दशरथ भरत भोज नल नहुष भगीरथ।
इन समान सन्मान दान सब सोधि साधु पथ ॥
उदय अचल रवि तेज सुजश-ससि सोहत सागर।
चातुरता मनि-खानि रूप गुन आगर नागर ॥
सुरतरु सुसरसु मित्रनि निरखि दुवन भीम भीखमचली।
जहँ राजत नगर नरेस बर खाँ साहेब अकबर अली ॥५॥

दोहा

देखत ही जाको बदन, सदन सिरी अधिकाइ।
देह न, रूप कि रासि यह, मदन कान्ति यहि भाई ॥६॥

कवित्त

दुजन को हानि जहाँ बिरधापनोई करै,
गुन-लोप होत यक मोतिन के हार हीं।
टूटे मनि-मालै निरगुन गाय ताल,
लिखै पोथिन हीं रक मन कलह बिचारहीं ॥
सकर बरन पसु-पछिन में पाइयत,
अलक ही पारै अरु भंग निरधारहीं।

चिरु चिरु राजौ राज अली अकबर,
सुर राज के समाज जाके राज पर वारहीं ॥७॥
थर थर हालै धर धर धुंधुकारिनि सों,
धीर नर तजे जे धरैया बल बाहु के।
फूटत पताल ताल सागर सुखात सात,
जात है उड़ात व्योम बिहंग बलाह के॥
झालरि झुकत झलकत झबे फीलनि पै,
अली अकबर खाँ के सुभट सराह के।
अरि उर रोर सोर परत सँसार घोर,
बाजत नगारे नरबर नरनाह के ॥८॥
दिग्गज दबत दबकत दिगपाल भूरि,
धूरि की धुँधेरी सों अँधेरी आभा भानु की।
धाम औ धरा को माल बाल अबला को,
अरि तजत परात राह चाहत परानु की॥
सैयद समरथ भूप अली अकबर,
दल चलत बजाय मारू दुंदुभी धुकानु की।
फेरि फेरि फनन फनीस उलटतु ऐसे,
ढोली खोलि उलटै ज्यों तमोली पाके पानु की ॥९॥
बिकट मतंग साजि सुभट चलत दल,
अली अकबर खाँ मुबारक बखत सों।
दलत मलत खुर थारनि पहार हय,
धुंधुरि सों भयो भानु नभ में नखत सों।
कौहूँ बराह कौहूँ कच्छप सुरभि कौहूँ,
कौहूँ गहत सेस बासुकी सखत सों॥
छूटत गहत ज्यों कहार बार बार त्यों ही,
धरेऊ भूमि खंड पातसाह की तखत सों ॥१०॥

दोहा

कौन भयो ऐसो नृपति, को ह्वैहै यहि भाय।
जाके डर गज पेसकस, दिग्गज देत पठाय ॥११॥

मनहरन

साँचे अवतार करतार सुभ वरो रच्यो,
भूपति अनूप रूप देखि जीजियतु है।
नीति रीति प्रीति अरु नेक न अनीति लागै,
तेज सों तपतु सील सुधा पीजियतु है॥
खान बलि अली अकबर अद्भुत राज,
रावरो है अचल सुजस भीजियतु है।
आछे आसमान भासमान गजराज दै दै,
गाढ़े वे बनन बीच बांधि लीजियतु है ॥१२॥

दंडालय

जेहि बल प्रचड उद्दंड सुंडि, गहि मारतंड मंडल खदै।
नभ कहलि परत पुरुहूत हहलि, मजबूत फूतकारै छंदै॥
भननात भौर भूखन अमोल, झननात झवा झूलनि सरसै।
रण तेज बारि दिग्गज उदार, अकबर नरेस दरबार लसै ॥१३॥

आशीर्वाद

छप्पय

गुणक्षीरनिधिममलयशो बीचोपरिपूरं।
धीर धर्मरुचिमेरु मुदिततर तेजस सूर॥
दान लघूकृतकर्णं भुक्ति वर्णित बहुगाथं।
अली अकबरखाँ कामतरू द्युति नाम सनाथं॥
उद्दंड चंड भुजदंड-युग खंडितपर-नृप-मंडल।
त्वं रक्ष रक्ष भगवति शिवे प्रभुता हसिताऽखंडलं ॥१४॥

वीर समरमागत्य शत्रु कंदनं बहु कृतवति ।
भवति भवस्य भवति मुंडमाला भुवि कति कति ॥
शिरसि विभर्ति शिवोऽपि कर्णयुगलेऽपिगलेऽपिच ।
करमूलेऽपि करेऽपिधारयति शूलफलेऽपिच ॥
राजाधिराज जगदीश त्व सुरुगुरुरपि शम्भुः स्वयं ।
अभिलषति शिसोरिव सर्वदा तव समरे संतत जयं ॥१५॥
सुन्दर सूर उदार सिंह बल बिक्रम साजत ।
अटल समर-भट-बिकट-कोटि-गजन छबि लाजत ॥
सील सत्य सन्मान दान विद्या विनोद मति ।
मनौ रचे करतार कामतरु मोहन मूरति ॥
आजानबाहु परकाजरत स्वामिभक्त रसरंग नव ।
तहँ अति उज्ज्वल मजलिस लसै सोमवश सरदार सब ॥१६॥

दोहा

पंडित कवि मंडित लसै, सभामडली चारु ।
गनक चिकित्सक चतुर चित, धर्मधुरधर सारु ॥१७॥
खाँ साहिब के हुकुम तें, मिश्र गुमान बिचारि ।
बरनी नैषध की कथा, संस्कृत की अनुहारि ॥१८॥
मिश्र सर्वसुख सुकबिवर, श्रीगुरुचरन मनाइ ।
बरनि कथा हौ कहत हौ, होइहैं वई सहाइ ॥१९॥
संजुत प्रकृति पुरान से, सवत्सर निरदंभ ।
सुरगुरु सह सित सत्तमो, किहेउ ग्रंथ प्रारंभ* ॥२०॥



*सवत १८२४ बृहस्पतिवार, शुक्लपक्ष की सतमी ।

प्रथम सर्ग

नलावतार

दोहा

प्रथम सरग में बरनिबो, निषध देस परकार।
नगर राजमंदिरन पुनि, नल भूपति अवतार॥

सोरठा

सोमबंस भूपाल, सकल पुहुमि मे तेजधर।
बीरसेन गुनमाल, निषध देश पर प्रीतिकर ॥१॥

हरिगीतिका

सब-देस-मनि गुनखानि गनि, धनि धनि सराहत हैं सबै।
सुखबास श्रेय निवास सजुत सोभ ज्यों रबि छबि फबै॥
कछु करी यों करतूति बिधि निज जोति सुरपुर को हसै।
जगमगत जाहिर जगत पर बर निषध देश सदा बसै ॥२॥

तारक

उत्पत्तिथली जनु चातुरता की। निषम मही जनु है तपसा की।
सित-सागर ते छबि उज्जल जाकी। जनु बैठक सोहत है कमला की॥३॥
तहँ सोहत है सरिता इक कारी। जनु छीर-पयोनिधि भेद निकारी॥
जुत पद्म सुनील कुबेर थली सी। दुज गावत हैं महिमा सिव की सी॥४॥

दोहा

मीन मिथुन करकट मकर, चलत सुग्रह सुख पाइ।
रासि माल सी देखिये, उदित सोभ सरसाइ॥५॥

तारक

लहरी अति चंचल लोल लसी है । तनु सीतल मानहुँ साँप डसी है ॥
बिषु प्याइ जियावति है सबही को । रस बैदनि सी बिलसै जगती को ॥६॥
तहँ सोहतु है इक सैल सुहायो । जनु मेरु मही द्युति देखन आयो ॥
बहु बंस बड़े सुर गावत जा में । बिलसै हर हेममई अरघा मे ॥७॥

तोटक

छिति केसर की उपमा बिलसै । अति सुदर कानन फूल लसै ॥
बहु बृच्छन की सब ही अवली । ससिलोक बिराजत भाँति भली ॥८॥
बहु राजत हैं गजराज बडे । नभ आवृत बिध मनो उमडे ॥
चहुँधा चमरी चम चौर करैं । बट बजुल मंजुल छत्र धरैं ॥९॥
सब ओर पराग बिभूति लसै । बहु कोसिन में अलि आनि बसैं ॥
छिति नायक की उपमा उपजी । वन की धुनि दुंदुभि दीह बजी ॥१०॥

गवय

सुरभी केसरि एक संग, बसै नील बन माँह ।
मनों नगर सुग्रीव को, सोहत सुदर छाँह ॥११॥

छप्पय

त्रिभुवन भूषन भूरि भूमि बर नगर सिरोमनि ।
झलझलात छबि अच्छ स्वच्छ लखि भाखत धनि धनि ॥
सोहत बिकट कपाट जटित पुर द्वार फटिकमय ।
मनों रच्यो कैलास संभु निज भक्त बास दय ॥
जनु सजत सुमेर प्रदच्छिना चहुँ सुबरन प्राकार पर ।
सरिबरि जहान को करि सकै सब नर-वर पुर नगर कर ॥१२॥

मनहरन

तीनौ लोक रचना रचतु हैं बिरंचि यासों,
अचल खजानौ जानौ राखेउ गुन गचि कै ।

रूप की उपज सुख सुकृति को विस्तार,
पारावार जाको कौन पावै पार सचि कै।
याही तें कहायो अद्भुत करतार बिधि,
भूतल नगर नरपुर ऐसो रचि कै।
लखत बनत हैं सहस नैनन हीं सो कुछ,
बरनत न बनै सहसानन सों पचि कै ॥१३॥

हरिगीतिका

दस कोस तें जहँ देखियत अवली पताकन की भली।
सब सौध सीसन पै लसै बिच-बीच मोतिन की कली॥
सुर आपु गहि हित मानि कै पय बिन्दु गन फबि सों फली।
जनु छीरसागर तें कढ़ी दिवि ओर जल लहरी चली ॥१४॥
कलिकाल को भय मानि जहँ जुगसत्य आनि सदा बसै।
अति पुन्य पावन जानि सील सनेह साँचु सुधा लसै॥
जनु भूमि में सुरबास उत्तम बासु बासव को रच्यौ।
बहु रतन राजत श्री बिराजत चीर सागर सों सच्यौ ॥१५॥
मनि हेम के कलसान की दुति राति हूँ दिन होतु है।
सिर ओक ओकनि में रह्यो रमि सूर लोक उदोतु है॥
अति स्वच्छ सुंदर हेम फाटिक की सिला गसि कै गली।
ससि को समाज लग्यो मनों तब चन्द्रिका चहुँधा चली ॥१६॥

पद्धटिका

बहु भाव संघ सोहत बजार। नवद्दीप चित्र चीजैं हजार॥
जनु है कुबेर-नगरी उदार। मनि हेम चीर हय गज सुठार ॥१७॥
सुनि सोर परत नहि बैन कान। जनु भूपति बैठ्यो करि दुकान॥
छुटि चलतु कौन लहिये न छोर। जनु माया को बंधन अथोर ॥१८॥

दोहा

अचल अंग जोई जहाँ, लखतु तहाँ तेहि भेव।
मानौ साधि समाधि सब, ध्यावत पूरन देव ॥१८॥

भुजगप्रयात

तहाँ राज को धाम यों सोभ साजै। तिहूँ लोक मे रूप बैकुंठ राजै॥
बने बेष रूरे बने तेज पूरे। सजे संजमी लोग संग्राम सूरे ॥२०॥

तोमर

मुक्तान की नव पाँति। रचि द्वार पै बहु भाँति।
सब सिद्ध को मुख येहु। मुसकात सुंदर गेहु ॥२१॥

दोहा

सुघर नील मनि सों रचे, जालरंध्र रुचि ऐन।
निरखतु निज सोभा मनौ, राजसिरी के नैन ॥२२॥

सवैया

खिरकीन के आनन सुंदर सोहत नैन गवाखन के अति नीके।
रोसनदान मकान लसै सुभ नासिका कोष सुगंध नीके॥
लाल पनारन की रसना चहुँ ओर तुचा रवि पुंज हँसी के।
सुंदर देहनि गेह बने सुघने परिवार हैं राजसिरी के ॥२३॥

दोहा

चहूँ ओर नौबत बजत, सोन सिखर पर जोर।
मेघ घने गरजत मनौ, कनकाचल चहुँ ओर ॥२४॥

हालिका

लाल मनीन रचौ मुड़वारी, राजसिरी जावक अनुहारी।
फैल रही किरनैं अति तासू, केसरि फूलि रहो सविलासू ॥२५॥

चौपाई

बँगला गजदंतन के रचे। स्याम लालमणि बेलिन खचे।
मनौ हासरस के वर आजू। न्योति बुलायो रति रति-राजू ॥२६॥

दोधक

आँगन होरन साजि सँवारो। कुज्जन में करिदंत सुढारो॥
ऊरध हूँ अध ते उनई है। सेत प्रभा पुनरुक्ति भई है॥२७॥
दोउन के प्रतिबिंब दुहूँ में। हो उनही गहिरी छबि हू में।
साधु मनौ उपकार सयाने। आपुस माँह करें हित माने॥२८॥

तारक

बहु बेलिन बूटन सयुत सोहैं। परदा सिदरीन लगे मन मोहैं।
हैं नव धूप सुगंधित नीके। जनु बाग बिराजत राजसिरी के॥२९॥

नाराच

चबूतरा जराइ के जहाँ तहाँ बने बने।
रचे विचित्र चारु रंग अग सग सौ सने॥
लसैं प्रभात रंग सौ न नीठ दीठि कै परै।
अपार भूमि दार सूर आरसो मनोहरे॥३०॥
रचे विचित्र चारु रूप व्योम-भू-पतार के।
अनेक चित्रसारिका अगार है बिहार के॥
निहार कै प्रभात रंग मोहि मोहि कै रहे।
मनौ तिलोक जीव है बिनीत बास संग्रहे॥३१॥

दोहा

होत रग संगीत गृह, प्रतिध्वनि उठत अपार।
अरज करत निकरत हुकुम, मनौ काम दरबार॥३२॥
काम तंत्र की देवता मोहन मंत्र स्वरूप।
नारीमय त्रैलोक जनु, राजत रावर भूप॥३३॥

रोला

ताने बिसद बितान लाल झालरि झुक झूमै।
मनौ सुधाधर बिंब प्रात-रबि की छबि चूमै॥

बँगला बने अनेक लाल सित स्याम सोहावन ।
गृह-दुति सागर माँह मनौ फूले सरोज बन ॥३४॥

दण्डालय

गाहैं गज गाहैं पग नहि ठाहैं, गढ़ गिरि दुग्गन दाबि दरै ।
डारैं महि डारै ऐंचि उखारै, तरुन तरुन सहार करै ॥
सब द्वारन ठाढ़े सगर गाढ़े, कद बल बाढ़े बिंध मनौ ।
चौकी निज साजत दिग्गज लाजत, गजराजन लखि लखत बनौ ॥३५॥

दोहा

तिनही के अनुसार रथ, हय ठलैत की भीर ।
सजै सबैलन युद्ध थिर, रहत धुरंधर धीर ॥३६॥

छप्पय

कहूँ लरत गजराज बाघ हरना कहुँ जूझत ।
मल्ल जुद्ध कहुँ होत मेष वृष महिष अरूझत ॥
कहूँ नटत नट कोटि भाट बतलावत गुन गनि ।
कहूँ जग्य की ठाट बेद गावत मुख मुनि भनि ॥
कहुँ गनक गनत जोगी जपत जन्त्र मंत्र मत बिरत नित ।
कहुँ करत चारु चरचा भली कबित्त-चित्र की चतुरचित ॥३७॥

दोहा

चहूँ ओर सब नगर के, लसत दिवालय चारु ।
आसमान तजि जनु रह्यो, गीरवानु परिवारु ॥३८॥
मनौ रची निज बास को, और भूमि भगवंत ।
खाईं मिस चहूँ ओर जनु, सोहत सिंधु अनंत ॥३९॥

प्लवंगम

होमन ही जहँ धूम कुटिल मति देखिये ।
जहँ मनि-मालन माँह भेद अवरेखिये ॥

कोकन ही द्विजराज विरोध बखानिये ।
मूल-हानि तिथि-पत्र प्रगट पहिचानिये ॥४०॥

गोपाल

दया बेलि की ललित निकुंज । गुंजत सुख पच्छिन के पुंज ।
गुरु की हानि मिठाई माह । पापरचित भोजन की चाह ॥४१॥

तोटक

सिगरी छिति हीरन जोरि गसी । तिन में ससि की प्रतिमा बिलसी ॥
चल नयनन के मुख देखि डर्यो । नभ तें जनु भूतल टूटि पर्यो ॥४२॥
सुर लोकन की उपमा छहरी । उठती सब ओर सुधा लहरी ॥
परनार मनौ छबि भार छई । बहु भीतर है अनुराग मई ॥४३॥

कवित्त

नीलमनि भवननि मे तम गहि राखि मनौ,
मोती के महल मिली तोरन बनाइ कै ।
फटिक भीतिन मे जोन्होई सों जटित मिली,
धुज पट छीर धृति रंगनि समाइ कै ॥
सुंदर बदन जुवतीन के मिलत लह्यो,
प्रफुलित पकज पराग सुख पाइ कै ।
लाल कलसानि में लहत निज रस से,
सु-सूर की किरन प्रात परती लखाइ कै ॥४४॥

दोहा

सदा नील मनि भवन मे, बसत निडर तम-राज ।
प्रगटत सरनागतिन को, अभै दान के साज ॥४५॥

छप्पय

तीनि भुवन विख्यात नाम बर कीरति मूरति ।
दया छमा सुचि सील दान धीरज सु-धरम-रति ॥

सकल देव ब्योहार बिदित बोलत मुख हसि हसि।
निडर समर डर लोक लाज साजत सुख गसि गसि॥
रामानुराग लछमन मनौ मित्र मुदित सब दिवस सम।
जहँ बसत मुनेश्वर से सकल आनद मय संयम नियम॥४६॥
धर्म धुरंधर बीर धीर कलि-काल-बिहंडन।
तपत तेज बरबढ साधु-गन मडल मंडन॥
पुन्य-सलोक पवित्र चित्रमति मित्र मोहतम।
रूप-मनोहर रासि बेद परकासक हरि सम॥
नृप बीरसेनि नंदन नवल सोमबंस सब गुन सच्यो।
छिति-भाग्य प्रजा के पुन्य फल नल राजा करता रच्यो॥४७॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमडलाखडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
नलावतारो नाम प्रथमस्सर्ग ।



द्वितीय सर्ग

हंस-ग्रहण

दोहा

सर्ग दूसरे मे कथा, बरनन नल अनुराग।
मिलिबो हेम मराल को, लीला सों बिच बाग ॥

सोरठा

जासु कथा करि पान, बिबुध सुधा नहिं आदरहि।
तेजरासि बलवान, सेत छत्र मडल सुजस ॥१॥

वसंततिलका

जाकी कथा रसभरी निदरे सुधा को।
सोई नरेस नल राजत सपदा को ॥
साज सुवर्णमय सदळ सितातपत्री।
पूरे प्रताप अवलो उज्वल सों धरित्री ॥२॥

हरिगीतिका

जग माहि जेहि छिन चिंतिये, कलिकाल की महिमा घटी।
अघ ओघ धोवत जो कथा, जिमि दिव्य साबुन की बटी ॥
निज सेविनी पहिचानि कै, वह ही अनुग्रह आनिहै।
करिहै पवित्र चरित्र मेरी, जीभ अवगुन बानि है ॥३॥

तारक

करि अस दिगीसन के इक ठौरे। बिरची नल मूरति रूप न थोरे ॥
तिसरी दग अधिक वेदमई है। सब लोक देखावन काज भई है ॥४॥

दोहा

घालतु है कुल मदन-मद, वहै आँखि सुख पाइ।
मनहुँ तिलोचन अवतरेउ, यहै बतावत आइ ॥५॥

चद्रमाला

चारिउ चरन समेत सुखी करि धरम धरा में थापेउ ।
चरिउ बरन सुखी जहँ बिलसै पापपुंज जहँ काँपेउ ॥
एक पाँव छिगुनी सो छिति छूवै निराधार ह्वै ठाढ़ो ।
तनु अनूप दुर्बल सो दीसत मनो तपोबल बाढ़ो ॥६॥

घनाच्छरी

विकट कटक सजि नल के चलत दल,
धुंधुर प्रताप सिखी-धूम मलिनाई है ।
बहै परिपूरन पयोनिधि सुपक भई,
अंक ह्वै ससी मो दरसतु बहु-धाई है ॥
दिपत धनुष घन आसुग बरसि अरि,
तेज ते प्रचंड चंड अनल बुझाई है ।
लागत असैनिक असुभ अति सत्रुन को,
कोहला सो कुजस लुलत बहुधाई है ॥७॥

दोहा

ईति भीति राखी न नल, जग न लहै कहुँ ऐन ।
अति बरखा छोड़ति न छिन, अरि रमनिन के नैन ॥८॥

मनहरन

समर धरा में जाके रंग सों सुभट निज,
निज चातुरी सों जस पटनि बुनत है ।
करि करबाल बेम कोरि कोरि जोरि जोरि,
चंद्र ते बिसद जाके गुनन गनत हैं ॥
अमल अमोल औ सुडौल झलझल होत,
कबहुँ न घटत जन देखत सुनत हैं ।
आठो दिसि-रानी रजधानी के सिंगारबे को,
आठौ दिगराज आनि चीरन चुनत हैं ॥९॥

तारक

जिमि बैरिन छाडि विरोध दयो है। तिमि धर्म विरोध नहीं उनयो है ॥
जित-मित्र अमित्र प्रतीप-प्रहारी। दग चारि विचार दगै निरवारी ॥१०॥

तोटक

नल के जस तेज बिराजतु हैं। ससि भानु वृथा छवि छाजतु हैं ॥
जब हीं जब यों बिधि चित्त धरै। तब छेकन को परिवेष करै ॥११॥
विधि भाल दरिद्र लिख्यो जेहि के। नहि कीजत अंक वृथा तेहि के ॥
नल एतिक दान तुरत दियो। दारिद्र दरिद्र को दूरि कियो ॥१२॥
कवियान सुमेरन बाँटि दियो। जलदानन सिंधुन सोखि लियो ॥
चहुँ ओर बँधी जुलफैं सुभली। नृप मानतु अपजस की अवली ॥१३॥
कवि औ बुध जासु समीप रहैं। सब बंदन कै जयदेव कहैं ॥
दिन ही दिन ओज उदय बिलसै। रबि की सिगरी छबि आनि बसै ॥१४॥

स्वागता

अबुजात दुति मूगन दूखै, राज-सीस-मनि ऊपर भूखै।
हेतु जानि बिधि मगल-बेखा। साजि भूप पद ऊरध रेखा ॥१५॥

दोधक

जीति लियो जग सत्रु घनेरे, सातौ दीपन के नृप चेरे।
गाइन में मिलि बाघ बसै जू, चोरन में मिलि साह हसे जू ॥१६॥

हरिगीतिका

नव रग संगर माँहि दिग्गज अंधकार समेटि कै।
छतधार दुरदिन घोर मे भटकौ सुदुर्गम भेटि कै ॥
करवाल निरमल दूतिका बस जोर जोबन सों भरी।
अभिसारिका सम आइ कै जगजीय के हिय पाँ परी ॥१७॥

दोहा

लसत सुमित्रोपेत नृप, दसरथ के परभाइ।
छमा भार गुरु सों सजो, मधु सुगंध सरसाइ ॥१८॥

घनाच्छरी

पूरब पुनीत उदयाचल अवधिबासी,
उत्तरहू, सेतुबंध पारनि परत हैं ।
पच्छिम अमंद मदराचल चलत नीके,
दच्छिण जे अत गंध मादन तरत हैं ॥
जोरि जोरि कोरि कोरि सीसन छुवत छिति,
भूपति अनेक झुंड मंडल भरत हैं ।
कहि कहि देत दूर ही ते चोपदार निज,
गहि गहि नामनि प्रनामनि करत हैं ॥१९॥

तोमर

तेहि राज को यह राज, बरनै सु-साधु समाज ।
मुकुरै सकै समुदाय, गिरि है विपच्छ बनाय ॥२०॥
दुरगानि को सतसंग, इक हंस राखतु अंग ।
इक मेघ धारतु चापु, ध्वज बीर उन्मत आपु ॥२१॥
जहँ पाग बाँधन जोगु, दुख दीह कानन लोगु ।
असि धार तीछन जातु, मधु पान भौरन मातु ॥२२॥

दोहा

हस्त स्रवन को नास जहँ, पत्राही महँ होत ।
दान-हानि इक करिन महँ, रवि ससि प्रसत उदोत ॥२३॥
बदन न पावत हैं जहाँ, केस करज मल दीन ।
बरसा बासर घरत ही, अंबर अधिक मलीन ॥२४॥

तारक

इमि राज लयो सत्रु सैसव ही में, जय थूप थपेउ सिगरी धरनी में ।
ऋतुराज मनों बन में उदयो है, तनु जोबन को परवेसु भयो है ॥२५॥

दोहा

पद छवि लव पल्लवन ही, कमल मलीन बनाइ ।
ताके मुख को दास ह्वै, सरद ससी न लखाइ ॥२६॥

पद्धटिका

मिसि रोमराजि रेखा सुवेष । विधि गनत मनो गुनगन असेष ॥
थल रोमकूप लखि कै प्रभाव । जनु दिये बिंदु दूषन अभाव ॥२७॥
अरि दुर्ग लूटि अरिगल अखंड । जनुधरी बड़ाई बाहु दंड ॥
गोपुर कपाट-विस्तार-कारि । गहि धरेउ बच्छ-थल में सँवारि ॥२८॥

घनाच्छरी

लीला-विहँसनि सौं हरायो हिमकर ज्यों ही,
कवँलन की कान्ति हरी नयन रतनारे सों ।
अमल कपोल गोल आरसी अमोल ओप,
ऊपरे रहति स्रुति-भूषन सितारे सों ॥
ताकी समता की कहीं उकति जुगति होत,
उपमा बनति कैसे सुकबि बिचारे सों ॥
दूसरो न कमल मुकुर ससि तेजवारो ।
बदन सों बदन बखानत निहारे सों ॥२९॥

लच्छीधर

भूप को देख कै, काम को कांति सों । आप बिनु अंग के रूप की भाँति सों॥
तीनहुँ लोक की सुंदरी जे सबै । मोहि कै आपु ते प्रीति को सभवै ॥३०॥

चौपाई

मोहीं इमि देवन की नारी । इक टक देखत तन मन वारी ॥
वही टेवँ अजहूँ लगि धारै । निस दिन अनिमिष नयन निहारैं ॥३१॥
नख को सुनत जनम फल लेखै । रूप लखे बिनु अफल बिसेखै ॥
उरगी नेहरंगी इमि धरैं । स्तुति-निंदा नैनन की करैं ॥३२॥

मनुज-बधू नैनन सुख गहैं। धीरज धारि बिलोकत रहैं॥
मोहि मोहि तनमय होइ जाही। पलक बिघन सारत कछु नाहीं॥२३॥
जवनि नारि सपने कछु देखै। सब नल भूप रूप रस पेखै॥
जब जब भूलि कछू मुख कहै। तब तब नाम नलहि को गहै॥२४॥

दोहा

निज नायक संग सुरति महँ, ध्याइ ध्याइ नल रूप।
नयन मूँदि बनिता सबै, करती केल अनूप॥२५॥

तोटक

निज बदन द्युति समता लखति। नल देखि दरपन में तकति॥
लजि रहहि तिय निजु रूप बिनु। इक भीम के तनयाहि बिनु॥२६॥

दोहा

देस बिदर्भ नरेस बर, भीम भीम अनुहारि।
दमयंती कमनीय तनु, ताकी राज कुमारि॥२७॥
सुनि सुनि नल के सील गुन, दान सुरूप पवित्र।
दमयंती मनु मिल गयो, छीर सुछीर विचित्र॥२८॥

चौबोला

तात सदन जब जाइ सयानी। बदि पढ़त नल गुननि घने॥
सुनि सुनि मदन पीर सरसानी। तनु कदंब को फूल बने॥२९॥

दोहा

नरहू के पर संग मे, कहै सखी नल कोइ।
सुनि सरीर पीरी परै, पल में पीरी होइ॥४०॥

सवैया

रंग को भौन फुहारन के ढिग, नेकु खड़ी तहँ आनि भई।
काहू सों काहू सहेली कह्यो, नल देइ मिलाइ, तबै चितई॥
सब अंग मरोरि मुरी मन में, फरि पूरि रही रस मैन भई।
दग छाइ रहे मुकुताजल के, नल के सुनते कुम्हलाइ गई॥४१॥

तारक

सब चित्र चितेरन सों रचवावै । तिन में जुव सुंदर रूप बनावै ॥
लखि काम को रूप कहै यहु कैसो । नहि भावत और लिखै किन कैसो ॥४२॥

दोहा

ऐसो छल बल कै लखत, नल मूरति लिखवाइ ।
दुसह प्रथम अनुराग है, क्यों हू कहो न जाइ ॥४३॥

चौपाई

चरचा निषध देश की करे । नर बर की बानी मुख धरै ॥
बीरि सदा नर वर की खाय । नल को नामु लेत मुसकाय ॥४४॥
कवि पंडित जाचक जे आवैं । जे निज नर वर नगर बतावैं ॥
तिन्हें देइ अगनित धन भारा । सुनत सुजस नल केर सुखारा ॥४५॥

सारावती

चित्र लिये नल को कर मै । भवन अकेली ह्वै भरमै ॥
संग सखी हुन सो चकि कै । यों समता मिलवै तकि कै ॥४६॥

सवैया

रति को सुख स्वादु नयो उनयो, पति सोवति नैनन आनि अरै ।
कर भारि झुकै न रहै हँसि हेरि, हरे कर लै छतियाँ पै धरै ॥
बरजोरी करै जब और कछू, कर मीजि पसीजि चलै थहरै ।
अनुमानती है सखि आवत ही, तजि सेज जहीं अकुलाइ परै ॥४७॥
प्यारे बढ़े पहिले अनुराग के, काँति हजार गुणी सरसानी ।
याहू की ऐसी चली चरचा, परबीनन लै तिहुँ लोक बखानी ॥
कौन न रीझि गयो सुनि कै, पुनि रूप चितै न भयो अभिमानी ।
सासन-साँट मनोभव की, नवला नल के हिय माहँ समानी ॥४८॥

दोहा

निज छबि कीरति की विमल, मुकुतावलि के जोग ।
दमयंती के गुन सुने, नल बरनत बुध लोग ॥४९॥

तोमर

तब पाइ अवसर काम। नल सों रहो कछु बाम ॥
करि ताहि मूरति आपु। किय जीति को परतापु ॥२०॥

दोहा

दमयंती के गुन जबै, कान धरे नृप आनि।
काम आपने चाप को, कान धरो गुन तानि ॥२१॥

मनहरन

ऐसे बीर साहसी के जीतिबे को ठाढो भयो,
संकित मदन मन धीर न धरतु है।
तीन लोक जीतिबे को सुजस भरे हैं दई,
सौहैं ह्वै सकतु नाहीं लाजन मरतु है॥
जाके जोग जासों करयो चहतु करतु तासों,
विधि को बिलास कछु लखि न परतु है॥
धीरज को कौच वाको फूलनि के बाननि सों,
टूक टूक डारो करि कौतुक करतु है ॥२२॥

सवैया

सोइ रहै उठि जाइ अटा पर, मीतन सों न मिलै खुल कै।
चौपरि कै सतरंज रचै, कबहूँ रस रंग लखै बल कै॥
थल एकु लगै न कहूँ चित यों, हित की सरिता उमडी ललकै।
खरकै छबि आनि गडी उर में, नृप राव रमै न रमै कलकै ॥२३॥

मोदक

लोगन सो बिरहागिनि गोवत। धीरज को तजि कानन जोवत॥
जानत जागन के गुन साथिनि। सेज ससी-कर सुंदर जामिन ॥२४॥

सवैया

मैन को बान लगो तन में, न बचो तिल अंग अभेद बनाइ कै।
पै नृप भीम सों आपनी ओर तें, ब्याह की बात कहै न चलाइ कै॥

भूपति मानन की यह रीति है, जाँचत ही किन जाय पराइ कै।
आपनी ओर ते माँगत नाहि, न माँगत ही सबु देत लुटाइ कै ॥२५॥

मोदक

छूटत हैं मुख साँसन के गन। भूप बतावत आलस है तन ॥
पीत भई छबि है सब अंगनि। डारत ढेर कपूर बिलेपनि ॥२६॥

दोधक

बोलि उठो दमयति कहाँ है। कोऊ न बैन सुन्यो न तहाँ है ॥
पंचम राग कलावंत गायो। राज समाज सबै मुरझायो ॥२७॥

तुगा

परिजन सब ठाढे। लखत विपति बाढे ॥
कछु न मन विचारै। नैनन जल ढारै ॥२८॥

पद्धटिका

ज्यों खुलत जात मन्मथ विकार। त्यों लहत भूप लज्जा अपार ॥
सब धरम-धाम धीरज निधान। जेहि सिव समान गावत जहान ॥२९॥
गुन निफल भयो सच बेद बैन। अनुराग रह्यो भरि पूरि ऐन ॥
रति संग पाइ मन्मथ अराल। अनिरुद्ध तहाँ उपजतु बिसाल ॥३०॥
बिनु मैन चिन्ह बैठो न जाइ। करि जतन भूप मन में लजाइ ॥
जब लगन लगी मजलिस उदास। तब चित बिहार की करो आस ॥३१॥
सब कामरूप मित्रन समेत। मन करो बगीचा को निकेत ॥
परिजनन ओर दखो कनेखि। साजो तुरंग यह हुकुम लेखि ॥३२॥
करि करि प्रनाम दौरे अपार। तुरतै तुरंग साजो सिंगार ॥
छबि सेत जासु जिमि तरुनि हासु। जब मान अधिक पौरुष प्रकासु ॥३३॥
अति चपल पुष्ट पुट टाप-ठोर। जो खूँदत मंदुर सकल छोर ॥
थिर रहत न छिनि जिमि तरुनि नैन। ठहरति न डीठि जिमि मुकुर नैन ॥३४॥

सोरठा

केसर रूप अनूप, झलझलात दुति बदन तल ॥
लसत हिये सुभ-रूप, मनौ देवमनि की किरनि ॥६५॥

मरहट्ठा

चंचल खुर खूंदै, गिरि गन गूंदै, लसत रेनु कन जाल ।
सीखत गति बेगनि, लगे अनेगनि, जनु जन चित्त रसाल ॥
मुख ओंठ चलाकी, अति गति बाँकी, नृप सों कहत सुनाइ ।
यह जानत हय के, सब गुन रय के, यासों रहत चुपाइ ॥६६॥

रसिक

परम पुरुष नल चहत । जनु रबि रथ हय सहत ।
यहि सुजसहि जग बहत । दसनि किरनि मुख लहत ॥६७॥

तोटक

सित केसर चंचल पूँछ लसै । मुकुतागन गूदनि सों सरसै ॥
नीको हय राज बतावतु है । जनु चौर दुहूँ करवावतु है ॥६८॥

घनाच्छरी

महाराज नल को विदित वर बाजी सुख,
गीरबान-पति अभिमानिन गिरावई ।
गरुड समान अबै, कहा कहौ मन गति,
दौरन में तेज, गवन पौनहि सिखावई ।
मेरी जान गहन न होइ जो ये बार बार,
भानु माहताब माँगि रथन लगावई ।
अंबर के खेत में उदेत नेक बाग लेत,
राहु केतु नाहीं कहूँ छाँह छुइ पावई ॥६९॥

दोहा

आश्रय ऊँचो थल बिना, छुअत न जाकी पीठि ।
बाजि साजि ठाढो कियो, मुख सन्मुख नृप दीठि ॥७०॥

दौरि चले परिजन सकल, बंदी सोरु संभार।
बाजि उठे इक बार ही, दुंदुभि दीह हजार ॥७१॥

तारक

संग साजि चले बहु भूपति भारे, रविके कर ज्यों रवि सगनिहारे ॥
तुरकी हय साजि चले नृप आगे, सब दूरहि देखत पॉयन लागे ॥७२॥
दल संजुत भूपति बाहर आयो, सम भूमि बिहार विनोद बनायो ॥
असवार तुरंगन दाबि घनेरे, छल सों परिहास करैं बहु तेरे ॥७३॥

दोहा

दौरावत चहुँ ओर हय, देखत बात लजात।
छूटत मानों फुलझरी, जरी जीन सरसात ॥७४॥
दौर हमारी को धरा, अलप अधिक अति जानि।
मनौ करत अभोधि थल, खुरनि खूंदि रज सानि ॥७५॥
दौरत सत्रु दिगत लौं, लाँघत सिंधु सुजासु।
ता नृप के हय जानि यह, करत मंडली लासु ॥७६॥

पद्धटिका

यह लखत ललित लीला बिलासु। फिर चले मुदित मन सुख निवासु।
बन पास पहुँचि सब नगर लोग। फिर चले मुदित मन जोग-जोग ॥७७॥
सँग के नरेस उतरैं समीप। ते द्वार खडे राखे महीप ॥
गहि एक एक मित्रन अनूप। मधि बाग गयो अनुराग भूप ॥७८॥

तोटक

बनपाल प्रधान प्रनाम करे। कर जोरि बिलोकत प्रेम भरे ॥
फल फूलन की महिमा बिनई। बन की सब सोभ दिखाय दई ॥७९॥

तोमर

फल फूल पत्र प्रकासु। जनु है वसंत-निवासु ॥
चहुँधा सुजासु हजार। जनु है सुगंध बजार ॥८०॥

बहु भाँति फूलत फूल। अलि संचरैं रस मूल॥
सज कै धरे ऋतुराज। मनमत्थ आयुध साज॥८१॥

चौपाई

कहुँ तरुवर पंडित से राजैं। फैले पत्र पुरान बिराजैं।
कहूँ महीपति सोभा धारैं। नव दल से सब को मन हारैं॥८२॥
उड़त पराग धुन्ध चहुँ ओरी। ऋतुराजा जनु खेलत होरी।
कल गानन कोकिल कुल गावैं। भवँर बीन परबीन बजावैं॥८३॥

द्रुतविलंबित

छुटत हैं जलजंत्र तहाँ बने। गरजि कै जल चादर सों तने।
परम मोरन के जँह बासु है। मनहुँ सावन भादों मासु है॥८४॥
लसत केतकि के कुल फूल सों। रमत भौंर भरे रसमूल सों॥
सिव सुपूजन माँह मने करे। मनहुँ सो अपकीरति सों भरे॥८५॥

मौक्तिकदाम

दुख्यो हिय केतकि देखत भूप। करयो तब तापर रोष अनूप॥
बियोगिन के उर भेदनु रोजु। करै तुम को निज बान मनोजु॥८६॥
कंटक रूप न काटन जोग। गिरैं बिरही तोहि लागत लोग॥
महेस यही तुम को निदह्यो जू। आरा सम पत्रन ह्वै बिदर्यो जू॥८७॥

दोहा

मधु सों गीलो हाथ ह्वै, ऐंचो धनुष न जाइ।
तब पराग मलि कुसुम सर, बेधत मोंहि बनाइ॥८८॥

सुखदायक

देखे फल सभार सुहाये दाड़िमनि। धूपे तप लै धूम नवाये आननि॥
समता होन चहत दमयंती के कुचनि। छूछे घट पै धूम मानो काननि॥८९॥

दोहा

लखी वियोगिनि दाड़िमनि कंटक-अंग निदान।
फल थन बिच दरक्यो लगो, सुक मुख किंसुक बान॥९०॥

मनहस

बिरहीन कोप लखात हौ यहि नाम सों।
यहि ते पलाश प्रसिद्ध हौ गति बाम सों॥
कछु फूल लागत लाल है यहि हेतु सों।
छमि दूखि कै पुहुमी पुरंदर चेतु सों॥९१॥

नील

नव लता पुनि सुदर नृप दीठो परी।
चुंबित मद समीर सुसीकर सों भरी॥
कंपित अंग अनूप कली मुख हाँसु लसै।
कूजत कंठ कपोत बिलोकत जीव त्रसै॥९२॥
चंपक की कलिकानि बिलोकत जानि परी।
कज्जल भौंरन की अवली उमही सिगरी॥
पूजत काम बसंत सुदीपक बारि धरी।
चित्त वियोगिन के सुपतगम तूल करी॥९३॥

कबित्त

बाँचति कोकिल हैं बिरहीन की दुःख दसा अलि देत हुँकारैं।
फूलि रह्यो करुना रस बाग बियोग संयोग बिहार बिहारैं॥
या जग में कछु नाहिन है कहती सब सौ कर फूल पसारैं॥
देखत है दरि भूप तहाँ भरि नयनन-अबु गुलाब को ढारैं॥९४॥

भुजगप्रयात

बिलोके तहाँ आँख की साख बौरे,
चहूँधा भ्रमैं हुंकरैं भौंर बौरे।
लगै पोन के झोंक डारैं झुकावैं,
बिचारे वियोगीन को ज्यों डरावैं॥९५॥

शशिवंदना

पिक दुज देखै, कुपित बिसेखै। नैननि राते, बचननि ताते॥९६॥

दोहा

दिन दिन तनुता गहो, लहो मूरछा तापु।
पिक दुज ये बोलत न जनु, बिरहिनि देत सरापु ॥९७॥

सोरठा

लसत धूम अलि सीस, चंपक के गुच्छा दिपत।
धूमकेतु बिस बीस, ज्यों बियोगिन को अहित ॥९८॥

दोहा

चहुँ दिसि गिरत पराग कन, सीस लगो अलि पाँति।
लखो नाग केसर चलित, मदन सान की भाँति ॥९९॥

तोमर

चहुँ ओर ते अलि-धाइ। नल के सुगंध लोभाइ॥
तजि देत फूल बनाइ। सब ओर गुंजत आइ ॥१००॥

दोहा

बर नारी के कुचन सम, पके पके फल बेल।
पवन चलित कंटक दलित, चदन सुरभि सुमेल ॥१०१॥

सवैया

गूँदि रहे गन गुच्छन के नवरंगित रंग सुरंग बखानो।
मोहन बान बसी करकै औ उचाटन को बहु ठीक ठिकानो॥
नृप मैन को अच्छय बान निषंग बनो निहचै पत्रि कै पहिचानो।
बिरहीन के हीय हुलास बिडारन पाँडर डारन देखि डरानो ॥१०२॥

दोहा

कोरक सहित अगस्तिया, लख्यो राहु अवतार।
कला कलाधर की गिली, जनु उगिलत यहि बार ॥१०३॥

चद्रमाला

सित तुषार दल बसन दूरि करि हठ सो बदन उघारै।
कंपतु तनु, लै नवल लता सों सुघर समीर बिहारै॥

झरि झरि परत कुसुम स्रम सीकर सुख सनेह सों सोहै।
लोचन मूँदि रह्यो पुहुमीपति निरखत ही मन मोहै ॥१०४॥

सवैया

सीतल डोलत मंद समीर भयो तेहि तें अति सीतल नीको।
फूलन के रस सों मिल कै प्रगट्यो सब स्वादु सुधाधर ही को ॥
केतकि के नव पीत पराग सों पीत भयो रंग सोहनो जी को।
धौसहु मे बिरहाकुल भूप लह्यो सुख तौहूँ सजी रजनी को ॥१०५॥

दोहा

बिरह बिथा हू में लख्यो, भूपति आनन्द चंद।
कुहू कुहू टेरन सरिस, कोकिल है दुख दुंद ॥१०६॥

प्रमाणिका

असोक नाम जानि कै। लख्यो सुसाखि आनि कै ॥
लसै सुरंग फूल सों। मनोज-बान तूल सों ॥१०७॥

सवैया

बावली विभ्रम बीचिन सों तट लागि चढी मिरदंग बजावै।
गावतु हैं पिक पचम ताननि मोर मिले बन तान चलावै ॥
रग बनो बन में सब अंगनि चोपसों भूपहि भूरि रिझावै।
भाग के भाजन जात जहाँ चहुँ कोदनि मोह बिनोदनि पावै ॥१०८॥

तारक

फहरैं नवपात निसान घनेरे। नृप आवतु है जनु मैन अहेरे ॥
गुल क्यारिन में अलि बोलत मानौ। वह काम नफीरिन की धुनि जानौ ॥१०९॥

दोहा

सिव पूजन हित कनक के, कुसुम-रमत अलि जाल।
मदन नृपति जग जीति को, बजी मनों करनाल ॥११०॥

दोधक

जो गुल केस के फूल सराहैं। मैन तुरीन के जीन फबा हैं ।।
सोहतु रौसनि में गुललाला। मानहुँ काम के आसव प्याला ।।१११।।

सवैया

अलि कोकिल बीन बजे बजने बन बोलिनि केलि सों नाच रचायो।
सगम मंत्र मनोज महा ऋतुराज लसो गुललालन भायो ।।
तजि मानि मिलै मन भावन को तिय यों लखि आपु सु बागनि आयो।
आमिल ह्वै छिन पौन प्रबीन लै नाफरमा फरमानु पठायो ।।११२।।

संयुत

सुक सारिका गुन उच्चरैं। नृप की सुकीरति सुद्रैं ।।
सुनि होत ही न हुलासु है। दमयंति प्रीति प्रकासु है ।।११३।।
बिरहागि ह्वै दुगुनी जगै। मन बाग देखत ना लगै ।।
पग नेकु आगुहि को दियो। इक ताल देखत मोहियो ।।११४।।

दोहा

लैकै सब संचित रतन, मथन को भय मानि।
मनो बगीचा बीच गृह, कियो छीर निधि आनि ।।११५।।
जल तल बिस धर दड बहु, झलक सेत सरसात।
मनौ बसत बासव दुरद, रदनावलि सघात ।।११६।।
चचल तरल तुरग टत, प्रतिबिंबित जल होत।
लगत बीचि ताजन मनौ, सुर बाजिन के गोत ।।११७।।
पुंडरीक बिकसित लसत, बसत कलंक मलिंद।
मनो उदित या मे मुदित, दिपत अनेकन चंद ।।११८।।
चलत चक्र कर कमल बल, मधुकर दुति हरसाइ।
बिसधर पै राजत सदा, सवरन हरि के भाइ ।।११९।।
लपटी अग तरंग बहु, सरिता रंग अनूप।
नव पंकज अंकुर जहाँ, धरत प्रबाल स्वरूप ।।१२०।।

सित सरोज फूले उतै, इत इंदीवर जोर ।
ससि मंडल वहि ओर जनु, विष मडल यहि ओर ॥१२१॥
चलती लता सिवार की, चल तरग के संग ।
बडवानल को जनु धरो, धूम धूसरे रग ॥१२२॥
मित्र संग कटकित तन, श्री ग्रह पै परवीन ।
जासु कमलिनी अप्सरा, सुचि सुगंध सों लीन ॥१२३॥
जाके जल मे प्रतिफलित, सब तट तरु इक आँक ।
पर्वत धरयो सपच्छ ह्वै, मनौ लसत मैनाक ॥१२४॥

गीत

मनि दीह दर्पन है मनो जल देवता रमनीन को ।
मुकुतानि हीरन सो रच्यो वर धौ जलेस प्रवीन को ॥
जनु सात सिंधुन को यहै उत्पत्ति को थल मानिये ।
जल रासि रूप धरयो मनौ ससि जोनि संयुत जानिये ॥१२५॥

चौपाई

मुनि जन मन सज्जन गुन जेते । सुकृत पुन्य सुचि सत्य समेते ।
सुधासार चंदन घनसार । इनसों मनौ करयो सृङ्गार ॥१२६॥
चक्र कमाल कर चिन्हनि धरै । महा पुरुष की सोभा भरै ।
नीलकठ पीवत विषु याको । सागर मंथन समय सुता को ॥१२७॥

सोरठा

तेहि तड़ाग तट ओर, अद्भुत देख्यो स्वर्ण तन ।
कल हंसन सिर मौर, मोहि गयो भूपाल तब ॥१२८॥
चोंच चरन जुग लाल, अकुर दल दोउ राग के ।
नवल प्रगलभा बाल, तनु रति के अनुरूप जनु ॥१२९॥

लच्छिमाधर

देखि ता रूप को भूप मोह्यो महा । देह में मैन की पीर रोकी हहा ॥
आजु लौ मैं न ऐसो बिलोक्यो कहूँ । देव के लोक को है यहै सोंचहूँ ॥१३०॥

दोहा

चलत दैव इच्छा प्रबल, जितै तितै समुहाइ ।
दौरत सुर नर नाग मुनि, ज्योति गगन बस बाइ ॥१३१॥

निशिपाल

एकु धरि पायँ इकु लाइ उर में लियो ।
घेंच फिर ताकि सिर ढाँकि छद सो दियो ॥
तीर सर आइ अरसाइ खग सोइयो ।
दूरि टक लाय नल भूमिपति जोइयो ॥१३२॥

दोहा

निज मुख छवि जीतो न क्यों, मनों स्वर्ण जल जात ।
किधौ बरुन जलराज को, हाटक छत्र सुहात ॥१३३॥

पद्धटिका

उतरो तुरंत हय ते नृपाल । पग दियति जरी जूता रसाल ॥
बन के प्रवाल सह अबुजात । जनु जुद्ध काज सन्नद्ध गात ॥१३४॥
छलसों सरूप बावन बनाइ । दुरि चलत हरे नहि बजत पाइ ॥
पहुँचो समीप जब भूमिपाल । कर झाँपि झपटि पकरो मराल ॥१३५॥
तब तरफराइ फरकै अतूल । उड़ि चलो चहतु नहि चलतु मूल ॥
तब कंठ फोरि बोलो कराल । कर काटत चोंचनि सों मराल ॥१३६॥

भ्रमरावलि

तबहीं भहराइ भजे खग ता सर सों ।
बहु सोरनि साजत हैं मिलि के उर सों ॥
लगि मारुत चचल पंकज सुदर सों ।
सर मानहुँ भूपति को बरजै कर सों ॥१३७॥

दोहा

जाको पति निरदय तहाँ, बास जोग नहि भूमि ।
यहै कोसि मानहुँ चले, गगन बिहगम घूमि ॥१३८॥

चौपाई

निरखि भूप बोल्यो हँसि यही। हाटक हंस अनूपम सही।
तब बोल्यो धरि धीर मराल। उक्ति अनूपम बैन कराल ॥१३९॥
कौन चाल भूपाल तिहारी। निरखि गह्यो हाटक छद धारी।
कनक रतन धन भार तिहारे। सागर सीकर होत सुखारे ॥१४०॥
मेरे बधे एक अघ पापु। पुनि विश्वासघात को तापु।
तोहि देखि सज्जन ज्यों आयो। हौ सोयो संताप सतायो ॥१४१॥
जो कछु करो पराक्रम बूझो। तो किन जाइ सुसमर अरूझो।
हमसे अबल बधे का नामु। सब संसार हँसे कहि बामु ॥१४२॥
फल दल मूल वृत्ति बन करैं। स्तुति निंदा सम चित धरैं।
मुनि समान खग तिनहि सतावत। पति कहाइ पुहुमीहि लजावत ॥१४३॥

दोहा

कहि कहि ऐसे बचन तब, चकित कियो भूपाल।
करुना रस में सरस करि, बोल्यो हेम मराल ॥ १४४॥

सवैया

हौ ही भयो बिरधापन में इक बालक सो जननी अति जोर न।
हैं अब ह्याँ चिकुला जनमें बरटा तन में छिनु धारत धीर न ॥
हौं प्रतिपालक हो तिनको नहि आजु अहार मिलो अरु नीर न।
मेरी भई यह आनि दसा निबरे विधि तोहि अरे यह पीरन ॥१४५॥

चौपाई

पुनि पुनि जिन तरुनी सुधि करै। कहै बैन करुना रस भरै ॥
चिकुलन को कै कै पछितायो। नैन मूँदि परवाह बहायो ॥१४६॥

[नायका प्रति]

सवैया

मैं फरमाइस कौन मृनाल सुलावतु है मग मे अरि ह्वैगी।
बूझहिंगी पुनि साथिन सों निज नैनन नीर नदी भरिहैगी ॥

उत्तर ही कि अचानक में ससावाइ के धीर नहीं धरिहैगी ।
वे जब देइँगे रोइ महा तो हहा मृगनैनी कहा करिहैगो ॥१४७॥

सवैया

यहि सोक सों प्रान तजैगी बरगिनि तौ निहचै पति को व्रतु पारै ।
नहिं नैनन तें कबहूँ छिन ओट भई मिलि जोट बिहार बिहारै ॥
आजु लग्यो इक बारही आनि बड़ो दुख दानि सुभाग हमारे ।
मारेहूँ पै तौ मारेउ दई, मरिहैं चिकुला लफिकै सब बारे ॥१४८॥

दोहा

बड़े मनोरथ सों लहे, पूजि पूजि व्रजनाथ ।
ते चिकुला ह्वैहैं दई, कैसे आज अनाथ ॥१४९॥

चपकमाला

ज्यों करुना को बैन सुनायो । भूपति के जी में दुख छायो ॥
छोड़ि दियो ताको कहि ऐसो । देखि लयो तेरो तनु जैसो ॥१५०॥

दोहा

जाइ मिल्यो निज गोत में, आनँद रव सरसाइ ।
घेरि लयो चहुँ ओर ते, सब हंसन मिलि आइ ॥१५१॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ हंसग्रहणोनाम द्वितीयस्सर्गः ।



तृतीय सर्ग

हंस-गमन

दोहा

सर्ग तीसरे में कथा, हेम हस को गौन ।
बरनन देश विदर्भ को, कुडनिपुर नृप भौन ॥

सोरठा

पाइ मुक्ति द्विजराज, प्रभु पुरुषोत्तम सों सुगति ।
लह्यो ब्रह्म सुखसाज, बनत न वर्णंत बचन सों ॥१॥

दोहा

पाँख हलाइ फुलाइ तन, चोंचनि चुनि सुखवाइ ।
गयो दौरि उड़ि नीड़ को, मिल्यो सबनि सुख पाइ ॥२॥
पर्यो पाँय तब माय के, करवायऊ आहार ।
पुनि निज तरुनी सों मिल्यो, बाढ़ेउ विविध विहार ॥३॥
चिकुलनि की सब खबरि लै, समाधान करि माय ।
उड़ि आयो पुनि ताल तट, मिल्यो हंस समुदाय ॥४॥

प्रद्धटिका

बहु सैवल जमता को निधान । युत रुद्र अरु मधुकर-निधान ॥
जनु कमल जानु उड़ि कै मराल । बैठ्यो भुवाल के कर रसाल ॥५॥
विश्वास पाइ पहिलो निधान । मन मुदित हंस बैठ्यो सुजान ॥
बोल्यो पियूष सम चारु बैन । मनु कान लग्यो नृप को सुऐन ॥६॥

[हंस बचन]

दोधक

राजन काज शिकार बनायो । खेलनि में नहिं दोष बतायो ॥
भूपति जो तुम मो कहँ छाँड़ेउ । तौ निज धर्म दया पर माँड़ेउ ॥७॥

जे अपने कुल दीननि हारैं। ते निज काज अहार बिचारैं ॥
मीननि की यह रीति बखानी। मारत होत न दोष निसानी ॥८॥
जापर जे निज बासु सँवारैं। ता तरु पै मलमूत पखारैं ॥
ते खग खेल अखेटक मारैं। राजनि को नहि दोष बिचारैं ॥९॥
जे तिनुकान चरैं बिन दोसे। आपु रहैं बिन संग भरोसे ॥
बेधत हैं नृप ते मृग ऐसे। लागन पाप तिन्हैं न अनैसे ॥१०॥
मैं तुमसों कटु बोलनि बोल्यो। सो अपराध चहौं अब छोल्यो ॥
चाहत हौ कछु काज सँवार्यो। जो अपने हिय होइ बिचार्यो ॥११॥
आपुनते शुभ आवत जाने। तौ न अनादर देत सयाने ॥
जो विधि देत कछू फल जी सों। तो जग जीवहि के करही सों ॥१२॥
हौ प्रभु हौं बलहीन पखेरू। हौ तुम राजन माँह सुमेरू ॥
अन्तर आपुम मे अवगाहौं। पै उपकार कर्‌यो कछु चाहौं ॥१३॥
जो उपकार करै जग माही। तो बदलो सजिये निज याही ॥
आपुन के बल के अनुसारै। नाहिन घाटि न बादि बिचारै ॥१४॥
भूप सुनौ बिनती बहुतेरी। जद्यपि मूरख है मति मेरी ॥
ज्यों शुक-बैन सुहावन जानौ। त्यों यह बात करो परमानौ ॥१५॥
देश बिदर्भ सुवेद बखाण्यो। सुन्दरता मनि आकर मान्यो ॥
है रमणीय रमा परभा सों। सुन्दर सौध सुधा बसुधा सों ॥१६॥
मैन मनौ निज लोक बसायो। भूप सिगार को देस सुहायो ॥
पद्मिनि जाति जहाँ सब नारी। मानहुँ बैठि बिरंचि सँवारी ॥१७॥

दोहा

जहँ दुर्वासा तप कर्‌यो, कटक लाग्यो पाय।
शाप दियो वा देश ते, डार्‌यो दर्भ नसाय ॥१८॥
सुख सों बिहरत बनन में, विद्याधर सुर सिद्ध।
तब तें त्रिभुवन में भयो, देस बिदर्भ प्रसिद्ध ॥१९॥

तोटक

जगतीपति भीम तपै जेहि को । अरि काँपत नाम सुने जेहि को ॥
जिन षोड़स दान अनेक दिये । बहु बार महा हयमेध किये ॥२०॥
रन जीति सिरी बहु बार बरी । सँग कीरति नौल सखी सुघरी ॥
भुजदण्डन सों निज दैत्य हने । पठये उपहार शचीस वने ॥२१॥
कुल भोज सरोजन को रवि है । लखतै तम जात महा दबि है ॥
सत मारग सोधि चलावतु हैं । द्विज चक्रनि चैन बढ़ावतु हैं ॥२२॥

दोहा

बीति गयो बहु काल कछु, भयो न ताके बाल ।
जद्ध सुचित सब सुखनि सों, दुचित भयो भूपाल ॥२३॥
पटरानी सों कै मतो, लै परिजन कछु साथ ।
आश्रम गयो नरेस तब, जहाँ दमन मुनिनाथ ॥२४॥

प्रमिताक्षरा

जहँ वेद घोष नित पाप हरैं । सुक सारिकानि नित ब्रह्म ररैं ॥
बक हंस सारसनि बाद परैं । मन द्वैत भेद निर्वेद करैं ॥२५॥

सवैया

बाघ बछानि को गाइ जियावत बाघिनी पै सुरभी सुत चोखै ।
न्योरनि को सुहरावत साँप अहारीनि देवै उहे प्रतिपोखै ॥
ब्याधि कथा नहिये सुनिये अपलोक सबै जल कुण्डनि बोखै ।
नयननि राग भई पिक के अरु बिग्रह बैन शरीर के धोखै ॥२६॥
बंधन है मनही को जहाँ अरु संयम में यम को यसु नाम है ।
दैत्य कथा अघ की सुनिये जहाँ संग्रह सों अलि रासतु काम हैं ॥
ढेर बिभूतिन के चहुँ ओर रजोगुन यो अभिराम विराम है ।
आश्रम देखि मुनीश्वर को अति पावन पुन्य करयो परिनाम है ॥२७॥

चौपाई

कहुँ बिछे सोहत मृगछाला । कहुँ गूँदति मुनि अच्छनि माला ॥
कहुँ फूलफल दल मिलि कूटत । कहुँ कहुँ पके निवारनि जूटत ॥२८॥
सुकुमारी तन मुनि जन नारी । घट भरि भरि सींचत तरु बारी ॥
थकी जानि मारुत गतिमन्द । परसि परसि तनु करत अनन्द ॥२९॥
बलकल चीर चुनै तन मूँदे । कोउ फूलनि लै अलकनि गूँदे ॥
भूषन तन फूलनि के करैं । देखत ही मुनि जन मन हरैं ॥३०॥
श्रुति नावत तिनही के नैन । चिकुरै वक्रगतिन के ऐन ॥
खेलत मुनि कुमार छबि छायो । मानहु सत्यलोक तें आयो ॥३१॥
मुनि जन निज सयम जप साधैं । धरि धरि ध्यान ब्रह्म आराधैं ॥
चमचमात रुचि के तनजाल । बनत न देखत रूप बिसाल ॥३२॥

घनाक्षरी

बलकल धरैं तप बरत अनेक करैं जनपद गहत लहत मन्त्र मत हैं ।
ऐसे बल तपै परलोकन ते अरियाते कोसनि अचल ताते केवरो लगत हैं ॥
सुबसन भामै साधैं पौनन यतन आनि अद्भुत मुकुतौ करन को सजत हैं ।
दृढ बिगहत हैं सबन एक मण्डल लै राजसी रहित राजै तापसी जगत हैं ॥३३॥

दोहा

एक एक ते सरस सब, तप पवित्र अवतार ।
तिनमें राजत दमन मुनि, जनु जग को करतार ॥३४॥

हरिगीतिका

शिर ते छुटी छिटकी जटा मृदुबेलि ज्यों सुचिशील की ।
जनु श्रृङ्ग शैल सुमेरु ते बहुधार गंग सलील की ॥
तिरपुंड राजत भाल पै शुभ भस्म को रचि के कियो ।
जनु हेम की नव पट्टिका तिहुँ देव को आसन दियो ॥३५॥
चहुँ ओर ते लपटी जटा छबि तेज-पुंज समाज सों ।
जनु सूर मण्डल में लसै तड़ितान के सुभ साज सों ॥

असमस्तु की रसनावली समरेख भ्रूयुग पांति है।
गुन तीनि तीनिहु देव तिहु मनु काल लोचन कांति है ॥३६॥

बिज्जूहा

पुण्य के पाल हैं, दीनन के धाल हैं।
श्रीय के हेत हैं, नयन सों भेत हैं ॥३७॥

सवैया

पुन्यनि के जल घोरि घने घनसार मिले मृगमेद दहावत।
कंजनि के किधौ पुजनिसों नख ते सिख अंग सबै सियरावत ॥
बोरत स्वादु सुधा रत में बसुधा महँ सो द्विज धन्य कहावत।
जा पर नेक दया दग आवत ता तन के त्रयताप नसावत ॥३८॥

सुलक्षण

अति ललित लंबित कान हैं। जहँ सुनत मन्त्र विधान हैं ॥
चहुँ श्रुतिन जनु युग तनु-धरे। मुनि मुखहिं सेवतु हैं खरे ॥३६॥
शुभ बंश उन्नत नासिका। तप की ध्वजा द्युति हासिका ॥
जहँ छुटत पवन सुबासु है। तिल फूल के तन त्रासु है ॥४०॥

दोहा

इडा पिंगला सुसुमना, नारिन को रंग-भौनु।
पूरक कुंभक रेचकनि, मिलि रमती रस रौनु ॥४१॥

लीला

कमल सों मुसुकात आनन पूरि दंत मयूष।
स्वच्छता हिय की मनो प्रगटी पवित्र पियूष ॥
स्वर्ण को उपबीत राजित कंध लंबित बाम।
सकल इन्द्रिय जनु सुचंचल रोकिबे को दाम ॥४२॥

छप्पद

बाहु बन्ध करमूल में रत्नावलि राजै।
लपटे फणि श्रीखंड की लतिका जनु साजै ॥

कुंड जु रच्यौ सु होम को जनु नाभि सोहाई ।
रोमावलि मिसि धूम की रेखा चलि आई ॥४३॥
धोती सोहत स्वेत है जनु जोन्ह सोहाई ।
मनहुँ जरा दुगुनी करी तनु छबि छाई ॥
किधों सुकटि लौं न्हात है गंगाजल ठाढे ।
किधौं चरणनख असु के पट सो द्युति बाढे ॥४४॥

दोहा

सकल भूप सिर मुकुट मनि, मिलत ओप सरसात ।
चरन कमल मुकुतावली, लसत नखन की पाँत ॥४५॥

घनाक्षरी

विकसत सुन्दर अशोक तरु बेदिका पै
मृदुल सुदर्भ नयो आसनु सँवार्यो है।
तापर बिराजत दमन ऋषिराज आस
पास ऋषिराजन को मंडलसुधार्यो है ॥
सनक सनंदन से विदित परम-तत्व
नरम कठोर बैन याके विचार्यो है ।
देखत ही मुनिन को जन्म फल लह्यो भूप
उमग्यो उदधि उर आनंद में पार्यो है ॥४६॥

दोहा

फटिक माल कोपीन पट, दंड कमंडल चारु ।
आनि सत्व गुन को बस्यो, सुख पावत परिवार ॥४७॥
अति दुर्बल तनहूँ बढ्या, झलक पुंज परकास ।
सेवन हित जनु अर्तिनि मिलि, कर्यो सरीर निवास ॥४८॥

त्रिभंगी

सन्मुख तब आयो छिति सिर नायो टेरि सुनायो कर जोरे ।
मुनि भूपति जान्यो उठि सनमान्यो गुननि बखान्यो मनु भोरे ॥

सादर उर लायो आसन लायो बैठायो सुख मानि सही ।
हँसि मुनि पुनि बूझी प्रेम अरूझी तप बल लूझी कुशल सही ॥४६॥

दोहा

न्हान उपासन कै सकल, बदि जज्ञ थल बास ।
कंद मूल फल सरस दै, भोजन को सविलास ॥५०॥
आगम कारण भूप तब, मुनि सों कह्यो सुनाइ ।
मुनिवर दई उपासना, परम दयालु दयाइ ॥५१॥

प्रद्धटिका

तब विष्णुभक्ति दीन्ही दयाल । तुम नारि संग लेवौ भुश्राल ॥
सब होत तुरत अभिलाष सिद्ध । यह विष्णुभक्ति देवन प्रसिद्ध ॥५२॥
गहि पाँय चल्यो घर को नरेश । ह्वाँ आइ कर्‌यो व्रत को विशेष ॥
तब पगट भये भय भूरि हारि । बर दयो दुहूँ को मन बिचारि ॥५३॥
नृप धर्‌यो पुत्र मन मे सुधारि । रानी सु लई कन्या बिचारि ॥
ता गर्भ युगल जनम्यो स्वरूप । एक तनय चारु तनया अनूप ॥५४॥
दम कर्‌यो नाम दम घोष भानु । सुन्दर उदार बल को निधानु ॥
दलमल्यो रूप तिहुँ लोक बाम । दमयंति कर्‌यो तनया सुनाम ॥५५॥
तेहि सरि न और तिय तीनि लोक । मैं देखि फिर्‌यो सब ओक ओक ॥
अब है कुमारि वय मन नवीन । कछु वर्णत ताकी छवि प्रवीन ॥५६॥

तारक

वह साँचेहूँ रूपवती लछमी है । गुन सिंधु धराधिप न नमी है ॥
सब लोगन चारु कथा चरचा की । जिमि मेघ छुपी छबि चन्द्रकला की ॥५७॥
तिन केसनि की समता कत पावै । केतिककौ किन चित्त चामर चलावै ॥
सिर राखत छंद सनेह भरे हैं । पशु जीवनि पीठिनि दै निदरे हैं ॥५८॥

दोहा

नयन मृगन को बागुरा, मन मीनन को जाल ।
काम अहेरो के लसै, चाबुक नील बिसाल ॥५९॥

हारे हरिनी के नयन, लगे पलक मुरझाय।
समाधान तिन को करत, मानौ खुरन खुजाय ॥६०॥

पाईता

ताके दोनों कुल गनिये। औ दोनों लोचन मनिये ॥
जोते नारी गुन गनियौं। सोहैं लागे श्रुति सुनियौ ॥६१॥

सोरठा

नलिन मलिन ह्वै जात, हरिन होत छबि हीन तब।
खंजन गंजन गात, अञ्जन रञ्जन मंजु छबि ॥६२॥

बिम्ब

फल अधर बिम्ब जासो। कहि अधर नाम तासो ॥
द्युति लहत कौन मूँगा। जग बर्णि होत गूँगा ॥६३॥

रोला

दमयती के बदन काज ससिसों हरि लीनों।
सुधासार मँह चाहि बिबिध बिधि परम प्रवीनो ॥
बड़ो भयो बिल बीच झलक नभ सॉवलताई।
हरिन कहत कोउ ताहि शशा कोउ भूमि सोहाई ॥६४॥

सवैया

तोम कहाँ तिरछी दृग कोर मुख औ भौंह मरोरनि की चतुराई।
गूँदि चुनीन कनी रमनीन सो मैन कहा अलकै छहराई ॥
ओदनि को सु कहा रसमै जु करे युत एक सुधा की बड़ाई।
वा मुख की सर चाहत चन्द्रमा क्यों न कलंक मिले बहुधाई ॥६५॥

कमल

भृकुटी कुटिल धनु मनौ, रति मनमथ हित बनौ।
सकति सहित जय लसो, नास रंध्र नालिक कसो ॥६६॥

नीलस्वरूपक

रावेर के सम है वह बालौ। जीतति है द्युतिवत जहाँ लौ॥
जो गिरि दुर्गन माँह बसै जू। जा भुज चन्दन डार त्रसै जू॥६७॥

सवैया

कचुकी सूही कसे मोहरा अति फैलि चली तिगुनो परभासी।
मानिक के भुजबन्द चुरी मनि कंचन कंकन आय प्रकासी॥
रावरै कठ की माल मनो निचुरयो जनु रंगमिली मृदुता सी।
बाल अबाल मयंकमुखी की लसैं भुजबाल प्रबाल लता सी॥६८॥

दोधक

कमल बसै जल कोटन माही। लेत सिरी कर सो चित चाही॥
मित्र प्रताप सहाइनि आनै। पै तिहि सौं सम होत डराने॥६९॥

दोहा

रोम रेख दै बीच में, बाँटि लियो निज अंग।
तऊ दबावत तरुनई, लरिकाई को रंग॥७०॥

सुमुख

जासु देह द्युति सागर माँही। खेलि-केलि सजि के बहुधा ही॥
जोबनु काम दुओौ नृप आयो। कुम्भ तरया कुच गोल बनायो॥७१॥

दोहा

झरत प्रभा चहुँ ओर झर, झमझमात छवि जाल।
रचत चक्र धरि कनक घट, मानौ काम कुलाल॥७२॥
लाल कंचुकी में लसत, कुच कंदुक नारंग।
फैली प्रभा तरंग जनु, अंग अनूप सुरंग॥७३॥

सुमुख

उदर मनोहर सूक्ष्म कै। झलझलात सुखमा झलकै॥
विधि करि मुष्टि सुमापनि को। त्रिबली अबली जीतन को॥७४॥

कबित्त

झीनी सितानननि काननि में रसनावत सो रसना झननाते।
नाचत सी लहकै चलते मृदु सीखति सी बिपरीति की बाते॥
देखत ही कटि लोचन जात गई घटि कै कटि आइत याते।
छाइ रही छबि घाँघरो छोनि पिछोनि लही उलही छतिया ते॥७५॥

सोरठा

बिम्ब नितम्ब सडोर, छहरत छबि पट ऊपरहु।
रचै चक्र रथ जोर, जनु जग जीतन काम के॥७६॥

सुसमा

रम्भा तरु को जवा निदरै। रम्भा तरु नीके ही बिदरै॥
लज्जा करि हस्ती के ललना। सुडहि गहि धारहि कुंडलना॥७७॥

सोरठा

गुंजत मणि मजीर, चरण लसत सेंदूर रग।
बोलत हंस अधीर, सरद भोर अंभोज बनु॥७८॥
सरिता सरनि अन्हाइ, एक पाँय रबि को बिनय।
लही सुगति तब आइ, दमयन्ती पग ह्वै कमल॥७९॥

सवैया

छूटत बार न भार सहै लचकै कटि औ भ्रकुटी चढ़ि आवैं।
छूटी अभूषण की किरनै जनु राजत दामिनि के पिंजरावैं॥
लोचन कोरनि सों तिरछे लखि टोनन की करतूति बतावैं।
सोकु-शची रति रभ हजारन लाखन लच्छि लखो नहि भावैं॥८०॥

अमृतगति

सरवर गाहत नित ही। रचतु रहो बहु तितही॥
तब देखो दग भरि के। सफल सजीवन करिके॥८१॥

इन्द्रवज्रा

जबै दृगै देखिय राजरानी । भूली सबै शुद्धि चलै न बानी ।।
ये हो बिधाता यह जो बनाई । ह्वै है कहा या पति सुन्दराई ।।८२।।
देख्यो तुम्हें अद्भुत रूपशाली । आई हमें शुद्धि अहो भुवाली ।।
ता रूप के लायकु एकु तोही । छोड़उ सकल संशय आनु मोही ।।८३।।

दोहा

दमयन्ती को रोष रस, हँसी मान तुम योग ।
नवल बधू तन पै दिपति, लाल माल मनि भोग ।।८४।।

गंगाधर

भूप रूप नव सुन्दर तेरो । ता बिहीन नहिं रोचतु हेरो ।।
यामिनि ही मिलि चन्द्र बिराजै । बिज्जु संग घन की छबि छाजै ।।८५।।
चित्त चारि सुरराज सराहै । और देवगन बात कहा है ।।
तो सँग जोग जु सहज न जानो । मेघ ओट शशि-रेख प्रमानो ।।८६।।

प्रमाणिका

समीप जाइ तासु के । कहौं सो यों प्रकासु के ।।
तुम्हैं धरै सुचित्त में । टरै न बात नित्त में ।।८७।।
जो इन्द्र मेटिहू चहै । न तौ मिटे सही रहै ।।
यहै सुकाज मैं गन्यो । जो होइ आपहू मन्यो ।।८८।।

दोहा

तुम सों बूझत हौं वृथा, निज पौरुष परिमान ।
काजहि सों कहि देत हैं, जे हैं जगत सुजान ।।८९।।
अमृत बचन द्विजराज के, पीवत भूप अघाइ ।
लई मनो उद्गार तिहि, मृदु बिहँसनि मिसि आइ ।।९०।।

घना

कर कमलन पोंछो पच्छ अँगोछो बार बार मनुहारि करी ।
पीयूषनि सानो यों मृदु बानो बोल्यो अन्तर धीर धरी ।।९१।।

[नल बचन]

कुंडलिया

तेरी आकृति की नहीं, उपमा या जग हंस ।
बरनत नहिं बाचा बनत, तेरो सील प्रशंस ॥
तेरो शील प्रशंस अवतरयो आइ आनि हरि ।
किधौ हंस के नाम रहे रबि तेज पुंज भरि ॥
जहँ जहँ शुभ आकार तहाँ शुभ-गुन की ढेरी ।
सामुद्रिक को उदाहरन पायो तनु-तेरी ॥१२॥

सुलक्षणा

तनु है न एक सुबरण मई । तुअ बचन द्युति जैसी भई ॥
नहिं पच्छपात शरीर सों । तू करति है पर पीर सों ॥१३॥

मदलेखा

मैं संतापित देही । तैं पायो नव-नेही ॥
जैसे मारुत लागे । अम्भो बिन्दुनि पागे ॥१४॥
द्रव्यै और बखानै । ताही को निधि जानै ॥
साधू को सतसगा । साधू को निधिरंगा ॥१५॥

सवैया

बार हजार सुनी हम हूँ वह मोहनी मूरति जीवन ऐसी ।
पै अब तेरे कहे निजकै पुनि देखत हौ निज नैनन जैसी ॥
मित्रनि की निज हीय की आँखिन देखति दूरि भली यों अनैसी ।
तीरहू सूछम को न लखै इन आँखिन ते चख मौंह लसै सी ॥१६॥

दोहा

चर्चा ताके रूप की, निपटि परी मम कानु ।
अग्नि ऋचा जनु प्रज्वलत, जासो काम कृसानु ॥१७॥
यम युवती दिसि ते चल्यो, अहि फुकारि विष घोरि ।
लगै पवन बिरहागि जगि, तन ईंधन गन जोरि ॥१८॥

कमल

दरस मिलत रवि सों। तपनि गहत छवि सों॥
परसि परसि हमको। शशि बढ़वत तम को॥९९॥

तोटक

रति नायक केसर फूल बजे। विष की लतिका नित नव उपजे॥
उर लागत मोहत है मन को। अति तापित आनि करै तन को॥१००॥

चामर

हौ वियोगसिन्धु में अथाह बूड़िकै रह्यो।
भाग्य सों लह्यो तुही जहाज बाँह सो गह्यो॥
तोहि प्रेरणा करौं जो पिष्ट को सुपीसनो।
आपुही सुजानि जाहि ज्ञान जो थुरौ घनो॥१०१॥

दोहा

तो मग में सब सुभग सुख, तुरित मिलन पुनि सोहि।
सिद्ध करौ अभिमत लहौ, समय सुमिरियो मोहि॥१०२॥
बिदा कियो नृप हंस तब, नृप कीरति ध्वज बंस॥
बीच बगीचा के महल, दाखिल भयो प्रशंस॥१०३॥

सोरठा

सुफल करौ दिन आज, लखि दमयन्ती को बदन।
उड्यो हंस सिरताज, महिमण्डल कुंडिन नगर॥१०४॥

सवैया

हाटक हंस चल्यो उड़िकै नभमें दुगुनी तनु ज्योति भई।
लीक सों पेंचि गयो छिन में छहराइ रही छवि सोनमई॥
नयनन सों निरख्यो न बनाइ कै कै उपमा मन माँह लई।
साँवल चीर मनौ पसर्‌यो तेहि पै कल कंचन बेलि नई॥१०५॥

मोदक

दीठि पर्‌यो प्रथमै मग सोहन । नीर भर्‌यो कलसा मन मोहन ॥
ता कहँ कारज सिद्धि बतावत । भागन सों समुहे लखि पावत ॥१०६॥

दोहा

भयो पच्छ झंकार रव, झमकि चल्यो खगराज ।
लखि लखि नीचे खग चलत, ऊपर जान्यो बाज ॥१०७॥
मग में लखि बन बाग नग, खग बिलम्ब नहिं कीन ।
जाको मन जासों लग्यो, तासों रुकत प्रबीन ॥१०८॥
पहुँचो देश बिदर्भ में, हेम हंस समुहाइ ।
रजधानी नृप भीम की, नगिचानी तब आइ ॥१०९॥
मोहि रह्यो द्युति देखिकै, कुंडिनपुर पुर-राज ।
बचन रचन सों चतुरवर, बग्नत शोभ समाज ॥११०॥

उल्लाल

गृह फटिक रचे शशिखण्ड सम फैलि रही छबि सित सरस ।
निज कत सग चिति युवति जनु करत मुदित चित हास रस ॥१११॥

तारक

मनि लालन सों रँग भौन बनायो ।
बिच बीचहि नीलम गेह सोहायो ॥
रबि के चित नेह मनो अधिकायो ।
निज लोकहि में सुतलोक बसायो ॥११२॥

लगड़ी

साजत आलै अवज में, तेहि चहुँ ओर प्रकास ।
सब तिथि निसि में, अतिथि सी राकी कर्‌यो प्रकास ॥११३॥

बंसततिलका

न्हाती जहाँ सुनयना नित बावली में ।
छूटे उरोज गत कुंकुम नीर ही में ॥

श्रीखंड चित्त हग अंजन संग साजै।
मानो वहीं त्रिबेनी घर ही बिराजै ॥११४॥

तोमर

चहुँ ओर कंचन कोट। रचि ओट पट्ट अगोट।
छिन एक नीरव होत। लखि भौन जागत जोत ॥११५॥
सब ओर खाँइ तेहि माँह। प्रतिबिम्ब की छबि छाँह॥
जनि आइ लोक अकासु। सुख जानि मानि सुपासु ॥११६॥

दोहा

तुंग पताका पटल गत, चाबुक चलत सुगाम।
रवि रथ के बाजी जहाँ, अरुन लहत बिस्राम ॥११७॥

लक्ष्मीधर

तीनिहू लोक के बास बासी जिते। दीठि आवै भले काज साजै तिते॥
देहधारी मनो विश्व रूपी यहै। बेद गाई बड़ाई बड़ी जो लहै ॥११८॥

चौपाई

मुँदवारी रवि मनिन सँवारी। अनलम्कार छूटी छबिवारी॥
दिन में अति अद्भुत गति रहै। बाणासुर पुर शोभा गहै ॥११९॥
शंख शुक्ति मुक्तामनि भरे। अम्बुज रंग चीर बहु धरे॥
सागर सों जहँ लसत बजार। मुनि सोख्यो सब सलिल अपार ॥१२०॥

सवैया

शशि को मणि उच्च अगार पगारहिं चन्द्रहि छू श्रवती जल धारै।
पूर प्रवाहन सों सुरसिन्धु बढ़ी उमड़ी तरु तोरि किनारै॥
सागर इन्दु उदोत बढ़ै यह मानि मनौ पतिके अनुहारै।
धन्य तिहूँ पुर वे रमनी तजि जे ऋतु आन पतिव्रत पारै ॥१२१॥

चुलियाला

अस्त समय सूरज तजत, निज रूचि पुंज सुरंग सुहावन।
केसरि के बाजार में रहत, नित्य गिरो इक अंग रुचिर तन ॥१२२॥

सरसी

गुंजत भौंर मिल्यो केसरि मे तोलत सहज सुभाई।
जहँ बजार जन-सोर सग गाहक है शुद्धि भुलाई॥
दिनमनि मनि गसि गली सँवारी तपत दिवस सरसाई।
ता मारग सब सिसिर सीत में चलत भले सुख पाई॥१२३॥

अहीर

मुख लोचन कर पाय। कमलन रचे बनाय॥
चम्पक के दल अग। दमयन्ती तन रंग॥१२४॥
स्मर अरचा हित माल। ताको कहत बिसाल॥
तेरे कठ सुयोग। देत सकल रस भोग॥१२५॥

दोहा

सिखर नीलमनि कीर्ति मिलि, स्याम ध्वजा पट जोति।
दिनकर की गोदी चपल, जँह जमुना सी होति॥१२६॥

मनहरन

आपने महल-रग-अटा सों बिलोकि बाम,
तड़ित छटा सी कर्यो चहै अभिसार को।
नीचे नीचे चलत बिपुल जलधर देखि,
ता पै चढ़ि चलि चहै पीतम के प्यार को॥
गति की तरलता सों नयन न लगत पल,
झलमल होत रूप बिमल निहार को।
सोहत सची सी बैठी जलद बिमान,
आसमान ते उतरि आई नगर उदार को॥१२७॥
केलि के महल दमयन्ती के सिखर वर,
मरकत किरन छूटी ऊपर को छुरी सी।
लागी ब्रह्माण्ड खण्ड खण्ड कै न डार्यो याते,
नीचे कै बदन फिरी मानो लाजभरी सी॥

ऊरधमुखी ह्वै चरत है सुर सुरभीनि,
तिनि के बदन पै रिझावै द्युति हरी सो।
पुन्य को बगर धन्य कुंडिन नगर जग,
जगरमगर कीरति जाकी सोनजरी सी ॥१२८॥

दोहा

बिधु-रतननि कर ह्याँ रचे, रजनि नीर-भरि होत।
विफल सींचमो लखि रच्यो, भैमी बाग उदोत ॥१२९॥

मालिनी

उपबन बिच देखो राजपुत्री बिराजै।
सरिस वय सहेली वै चहूँ ओर छाजै॥
दिपत नखत माला मध्य ज्यों चन्द्रेखा।
ललित सुर मृगाची लच्छि ज्यों चारु भेखा॥१३०॥

दोहा

इन्द्रानी निज सखिन सँग, नन्दन बन में आइ।
क्रीड़ति ह्वै हैं ऐस ही, ऐसे ही दरसाइ॥१३१॥
बैठन-हित थल लखन को, कनक पख फहराइ।
प्रभाचक्र भू पर लसत, ऊपर ही मँडराइ॥१३२॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दण्डप्रतापमार्तंड भूमण्डलाखंडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
हंसगमन नाम तृतीयस्सर्गः।

चतुर्थ सर्ग

हंस-समागम

दोहा

चौथे सर्ग मराल औ, दमयन्ती संवाद ।
आगम ढिग निषधेश के, मेट्यो बिरह बिषाद ।।

सोरठा

बाजू दुऔ समेटि, नभ ते उतर्‍यो दूत सों ।
दमयन्ती ढिग भेंटि, बैठ्यो पाँख हलाइ छिति ।।१।।
भयो अचानक सोर, लगत जोर सों पख चति ।
फिरि चितई ओहि ओर, कहा कहा यह कहत ही ।।२।।

दोहा

दमयन्ती की सहचरी, छोडि विषय रस और ।
देखि रही ता रूप को, मुनि ज्यों हरि सब ठौर ।।३।।

चचला

हस देखि कै अनूप आपने सरीर तीर ।
लेन काज तासु के यही भई अकंप धीर ।।
ज्यों मुनीस चित्त चारु लै समाधि साधि आनि ।
हस के मिलाप को हलै चलै न ध्यान मानि ।।४।।

पृथ्वी

बिलोकि दमयन्ती को गहन घात आकार सों ।
उड्यो न नभ को तबै कनक हंस संचार सों ।।
हिये हरषि हित सों कर बलाइ लायो चहै ।
तबै फरकि फूल सों तनिक जाइ आगे रहै ।।५।।

त्रिभंगी

ज्यों ज्यों सँग धावै गहन न पावै झपटि चलावै हाथ जहीं।
आली दै ताली कुहँकि रसाली सरस उताली हँसत तहीं॥

[दमयन्ती बचन]

चहती उचटायो सोरु मचायो सब मिलि यासों बोधु हरै।
पीछे जनि आयो तेज न गायो कहा खिझायो जाहु धरै॥६॥

दोहा

कपट कोप सों सखिन को, बिदा करी सुकुमारी।
छाया सी पाछे लगी, हाटक हंस निहारी॥७॥

स्वागता

एक एक पग पै यह जानै। हंस हाथगत होत सु मानै॥
दूरि दूरि छल सों यहु धायो। अंधकार कुंजन लै आयो॥८॥
संग आइ पहुँचो न सहेली। देखि राजतनयाहि अकेली॥
अंग माँह अल बिंदु बिराजै। फूल लोल लतिका जनु छाजै॥९॥
बैन चारु नर लौं तब बोल्यो। ज्यों पियूष रस को अंग खोल्यो॥
राजपुत्रि ! जनि दौरो ऐसो। पाँइ कमल पखुरी नव जैसो॥१०॥
ए सरोजमुखि ! यौवन देखे। क्यों न डरै हिय कौन बिसेखे॥
पात कम्प कर सों तरु जेते। तोहि वार राखत जनु तेते॥११॥

द्रुतविलम्बित

चलति तू गजगामिनि भूमि पै। धरनि और नभ आवत घूमि पै॥
गहहि मोहि कहा कर में फसै। अहह बालपनो अजहूँ लसै॥१२॥
कमल आसन बाहन हंस है। सरग लोक निवास प्रसंस है॥
चरत हाटक कंज मृणाल है। धरत देह सुवर्ण बिसाल है॥१३॥

प्लवगम

बिधि को आयसु पाइ मराल बिहार को।
नभ तजि आयो भूमि सरोवर चार को॥

नल नृप लीला ताल न्हाइगे श्रोक मै ।
कौतुक सो हो एक श्रमतु भू लोक मै ।।१४।।

दोहा

बाग तडाग श्ररु कूप सों, देत देव फल भोग ।
ज्यों तरुवर दोहद दिये, बिना समय फल-योग ।।१५।।

प्रद्धटिका

हम देव लोकबासी मराल । नहि पकरत हमको फांस जाल ।।
नल एक मोंहि पकर्यो अनूप । सुरलोक भोग के भाग रूप ।।१६।।
जब करत केलि लीला बिहार । जिमि चलत चौर चहुँधा अपार ।।
तिमि करत जाइ हम पच्छबात । सुरसिंधु सलिल सों सीत गात ।।१७।।

दोहा

साधु विभक्ति बिचार में, प्रथमा व्यक्ति सुजासु ।
सुश्रौ जसै मिलि सुभ समय, साधन छमा प्रकासु ।।१८।।

उपेंद्रवज्रा

दरिद्र दारिद्र्यन बोरि डारै । श्रमोघ बवरखै जसु नीर धारै ।।
तासों न को जाचक हाथ जोडे । कहूँ पपीहा घन संग छोडै ।।१९।।
सुनी जु मोसों नल रूप बानी । भई सुरभा रस रंग सानी ।।
सुन्यो जु ताको नल नाम जैहीं । मिली सु येती नल कू बरैहीं ।।२०।।

मनहस

हम भूमि ते सुरलोक को पगु देत हैं,
नल केलि के कल गान तौ सुनि लेत हैं ।
जब इन्द्र किन्नर गीत गावत चोज के,
हमको न भावत नेकहू सुर श्रोज के ।।२१।।

दोहा

हाहा करि निदर्यो तवै, हम हरि गायन हेरि ।
तब ते ताको नाम जग, हाहा भाखत टेरि ।।२२।।

घननद

नल के गुन अभिराम सुनत सकाम होत सची कंटकित तन ।
लखत न वासव तासु पुन्य प्रकास प्रेम सलिल पूरित नयन ॥२३॥
चित दै सुनत महेस बरनत सेस नल के गुन गन मनहरन ।
करि कंडू मिसि आन मूदत करन तब गिरिजापति-व्रत-धरन ॥२४॥
बिधि सजि धरम बिधान सब परिमान रोकत बानिहि मौन मिस ।
मिलि कढ लगि तासु जग परकासु जानतु ता जद वेद बिस ॥२५॥
लक्ष्मी मिली सुभाइ हिय अकुलाइ भइ पतिब्रत की बिरति ।
सबमय करत निवास निज परकास गति अद्भुत अति तासु पति ॥२६॥

सवैया

सो बिधि को कर क्रूर कहावत पूरन चंद रच्यो द्युतिहीनो ।
जा नल को मुख देख तज्यो सिव सीस पै आधिक सो परबीनो ॥
निज जीतनहार सुन्यो हमसों तब ते अति इंदु रह्यो भयभीनो ।
चलि सूरज सागर माँहि छपै कतहूँ घनपुंज परै नहि चीनो ॥२७॥
आपने बाहन को हरि आयसु देत यहै रस रंग मचावत ।
आपने मीतन सों नल को मुख कीरति के गुन क्यों न रचावत ॥
ज्यों बरनो इम चोजु कछू मुदि नाभि सरोज गयो सकुचावत ।
बूड़ि बिरंचि गये उत आपु गहे उर माह रमा लपटावत ॥२८॥
नल को मुख कोल में केसरि से सुभवति सदा तनु की छबि छाजै ।
रचि मानौ करी गुन की गनना करतार सुकंचन रेख बिराजै ॥
हीरन की कलपैं तलपैं यहि भाँतिन काँति की जोति समाजै ।
चौदह और अठारह भेद सों बिद्यन की पदवी सुख साजै ॥२९॥

सोरठा

निरखि सिरन द्वै तास, काम पुरंदर तनिक से ।
द्वै-बिधि क्षमा निवास, जिय न लगत अहि सेस जिन ॥३०॥

चंचरी

पाँख सों इक हीन है बिन ता तनूज प्रमान है ।
रूप देखत नैन सों परिये समीर समान है ॥
देह दीप्ति दिपै महामनि मानिये गति रूप के ।
कौन दिसि जो जात है जू न अस्व नैषध देस के ॥३१॥
सत्रु के रमनीन को दृग अम्बु की सरिता चली ।
युद्ध भूमिन में भई उत्पत्ति धारन की भली ॥
बान पन्नग जासु के फहरात हैं जहँ जोसु सों ।
बैरि प्रानन पौन सों छकि जात हैं निज रोसु सों ॥३२॥

शार्दूलविक्रीड़ित

तीनौ लोक निबासि जे जन घने ते जोगनै ज्ञान सो ।
आयुर्दाय घटै नहीं सु तिन को जो बुद्धि के मान सो ॥
बाढ़े आनि परार्द्ध सों जु गनना क्यों हूँ बनै आइकै ।
तौ ताके गुन की चली सु गनना संसार में गाइकै ॥३३॥

तारक

तहँ पच्छिन को नहिं रोकत द्वारे । हम मंदिर भीतर जात सुवारे ॥
तिनकी रमनी गन को सिखरावैं । गति के कछु मंजुल भेद बतावैं ॥३४॥
तिन संग सिंगार कथा हम भाषै । रति रंभ सची सुखमा अभिलाषै ।
नव काम प्रतीति धरोहरि धारी । यह जानि खरीदत हैं नव नारी ॥३५॥

दोधक

देखतु हौ नल को मुख जौलौं । जीवन को फल जानतु तौलौं ।
मोहि रही जुवती रसभीनी । नयनन लाज बिदा करि दीनी ॥३६॥

सवैया

कौल से नयनन सों बिहँसै झमकै तनु भूषन की परभा सी ।
बिद्रुम रंग तरंग लसै अधरान मिलो मुसकान सुधा सी ॥

बैननि में निज मोहनि के कछु आखर से पढ़ि आवत हासी ।
प्रानन वारि निहारि रहे सोइ मोहि रहे सब नागरिवासी ॥३७॥
तेरे लसै सिर रंगित ओढ़नी ऐसिय वाको लखी हम पागै ।
जैसी बुटी तुव कंचुकी पै इमि पैंधतु है उर में मृदु वागै ॥
ऐसिय रीझ सुभाव सबै रुचि ऐसोई वाहु को मोहत बागै ।
है समता अति ही उन ते तुम क्यों न तिन्हैं सुनते अनुरागै ॥३८॥
तेहि राजके जोग रची ही तुही विधि ऐसि न और तिलोक सँवारी ।
कैरबिनी बिन कौन लसै ससि इन्द्र लहै यह मैं निरधारी ॥
जो कबहूँ नल सों न मिलौ फलहीन तौ रूप की रासि तिहारी ।
भौरन को मुख संगन तौ लगि नूतन तान बसत सिगारी ॥३९॥
ब्याह किधौं नल ही सों रचौ बिधि को चित पैठि के कौन निहारो ।
ब्याह के जोग भई अब ही अरु भू पर रूप अनूप तिहारो ॥
श्री हरि को गिरिजा हर को रति काम को यो जिन जोग सँवारो ।
जोग सों जोग मिलावन को अति सचित होतु बिरचि बेचारो ॥४०॥

दोहा

पंकजमुखि ! नलराज बिन, और न जोग लखाइ ।
को गूंदत गुन दरभ सो, माल मालती पाइ ॥४१॥
जो जड़ता बस बिधि तुम्हैं, नहि मिलवै नलराज ।
जग कलंक-सागर तरन, पावै कहा जहाज ॥४२॥

सवैया

नाहक ही बकवाद बक्यो सु कहा रस मों कँह या चरचा में ।
राजकुमारि थकायो तुम्हैं मै सरोज से पांइ कठोर धरा मे ॥
सो अपराध अगाध गन्यो अब ता कहँ कैसेहु मेटन पावैं ।
जो कछु आपुन के मन में अभिलाष कहौ तुरतै करि आवैं ॥४३॥

सोरठा

हेम हस नरनाह, गह्यो मौन ये बचन कहि ।
दमयन्ती मन माँह, अभिप्राय जान्यो चहत ॥४४॥

सवैया

लोचन ऐंचि लजाइ गई तिरछी मुरिकै मुसक्याति छबीली ।
राजकुमारि बिचारि कछू मन बोलि उठी मृदु बात रसीली ॥
आपुन को धिग मानति हौ खग चापलता बस है गरबीली ।
तोहि उड़ाइ दियो तट ते जिमि बात लगे लहरी झुकि झीली ॥४५॥

चचरी

स्वच्छ राजत रावरी तनु आरसी परभाइकै ।
है लग्यो अपराध मो तन माँह यों सरसाइकै ॥
रावरे समुहे भई जब हौ तहीं चित लाइकै ।
सो पर्‌यो प्रतिबिम्ब ता महँ पाप है न सुभाइकै ॥४६॥

मल्लिका

पाप मैं कर्‌यो बिचारि । ग्यानहीन हौ कुमारि ॥
सो छमा करौ मराल । देव रूपसी बिसाल ॥४७॥

सवैया

तेरे स्वरूप सुधारस पान ते प्रीति न और बढ़ो जिय मेरे ।
ज्यों जग के सियरावन लोचन चंद पियूष मयूखन हेरे ॥
जो जिय ते निकसै न मनोरथ सो न कह्यो परि बैन घनेरे ।
कौन कुमारि कहै द्विजराज सों ब्याह की बातनि लाज के घेरे ॥४८॥

मालाधर

बचन सुनि कै तहीं कनक हस मोह्यो महा ।
सरस नहिं दाख यों पिक नवीन बानी कहा ॥
बदन लखि लाज सों नृप कुमारि जानी जही ।
मुदित मन ह्वै तहीं चतुर चारु बानी कही ॥४९॥

[हंस बचन]

सोरठा

अति दुर्लभ जग जानि । धर्‌यो मनोरथ तैं जो मन ।
परत न मो स्रुति आनि । स्रुति आखर अतिम बरन ॥२०॥
जहँ चित पहुँचत आनि । होत लाभ ताको सुचित ।
जहँ न चित्त पहिचान । वहौ ब्रह्मजोगी लहत ॥२१॥

सवैया

सुंदर सोन सरोजमुखी तिरजंक सो लाज सजै बिन काजै ।
ब्रह्मपुरी महँ बास करै स्रुति सत्य बिलासिन के सँग राजै ॥
प्रेम महा परकै उपकार में नेम वहै छल कै बल आजै ।
जो चरचा चित माँह धरै किन प्रान टरै मुख सों नहि साजै ॥२२॥

दोहा

मृगलोचनि तजि सोच चित, औ सँकोचु कछु नाहिं ।
कहहु मनोरथ करि कृपा, त्रास त्यागि मन माहि ॥२३॥

सोरठा

यह कहि हेम मराल, मौन गह्यो गुनभौन तब ।
बोली बैन रसाल, हरखि लाज लीला ललित ॥२४॥

[दमयन्ती बचन]

दोहा

सखी जे मन सो मिलि रहीं, लखि न रहे मो जीय ।
सो तोसों कैसे कहौ, और न चाहौं हीय ॥२५॥

सवैया

कुल सील सुसैल ते छूटि चली उत लाज नदी उमड़ी अति भारी ।
जहँ मज्जतु नाग अनंग बली लहरी जहँ सोच सँकोच सँवारी ।।
बूड़ि गये नख ते सिख ता में रही चपिकै चुपि भूपकुमारी ।
हाटक हंस हरै हँसि कै निज चोंच सों चोज कथा बिस्तारी ॥२६॥

[हंस बचन]

सवैया

हौ चतुरे चित की कविता असलेष बिसेषन की रचनामैं।
जानि गयो हौं मनोरथ रावरो उत्तर की गति ब्यग्य दसामैं॥
राज सों ब्याह की बात भली नल हैं जिय मे यह भेद बतावैं।
तौ हिय की थिरता निहचै बिन क्यों तिन सों हम जाइ जतावै ॥५७॥
जोवन की यह बानि बनी छिन ही छिन ज्यों बदलै बहुधाई।
चाहत हैं तुमको सुर पन्नग राजकुमार चितै चतुराई॥
और सों ब्याह करै तुअ तातु जो कै चलि कै तुमही ललचाई।
ठीक करे बिन क्यों कहिये सरदार सों बूझि गँवार को नाई ॥५८॥

दोहा

और न या संसार में, लाज हँसी के जोग।
ठीक करत निज बदन सों, फेरि टरत जे लोग ॥५९॥
जो जाको कीबे कहत, काज न कीजै सोइ।
जीवन भरि ताके कहौ, कौनु सामुहे होइ ॥६०॥
तैं अधीन निज बाप के, आप तरुन वै बाल।
महाराज नलराज के, हम हैं मीत मराल ॥६१॥
सब बिधि है असमजसै, हिय ससय नहि जाइ।
और काज जो कछु सुमुखि, मोहि देहि फरमाइ ॥६२॥
सिर कँपाइ कुहकी कँपी, कोमल राजकुमारि।
मनौ परे श्रुति कटु बचन, तिन्हैं निकारत झारि ॥६३॥

[दमयन्ती बचन]

हरिप्रिया

बीर हेम हंसराज, धीर बुद्धि के समाज,
मोहिं और राज जोग कल्पना जु तेरो।

याहि जानि वेद थामि रबि सों निसि सँग आनि,
समय पहिचानि ताहि प्रनव पाठ पेरो॥
ज्यों सरोजिनी बिहाइ रबि को ससि सों मिलाइ,
गिरिजा तजि गिरीस जाइ तौ यह बनि आवै।
मेरे जिय है अदेस तोसों चातुर सुदेस,
ऐसो बलि बिरस बैन कैसे कहि आवै॥६४॥

सवैया

सोँच बिचार करी तुमहूँ खग झूठ न तेरो कह्यो करिहौगी।
जो न मिलैं नल मोहिं अबै तजि देह तबै अनलै बरिहौगी॥
गात को पालक है इक तात जो और सों ब्याहै न तो डरिहौगी।
प्रान को पीतम है वह राज हिये धरि जीतब क्यो करिहौगी॥६५॥

सोरठा

यहै मनोरथ सार, दासी हौ नलराज की।
चित चिंतामनि छार, वहै सकल निधि पदुम सुख॥६६॥

सवैया

भूप को रूप अनूप मनोहर स्रौन सुधारस पान करयो।
चित्र में बार हजार लख्यो अब तौ रहतै चहुँ ओर खरयो॥
तब होहुँ भई तनमै धनमै छनमै मनमै अरराइ परयो।
अब ताको सयोग औ प्रान बियोग तिहारे दुहुँ कर मोह धरयो॥६७॥

दीपक

हैं दीन मो प्रान, दे मोहि जो दान।
सो छोड़ि जंजाल, संदेस की चाल॥६८॥
जो काज आवश्य, ता में न आलस्य।
हे हंस भूपाल, आधीन हो बाल॥६९॥

कुकुभ

जानति हौ यहि भूमि लोक बसि मोह बुद्धि सरसाई है।
परउपकार रीति तौ जानी जहँ ऐसी चतुराई है॥
प्रान दान दीबे को पन में कहा सूम ह्वै बैठ्यो है।
बचन अधीन एक तेरे हौं कौन दोख ह्वै पैठ्यो है॥७०॥

सोरठा

देत आपने जीव, सब सज्जन आरतन हित।
कहा होत गुन सींव, मो जिय मोको देत तुम॥७१॥

सारग

जो जीव के दान को देत संसार। तौ आपनो जीव दे होतु उद्धार॥
तू देतु है मोहि को जीव ते बाढ़ि। हौ देउँ का तोहि दारिद्र सों ठाढ़ि॥७२॥

सवैया

मोल लै जीव तैं मेरो मराल जु और न लाभ तौ पुन्य महा है।
पीतम प्रान को दानि तुहीं जस गान करौगी सुजान सराहै॥
एकहु कौड़ि के मोल सुने नहिं अज्ञ कृतज्ञन को चित चाहै।
प्रान दै मोल खरीदत साधु तिन्है सहते तबहूँ निरबाहै॥७३॥

कडुक

वहे भूप है आठ लोकेश को अंस।
धर्यो बुद्धि सों ध्यान मै चित्त मे हंस॥
करी यों कृपा तैं मिल्यो मोहि आचान।
भयौ आनि मध्यस्थ मों ज्यों समाधान॥७४॥

सोरठा

करौ न और बिचार, बासर नाहिं बिलंब को।
कहा समय निरधार, जे आरत आसक्त हित॥७५॥

मनहरन

निज रमनीन सों करतु है बिलास जब,
तब ये बचन खग भूलहूँ न भाखने।
जल सों अघात ताहि अमिरित सोहात नाहिं,
दूजे कोई कलह करन लागै ता खने ॥
जब काहूँ दोष रोष करै नलराज तब हूँ,
ये रसराज बैन चित्त रोंकि राखने।
मो हित गरज ऐसे भूप से अरज बड़ी,
बरजत या ते हंस मो सम कुराखने ॥७६॥

प्रमिताक्षरा

बहु विघ्न आपु तिहि लोक गैन । सुभ काल पाइ करिये सुबैन ॥
कहुँ है बिलम्ब करि सिद्धि जहाँ । कहुँ असिद्धि सम जानि तहाँ ॥७७॥

दोहा

कहे बचन ये लाज तजि, नहि अचरज जिय जानि ।
काम सखी उन्मत्त करि, जो कहवावत आनि ॥७८॥

सोरठा

लहत जबै उन्मत्त, गहत चैन तब हर समर ।
प्रथम पुहुप अनुरत्त, बिरह बिथा जुत दूसरो ॥७९॥
सुनि ये बैन बिसाल, दमयन्ती के प्रेम दृढ़ ।
फाँसी नलगुन जाल, तब बोल्यो सुर-हंस हँसि ॥८०॥

[हंस वचन]

मोदक

जो यह सांचिय बात बखानति । तौ न संदेस वृथा उर आनति ।
जो तुमको नल को तनु तावतु । काम यहै सुसंयोगु बनावतु ॥८१॥
तो संग बाँधि दई गति औ मति । भोजन भूषन को न रही रति ।
ध्यावत तोहिं करै उपवासनि । ओंठ सुधारस आस हुलासनि ॥८२॥

दोधक

सुदर तामस मूरति मेरी । जारि सुछार करी हर तेरी ।
क्यों नल मूरति यों सु तपावै । तो सह पाइ अनग सतावै ।।८३।।
तेरिये मूरति एक लिखावै । सो कु-चितेरन को सिखरावै ।
देखत आँसुन की झरि लावै । सो छवि देखत ही बनि आवै ।।८४।।

सवैया

तेरे वियोग भयो कछु ऐसो उदास नलै न परै वह चीनो ।
तेरोइ चित्र लिये निसि बासर बैठो रहै रंगभौन प्रवीनो ।।
चानक भूमि झुक्यो तकिया लगि घूमि गिर‍्यो त्यों खवासिनि लीनो ।
पाटि लयो घनसारनि ते इक बारहि नाइ गुलाबनि दीनो ।।८५।।

दोहा

लसत कमल दग अधखुले, अचल अग ढुकलाइ ।
तेरी चिन्ता सों रह्यो, चिन्ताहरन भुलाइ ।।८६।।

सवैया

राह बिचारन की चलि दौरत साजि मनोरथ तैं सरसाइकै ।
स्वासनि को बरषै बहु भूपति ध्यान सों तेरो स्वरूप मिलाइकै ।।
जागत ही सब बीतत रैनि रचै किन सुंदर सेज बनाइकै ।
तेरे वियोग ते नैन न लागत नवल बहू जिमि नींद न आइकै ।।८७।।

दोहा

ज्यों ज्यों अति कृसता बढ़ति, त्यों त्यों द्युति सरसात ।
दगदगात त्योंहीं कनक, ज्योंहीं दाहत जात ।।८८।।

मनहरन

तेरे पाइबे को सौ जतन करतु तामें,
पाप न गनत कछू ऐसो आसक्त है ।
ब्याह चरचा मे तेरो नाम कहि कहि,
उठत महाराज कहूँ ऐसो मसकतु है ।।

मयन के लगत पैने बान सुलगत,
बिरहागिनि जात जरी लाज सिसकतु है ।
भौन भौन याही के करत अफसोस सब,
कोन कोन देखत करेजो कसकतु है ॥८६॥

सवैया

बोलत जानि कहै कछु उत्तर डोलत तोहि लखै तित धावै ।
आवत जानि कै आगे चलै उठि गावत तोहि गनै मिलि गावै ॥
रूसती हौ बिन काज कहा बलिया कहि बारहिं बार मनावे ।
बीर सो तोहि न पीर अरी सुनि तीर खरी हँसि कै बहरावै ॥९०॥

सोरठा

तेरो बिरह अपार, जनु यम-अनुजा की लहरि ।
पक मूरछा सार, हाय पर्यो कुंजर नृपति ॥९१॥

दोहा

दुहुँ कर छोड्यो पंच सर, भई दसा दस तासु ।
सदा जाइ दसई दसा, बैरी सदन निवासु ॥९२॥

प्रद्धटिका

जब भयो काम तापित महीप । तब मोहिं पठायो तव समीप ।
किय सफल काज गजगौनि तैं जु । मुख उदित भयो नल संग मैं जु ॥९३॥
धनि धन्य देवि गुन रतनखानि । जेहि कर्यो भूप नल बस सुजानि ।
यह बड़ो बड़ाई चंद्रिकाहि । अति तरल होत लखि सिंधु जाहि ॥९४॥

सवैया

नलसों बिलसो मिलि चद्र ज्यों जामिनि त्यों तुमसों मिलि सो सुख पैहै ।
बलि ये रचना कुच कंचुकि पै सब बेलि नई कर कौल बनैहै ॥
निज लोचन चारु चकोरनि सों जब वा मुख चद्र सुधाहि अचैहै ।
तब और सबै सुधि भूलहिगो पर नेसुक मेरो कह्यो सुधि पैहै ॥९५॥

तेरे चिकुरनि के सरनि करि बान धरयो,
भाल में धनुष टूक द्वै करि बनाइकै।
हर के नयन कुंड अनल बरत ता मे,
आपनो सरीर धीर होम्यो हरषाइकै।
सुबरन सैल कुच रावेर मकर पत्र,
ताही को परनसाला रही ठहराइकै ॥१०१॥

पद्मावती

बातन रस भीनो हंस प्रबीनो, सरस भेद निज भाखि कहे।
त्यों ही सब आली अति चल चाली, आइ गईं पग खोज गहे ॥

[हंस बचन]

मै बार लगाई देहु बिदाई, निषधराज ढिग जान चहौ।
सब सुखनि बिलासौ प्रेम प्रकासौ, राजकुँअरि तो चरन गहौ ॥१०२॥

सवैया

मोहन मैन के बानन के मधु सों मिल ये अति ही सरसाइकै।
माखन से कहे बैन मराल वे काननि बाल पिये न अघाइकै ॥
स्वाद ही स्वाद विषाद बढ्यो बहु बाद परयो पिय की रुचि पाइकै।
तापर रँग चढ़ी तन मोंह रही मनमें छन मूरछा छाइकै ॥१०३॥

सोरठा

गयो गगन मग खूंदि, छिनि मो हाटक हंस तब।
ऊरध मुख द्ग मूदि, रही सबै छबि की चमक ॥१०४॥

मोदक

पाँखनि अग्र उठावति आवति। कारज की जनु सिद्धि बतावति।
यों नल पास बतावन को खगु। नैषध देश चल्यो गहि कै मगु ॥१०५॥

सोरठा

घेरि सखी सब साथ, दमयन्ती को लै चलीं।
गहे हाथ सो हाथ, दुर्गम लखि मखती खिझी ॥१०६॥

लख्यो हंस नृप आनि, वही बगीचा बीच गृह ।
नेकु न परत पिछानि, नव किसलय दल तलप पर ॥१०७॥

मालिनी

जलजनयनि मोंको देहि सजोग नीको ।
तुम बिन सब लागै राज के साज फीको ॥
बकतु बिरह मातो आउ रे ! हंस भाई ।
तबहि प्रनति करिके हंस बानी सुनाई ॥१०८॥
नृप उठि उर लायो चूमि कै चोंच पोंछ्यो ।
निज कमर दुपट्टा छोर लैके अगोछ्यो ॥
बचन सब प्रियेके बार बारै कहाये ।
सुनि सुनि अपनेहूँ कंठ सों राज गाये ॥१०९॥

सोरठा

गई सखी लै गेह, दमयन्ती को बिकलहै ।
परबस करी बिदेह, नेह सिंधु बूड़ी बढ़ी ॥११०॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ हंससमागमो नाम चतुर्थस्सर्ग ।



पंचम सर्ग

दमयन्ती-विरह-वर्णन

दोहा

सर्ग पाँचवें में बिरह, दमयन्ती संताप ।
राजन को बोलै पिता, ब्याह उछाह प्रताप ॥

सोरठा

बिलखि सखी मुरझाहि, दमयन्ती को बिरह लखि ।
तनु सँभार कछु नाहि, कहहि परस्पर दुःख बचन ॥१॥
नल को गुन गुन आनि, सुजस कुसुमधनु रूप सर ।
श्रुति संजोग सो तानि, मारेउ याहि अनंग हठि ॥२॥

द्रुतबिलम्बित

अतनु ताप तई तन में रहै । प्रिय कथा रस मज्जन को चहै ।
अहह दाह परै तेहि रंग में । विषम आनि चढ़े सब अंग में ॥३॥
मुख न सुद्धि करै कहुँ हाँस की । चित रही नहिं हाँस हुलास की ।
करत दारुन दुःख अनंगु है । नयन खंजन की गति पंगु है ॥४॥

तोमर

छिन ही छिन काम संताप तयो । मुख पंकज सों कुम्हिलाइ गयो ।
नहिं देखत हू पहिचानि परै । दिन के ससि की समता निदरै ॥५॥

अहीर

तरनि तरुन बय कीन । घट उरोज दृढ़ पीन ।
अनल संग करि हाल । तपवत काम कुचाल ॥६॥

दोधक

उरू दुश्रौ बिरहानल दूखी। कसर की कदली जनु सूखी।
हाथन की उपमा परकासे। श्रोज तुखार सरोज तपा से ॥७॥

तोटक

जब काम संताप भर्यो उंर माही। नहिं होत जु टूक हियो बहुधाही ॥
जनु गाढ़ उरोजनि दाबि दयो है। मुख लागि रह्यो अपराध नयो है ॥८॥

सोरठा

गढ़त पाँइ जब आइ, बड़ी बिथा सी करकरत।
क्यों न पीर सरसाइ, या के हिय भूपति चुभ्यो ॥९॥

गीतिका

तनु माँह पीतम के बिलोकन काज को अकुलाइ कै।
जनु जात हैं उलटे बिलोचन चित्त अंतर पाइ कै ॥
ससुहे खरी सखियाँ रहै निसि दिवस यों सरसाइ कै।
नहि नेक जानि पिछानि मानत यों रहैं लटकाइ कै ॥१०॥
कर कमल राखि कपोल सुन्दर सोचु सों आनन नयो।
दृग नीर पूर पर्यो तहाँ प्रतिबिम्ब सों छतियाँ छयो ॥
हिय माँह राजत राज है प्रिय प्रान इहि आनन्द भयो।
निकस्यो मनो तेहि भेटिकै हुलस्यो मनो चुम्बन कियो ॥११॥

तारक

बिरहानल सों मन मान मिताई। नित पवन बढ़ावत आनि सहाई ॥
हिय जात न रूप कछू दिखरावै। जब आवत सांसनि बेगि बढ़ावै ॥१२॥

चन्द्रमाला

ज्यों ज्यों बिरह व्यथा तनु कोमल बाढ़त ताप समाजै।
छिनहीछिन रँग पीतस्यामसित हरितलाल छबि छाजै ॥
चहूँ ओर किरनैं सरसाती दीपति पुंज उजेरे।
मनौ लिखी चहुँ दिसि में है पिय मूरति चित्र चितेरे ॥१३॥

दोहा

कुच अञ्चल काँपत रहत, मयन दसा उर देखि ।
को न दुखी जग होत है, निज आश्रय दुख पेखि ॥१४॥

शोभन

आनन लोचन कर पग मोचन सजे कमलमै सरस बने ।
ताप बढ़ावैं ज्यों अकुलावैं रबि संजोग सों धाम सने ॥
बाननि मारैं हियो बिदारैं निरदै मन्मथ बैर पर्‌यो ।
अगनि डाढ़े त्यों त्यों बाढ़े यहि अनीति सों फूलि फर्‌यो ॥१५॥

भुजङ्गप्रयात

निसानाथ पून्यो लखे भानु जानै । करै दीह सताप सों आज मानै ।
नहीं टूक द्वै होतु हैं क्यों कछू तै । वियोगीन को ज्यों खरो बज्रहू तै ॥१६॥

[बिमला सखी बचन]

सोरठा

अहो अहो रतिनाथ, तीनि भुवन तुम सों तपै ।
अति अद्भुत गुनगाथ, जिन छिन में ऐसी करी ॥१७॥

सवैया

हाइ दई न बिछोह करै छिन जीवन क्यों न रहै हरखान्यो ।
कौन सहै सखि याको दसा यह आवत है लखि जी अकुलान्यो ॥
चन्दन सों छतियाँ लगि बोरि उरोजनि मध्य सरोजनि आन्यो ।
लागि रही बिरहागि चहूँ दिसि सेज पै सोवति है रति मान्यो ॥१८॥
बिरहागिनि की महिमा अजहूँ लगि जानति है न हियो अनुरागी ।
निज प्राननि को तिन तूल तहाँ करि ताहि बुझावन के रस पागी ॥
जहँ फूल की साँट नहीं है लगी चित कोमल राजकुमारि सभागी ।
तहँ काम के सूल सहै सगुहे उर गाढ़ उरोज सरोजनि आगी ॥१९॥
मूँदि दरीचिन दै परदा सिदरीन झरोखन रोकि छुपायो ।
नेकु परै न कहूँ लसि कै ससि की किरनै परवेसु न पायो ॥

भौन के भीतर आवन को बिसहारनि के मिस रूप बनायो ।
लावत ही तन में जर झार बिकार हजार गुनी सरसायो ॥२०॥

तोटक

निशि द्योस रहैं यह ग्रीव नये । अरु तुग उरोजनि अश्रु छुये ॥
प्रतिबिंबित लोचनि ओठ भये । जनु काम सुरंगित बान हये ॥२१॥
अँसुआ दृग उज्जल जात ढरे । अति लाल कपोलनि आनि परे ॥
प्रतिबिंबित होत तहाँ ससि है । अपनो सम जानि रह्यो बसि है ॥२२॥

नाराच

कपूर चूर छानि कै मलैज पंक सानिकै ।
कर्‌यो सुअंग राग लेपु सीत हेत मानि कै ॥
छुटे रहैं महा घने भुजंग केस साँवरे ।
मनो मनोज सों डरे महेस स्वाँग को करे ॥२३॥
गल्यो सरोज हाथ सों चल्यो उरोज पै धरै ।
लहीं उसास सो जर्‌यो सुछार ह्वै गिरो परै ॥
नरेस प्राननाथ के सुहाथ लागि हैं जहीं ।
प्रलेपु सेकु सो हिये सतापु जाइगो तहीं ॥२४॥

मोदक

हौं हिय हू नहिं आनहि चाहति । एक नलै मन राखि उमाहति ।
सोह करै बिरहागिनि में तपि । शुद्ध सरीर सचौटी करी चँपि ॥२५॥

दोहा

बिरह ताप तनु में लगत, कमल कली है त्रात ।
मानौ भरि मूठिन बिथा, गहि डारत सरसात ॥२६॥

[रूपमञ्जरी सखी बचन]

सोरठा

अरी कहौ कित जाहि, कहा करैं कैसे रहैं ।
जिय आसा कछु नाहि, देखत ही याकी दसा ॥२७॥

लगि अनग अहि बान, विष फैल्यो तनु में बिवस।
देखत रहत न प्रान, करुन सिन्धु बूड़त न को ॥२८॥

सवैया

पिक बोलत काँपत है हियरा तहँ लोल सिवार लता लपटाई।
हिय काम के केत धर्यो तनु मानहु कै तेहि तापर धूम मचाई॥
मुख साँचु ससी मनि सों बरनो यह भूपति की तनया छबि छाई।
लखि होत उदोत सखी जबहीं तब नयनन सों जलधार बहाई॥२६॥
आजु लौं आस रही हुति जो अब तौ कछु सांस चलै ढँग औरै।
नेकु परै न रह्यो घर में यह देखि दसा भरमै मति बौरै॥
ऐसि भई नित आन महा चलि हेरि हहा कछु मो हिय औरै।
ठाढ़ो करै परिचारिक तौ घरि चारिक लौं पियरो रँगु दौरै॥३०॥

[मानमञ्जरी बचन]

सोरठा

ज्यौं रति पति को बान, त्यों मोहन यह नृपसुता।
चाहत कर्यो निदान, यहू याहु की पचता॥३१॥
कीजै दौरि गोहारि, समर करन आयो समर।
लीजै याहि उबारि, याके जीवत जीवनो॥३२॥

सवैया

पावक बान कर्यो ससि को पहिले करि ओज मनोज चलायो।
त्यों जलधारनि को असुआ इन अंबुद बाननि बोरि बहायो॥
बारुन बान चल्यो नव नीरद ज्यों उतते इतको फुरि आयो।
दीरघ सांसनि सों इनहू तजि तीर समीरनि मारि भगायो॥३३॥

दोधक

दच्छिण पवन चली तरवारै। टूकहि टूक हियो करि डारै।
ता कहँ सॉप मृणाल धरे हैं। पौनन के जिन कौर करे हैं॥३४॥

चौपाई

द्वै दुख दुस्सह दै बिधि याको । बिरह एक औ जीवन ताको ॥
ऊपर दाबि दुओ कुच ठाढ़े । बेधत गॉस गडे उर गाढ़े ॥३५॥

दोहा

लीन्हे तीर चलाइ सब, समर समर धर धीर ।
गहि मारे द्वै ताल-फल, तब छाती पर बीर ॥३६॥

[नेहमञ्जरी सखी बचन]

सोरठा

सुनि सुनि सखी कलाप, बिकल सखी जन जे करहि ।
बरी बिरह संताप, पल उठाइ चितई कुँअरि ॥३७॥
बार बार ससि हेरि, करन लगी ताको कुजस ।
राहु बड़ाई दे रि, बोली उभकौहे नयन ॥३८॥

[दमयन्ती बचन]

तोमर

सखि नेह मंजरी लेह । ससि सों तपी सब देह ।
नहि रैनि ग्रतु लखाइ । जुग चारि सों छिनु जाइ ॥३९॥
नर गीरबान बिरंचि । जुग होतु है जिमि संचि ।
रति युक्त को छिनु जौनु । युग है वियुक्तनि तौनु ॥४०॥
हिमवान मो जनु लीन । गिरिजा जहाँ तप कीन ।
उर काम को डर मानि । नहिं सैल को सुचि जानि ॥४१॥
सिव माल पै नहि आखि । जैहैं तहाँ सब साखि ।
बिरहागि जागत जोर । बिछुरी प्रिया तेहि ठौर ॥४२॥

[नेहमञ्जरी बचन]

द्रुतविलम्बित

अगिन की लपटैं इमि हैं नहीं । बिषमझार बिरह जिमि है कहीं ।
बिरह सों जुवती अतिही डरैं । मृतक ले हँसि पावक मे जरैं ॥४३॥

[दमयन्ती बचन]

सोरठा

राखी हिय घर घेरि, कलाकलुष बिरहिन तपन ।
दई निकारि नवेरि, जे जग उज्ज्वल पाप ससि ॥४४॥

लक्ष्मीधर

दौरि कै चन्द्र सों बूझि आली हहा ।
दाह के दान की शक्ति पाई कहा ॥
सिंधु में कालकूटै मिली है जहीं ।
बाडवागीनि सों कै सिखी तैं यही ॥४५॥

दोहा

दै मार्‌यो निधि चन्द्र को, स्याम सिलान मझोर ।
फैलि रही किरनै मनो, तारागन चहुं ओर ॥४६॥

[दमयन्ती बचन]

दोहा

अरी जरी सब अंग मै, घरी बरष ज्यों जाइ ।
चहूँ ओर दौरी फिरै, जोन्हपिसाची धाइ ॥४७॥

[शृंगारबेलि सखी बचन]

सवैया

चंदन चारु चबारेन माँह तुषार मिले घनसारनि सानो ।
मेह महा बट से बरखै चहुँ ओरनि नीर गुलाबनि सानो ॥
कै गचगोरिन के नियरे सिगरे नव कौल पतान बितानौ ।
ले चलि राखहु याहि इहाँ रचि माह की रैनि नयो तहखानो ॥४८॥

लक्ष्मीधर

जाइ कै बास को साज साज्यो जहाँ ।
याहि लै हाथ ही हाथ राख्यो तहाँ ॥

मैन के बान को त्यों निसान्यो भयो ।
सूर ज्यों घाइ पै घाइ सामू लयो ॥४६॥

[दमयन्ती बचन]

सोरठा

दौरि सखी समुझाइ, चदहि मेरी ओर ते ।
ये रे कूर सुभाइ, कहा करत ऐसे करम ॥५०॥

सवैया

सागर में गिरि मदर सों दबि क्यों न कलकित चूर भयो ।
कुंभज क्यों न तुरतहि तै जल घोरि गेदौरा सों लीलि लयो ॥
मन मेरे को चाहत है अपनायो मैं प्रान पयान बिचारि ठयो ।
नल के मुखचन्दहि जाइ मिलौ यह पंडित काम बताइ दयो ॥५१॥

तारक

जग में यश को बजवाइ नगारो । करि सागर के कुल को उजियारो ।
बध पौरुष ले गहि प्रान हमारो । ससि लांच्छन दै अब कै निरवारो ॥५२॥

[यौवनबेलि सखी बचन]

सुलक्षण

जब चंद असु अथोत हैं । तब आनि ये रबि होत हैं ॥
अतिताप अगनि करत हैं । दिन होत रबि छबि हरत हैं ॥५३॥

[दमयन्ती बचन]

दोहा

करनाभरन तमाल दल, ससि कुरंग मुख देहु ।
ताहि चरन लागत थकै, तनक सम्हारो नेहु ॥५४॥

[यौवनबेलि सखी बचन]

सोरठा

समय चूकि मति होइ, आइ हाथ को गहि सकै ।
गहि राखौ अब सोइ, ससि को मुख नहि देखिये ॥५५॥

[दमयन्ती बचन]

तोमर

कर एक मे धनु लेहि । इक आइ आरसि देहि ।
प्रतिबिब में बिधु देखि । गहि मारु ताहि बिसेखि ॥२६॥

[मधुमालती सखी बचन]

द्रुतबिलम्बित

करत पूरन चंद्र प्रताप को । सुभद भाखत जोतिस पाप को ॥
कहतु नाहिन छीन सुधाकरौ । गनक पाप कुबुद्धिन आदरौ ॥२७॥

[दमयन्ती बचन]

सोरठा

लियो राहु जब लीलि, छोर्‌यो निज रुचि सों न यह ॥
पछिया सों ठुरि ठेलि, गिर्‌यो गरे के छिद्र ह्वै ॥२८॥

[रूपमालती सखी बचन]

झूलना

चक्रकर आपु धरिराहु सिर काटि हरि,
पापु यह आनि बिरहीन दीन्हो ।
जठरगिन राहु के पंचतनहि जाइकै,
तबहि यह आनि इत उदै लीन्हो ॥२९॥

[दमयन्ती बचन]

गगनागना

सहचरि बूझौ जरा सों बिनति बचन मम सुनिये ।
जैसे जरासन्ध तनु तमसिर सिखि युत गुनिये ॥६०॥

सोरठा

कहु तम सिर सखि टेरि, ब्राह्मन गन बैरिहि तजतु ।
पतितु ससिहि निरबेरि, नितप्रति सेवत वारुनी ॥६१॥

दोहा

द्विजपति ग्रसि कोढी भयो, स्वेत राहु यह आनि।
बिरहिन मुख ससि ग्रसत को, अमतु न ससि भ्रम मानि॥६२॥

[काममालती बचन]

सोरठा

उवतु इंदु अति दूरि, उपालम्भ ताको कहा।
निकट काम हिय भूरि, ताही को कहिबो उचित॥६३॥

[दमयन्ती बचन]

नाराच

भले मनोज कौन चालि रावरी कही बनै।
रहौ हिये जहाँ तहाँ सुदाह देत हौ घने॥
सुजात-वेद ज्यों सुआनि आसरो करै जहाँ।
जराइ देत ताहि नासु आप हूँ गहे तहाँ॥६४॥

तोटक

रति के सहचारि सदा तुमहो। पर मो तन मै रति क्यों न लहो॥
बिरही तन को अति तापत हो। तिय हूँ यह जानि सरागत हो॥६५॥

झूलना

हर नयन सों छुटि ज्वाल सों जुटि जरत तब तन देखि।
तब दौरि कै बिरहीन कै हिय पैठि जात बिसेखि॥
मिलि ताहि दाहत हो तहाँ तुम हे मनोज कठोर।
पल एक हूँ न परै कहूँ कल पीर जागत जोर॥६६॥

[चित्रती सखी बचन]

सरसी

फूलनि के करि बान लरे तुम सिव सों सो फलु लोन।
फूलन हूँ को समर भय नीति प्रकासित कीन॥

पियो पियूष सकल देवन मे अमर भयो क्यों नाहि ।
रति के अधर स्वादु रस मात्यो पियो न तैं चित चाहि ॥६७॥

दोहा

देत न मीचु अनंग सठ, गिरत धनुष नहि पानि ।
मृतक मूॅठि ज्यों दृढ़ गही, मूँठि रह्यो गुन तानि ॥६८॥

[दमयन्ती बचन]

सरसी

ज्योति होति दृग मीचु बसै तनु रूप प्रकासित होइ ।
काहू सुर सेवा के कीन्हे तुरत यहै फल सोइ ॥
धनि धनि देव तिहारी सेवा फूटि जात चख चारु ।
अति बिरूप तति देह पंडु अरु चलत मोच परिवारु ॥६९॥

[चित्रकला सखी बचन]

तोमर

बिधि जानि तोहि नृसस । किय फूल आयुध अस ॥
दृढ़ चाप जो सर होत । तब तीन लोक नसोत ॥७०॥

दोहा

हर ज्यों हारे तीन पुर, तीनों लोक मनोज ।
जानि परै बिधि जानि सर, मधु सों सींचतु रोज ॥७१॥

सवैया

रावरे बानन के बिसमेसु बिरंचि रच्यो सजि कै सु निसान्यो ।
ज्यों बिरही जन को परमानु दियो अति चंचलता सरसान्यो ॥
ता कहँ टूक हजार कर्‌यो छिन एकहि में करि क्रोध रिसान्यो ।
केसरि सी मृदु मोरि सखी रि भई छनि ता छति या उपमान्यो ॥७२॥

मधुभार

बिधि पुहुप आन । दिये पंच बान ॥
तेहि जरत जोइ । सब जगत रोइ ॥७३॥

[दमयन्ती बचन]

सोरठा

तेरे देखि सुभाइ, छीनि लयो धनु दै बिधिहि ।
कुटिल भुकुटि नल पाइ, फेरि धनुर्धर तैं भयो ॥७४॥

द्रुतबिलंबित

क ऋतु सों तुम माँगतु जाइ कै । पुहुप लै एकु येकु बनाइ कै ।
करतु बान तिन्है तुम पंच सों । धनुष एकु कर्यो पर पचसों ॥७५॥
अतनु हो तुम जो हरि के किये । परम आनद सों सब के हिये ।
सतनु ह्वै धनु जो धरते कहूँ । सरन तो मुनि की सहते कहूँ ॥७६॥
गिरिस पै रिसकै सर जो तजौ । तुम समेत सु भस्म दसा भजौ ।
करतु मोहन मत्र विधानु है । ह्वै पिकस्वर पचम बानु है ।
बिमुख होत ससी लखि कै उयो । बिरहिनी जनजे हियारा तु यो ।
लगत दक्षिण मारुत बाम है । पनच ऐंचति जो भुज कामु है ॥७८॥
मदन अन्ध बियोगिनि मीचु है । बजर सों निर्दय हिय नीचु है ।
तुमै एक पै जीति सिवै लयो । मदन अंधक मृत्युजयी भयो ॥७९॥

[मोहनमाला सखी बचन]

सवैया

एक तो कोमल अग हुती बिरहागिनि सों अति छीन भई हौ ।
पुनि बादहि बाद किये अधरामृत सूखि गये कुँभिलाइ गई हौ ॥
चौरँ करो उत बीजन डोरि धरौ रि तु ठाढ़ कहा सुठई हौ ।
बोलौ न आपु कहौ कर जोरि कै देखति हौ कछु मैनमई हौ ॥८०॥
पाँइ परौ बलि जॉऊ हहा तुम ऊपर लै इन प्रानन वारौ ।
क्यों न कठोर फटै छतिया यह तेरि दसा निज नयन निहारौ ॥
ज्यों अकुलाइ उठै अति यों उठि कै नभ नैषध देस सिधारौ ।
सौ छल के बल सों नल को गहि चांदनी सों तुअ पायन पारौं ॥८१॥

बैठि कहा चहुँ ओर सबै उठि मजुल कजन सेज बिछावौ।
चन्दन सों लिपि रावटि दै परदा चहुँ ओरन चन्द दुरावौ॥
बीजन की इत डोरि गहौ उत बोरि गुलाब सिसी ढरकावौ।
फूलन काज पठै उनको तुम बैठि इतै तारवा सहरावौ॥८२॥
एक अली नल बेष करी रग केसरि सों सब अंगन बोरी।
एक दमयन्ति स्वरूप बनी चुनि रगित चीर सजी चहुँ ओरी॥
लै पिचकारो चले इतते उतते ले गुलाब मुठी वह दौरी।
हेरि इहा सखि तो मन भावतो भावती के संग खेलत होरी॥८३॥
छिनही छिन सेज हजार सजै छिनही छिन सेज करै चरचा को।
छिनही छिन बीजन वै हरि कै छिनही छिन स्वांगन की चरता को॥
छिनही सखियाँ सिगरी सिगरो गहि पायन लोटि पलौटति वाको।
उपचारन को न सरै कछु काजु कहूँ न परै कल नेकहुँ वाको॥८४॥
ढूँढत सेज पै जानि परै पहिचानी परै नहि आंखिन आगे।
दौरि उपाउ करै सखियाँ सब भाइ खरी निसिबासर जागे॥
पानी उतारि उतारि पियैं उर धाइ बलाइ ले लै यह मागे।
जीवनमूरि तू मेरी जिये यह तेरी दसा लखि मो हिय लागे॥८५॥

[अनंगमाला सखी वचन]

दोहा

राज कुँअरि सुनि हित बचन, यतनन जीवो राखि।

[दमयन्ती उत्तर]

जीवहु मेरो सत्रु है, ताकी कुसल न भाखि॥८६॥

[कंचनलता सखी बचन]

दोहा

अमृत किरनि सखि है उयो, यासों कहा बिराइ।

[दमयन्ती उत्तर]

होइ कहुँ जो मृत किरन, तौ न ताप नियराइ॥८७॥

[रंगबिरंगिनी सखी बचन]

दोहा

बिधुबिरोध तिथि को रटै, पिक सों पिकवनि लेह ।

[दमयन्ती बचन]

कहा अरथ ढूँढे यहै, बोलि जरावत देह ॥८८॥

[रंगिनी सखी बचन]

दोहा

तेरो मन भावन अरी, है तेरे उर माँह ।
यहै बड़ो सन्ताप नहि, मिलत गेर गहि बाँह ॥८९॥

सोरठा

लागे देह उसासु, मन मन्मथ पावक बन्यो ।
बढ़ी मूरछा तासु, कहत कहत आधे बचन ॥९०॥

सवैया

आनन स्वेत हरो पियरो रंग नयनन रूप रहै बिलखानो ।
अगन तोरि मरोरि मुरी अलकैं खुलि फैलि रहीं सरसानी ॥
ज्यों तकिया ते झुकी उतको इत हाथहिं हाथ लये ठकुरानी ।
सेज पै पारि कुमारि सबै तब टेरि उठी अति आरत बानी ॥९१॥

प्रद्धटिका

कोउ दौरि सलिल मुख सींचि देइ । कोऊ सरोज दल झांपि देइ ॥
कोउ गहे बिजन कर करत पौन । कोउ सहरावत कर चरन तौन ॥९२॥
बहु किये सरिस उपचार सीत । सखियाँ बिलाप अति करैं भीत ॥
कछु करम करम कै दैव जोग । तनु भयो चेत निज भाग भोग ॥९३॥

[सखियों का संलाप]

सवैया

देखु कले ! कछु साँस चलै, मुख-नयनन्ह ते सु चले ! पहिचानौ ।
काँपत होंठ तके तुम मेनके ! बोलति कलपलते ! सुनि कानौ ॥

चारुमती ! तनु अँचर झाँपहि, केशिनि ! केसनि को गहि आनौ ।
पोंछि तरंगिनि ! नयननि सों जलधार बहै सरिता सर मानौ ॥१४॥

सोरठा

कमल-कली सरसात, आली जन आरत करत ।
सुनत बिकल भो गात, भीमभूप भीतर चल्यो ॥१५॥

मनहरन

द्वारिक महलद्वार ड्योढ़ी पै अचल रहैं,
भूरि दोष दूरि दोष करतु बनाइकै ।
एकु रहै नाजिर औ दूसरो सुअगकरु,
भूपति पै एकै बात कही सिर नाइकै ।
सुश्रुत चरक ताकी उकुति जुगुति जोर,
जानत हैं हम सब भेदनि सचाइकै ।
नलद सों याकी बिथा जाइगी छिनक माँहि,
सुनि चितु लाइ राजु रह्यो अकुलाइकै ॥१६॥
आवत हैं यों कहत तात दौरि पौरिजन,
सुनत ही तौहीं राजकुँअरि सकाइकै ।
दूरिहिं सो धरनि छूअत तसलीम करि,
सीम कुलकानि बिरहागिनि छपाइकै ॥
चितकी चलाति चरचतु हैं चतुर तिन,
जानी ब्याह जोग यों उछाह सरसाइकै ।
आसिस यों दीन्ही नखसिख ते सुखित रहौ,
लहौ अभिमत रहौ सुमन सुहाइकै ॥१७॥

दोहा

सुनि आसिष नृप जो दई, ब्याह उछाह उमाह ।
आनँद अंबुधि में भई, मगन सखी चित चाह ॥१८॥

बाहर आयो भूप पुनि, बूझि मंत्रि बर बेगि।
राज बुलावन काज को, भेजे चारन नेगि ॥९९॥
नव दीपनपति पुरनिपति, सकल देसपति जौन।
अमर जच्छ अहिराज सब, बोलि पठाये तौन ॥१००॥

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ दमयन्ती-विरह-वर्णनं नाम पंचमः सर्ग ।



षष्टम सर्ग

सुर-संगम

दोहा

छठे सर्ग नारद मिलन, वासव सदन समाज।
नल मारग छलसाज सुर, दूत काज सुरराज ॥

सोरठा

जौ लौं राज समाज, जुरै आइ कुंडिन नगर।
तबही श्री रिसिराज, नारद सुरपति गृह गये ॥१॥
पर्वत चल्यो सपच्छ, तेहि पछार अचरज नहीं।
नारद गुरु जग अच्छ, अति अद्भुत नभ जो चढ़्यो ॥२॥

प्रद्धटिका

मुनि चल्यो गगन बिनही बिमान। बहु भयो भानु ज्यों भासमान।
जन और चलत साधन बनाइ। तपसीन होत तप सिद्धि आइ ॥३॥
मुनि चल्यो लंघत सुरपुर बिमान। तिन करी प्रनति बहुधा समान।
किम अतिथि हेत आदर अपार। नहि कर्यो तहाँ कछु अंगिकार ॥४॥
लिय ऐंचि तेज जितनो दिनेस। मुनि देह लगत नहिं घाम लेस।
रबि हरी सोभ मुनिराज लेखि। द्विजराज हरी रबि सोभ लेखि ॥५॥

तारक

सुरसिंधु तहाँ बहु आदर कीन्हो। तट दूबनि दर्भनि आसन दीन्हो।
जल सों चरणोदक दै सुख पायो। सरसीरुह को मधुपर्क बनायो ॥६॥
सुनतै सुरनायक जू उठि धाये। बहु दूरिहि सोय गये सिरनाये।
मुनि सादर ही हँसि कै उर लाये। गहि पानि दुऔ प्रभु आसन आये ॥७॥

मौक्तिकदाम

सिंहासन उच्च तहाँ मुनि नाथ । करे थिति पूजन की बिधि साथ ।
गह्यो लघु आसन और सुरेस । करी बिनती कर जोरि सुदेस ॥८॥
मिलैं जब मित्र समाज अनूप । चलै तब चारु कथा बहु रूप ।
न आवत क्यों इत सूर महीस । चहै यह बूझन को सुरईस ॥९॥

[इन्द्र बचन]

दोहा

अब नृप बंसन में नहीं, उपजति बीर करीर ।
जे परहारिनि सों समर, छोड़ति धीर सरीर ॥१०॥
माटी से गुरुदेह सो, ऊरध गति नहि होइ ।
तजि आवत मेरे निकट, आदर गौरव जोइ ॥११॥

तोटक

अब वे इतको नहिं आवत हैं । रन क्यों नहिं तेज उपावत हैं ॥
नहि भावत इन्द्रपती मनिकै । अपने इक कारज की गनिकै ॥१२॥
बहु संपद ते विपदा नित ही । निज पूरब पुन्य मिली कितही ॥
जब पानि सुपातर के दिजिये । तबही लछिमी सुख को लिजिये ॥१३॥

दोधक

संसय दूरि करौ प्रभु मेरो । हौ तुव सेवक हो प्रभु मेरो ॥
बैन मनोहर राउर ऐसे । पाप हरैं अघमर्षन जैसे ॥१४॥

तोमर

यह भाखि वासव आपु । तब ह्वै रह्यो चुपचापु ।
दस सै सरोरुह नैन । मुनि ओर हेरत ऐन ॥१५॥
लखि इंद्र की मति धीर । सुनि बैन ज्यों गिरिकीर ।
तबहीं भये मुनिराव । परसन्न सुद्ध सुभाव ॥१६॥

[नारद बचन]

तोटक

सत यज्ञन सों तुम इंद्र भये। तिनके सम तौ तुम जानि लये॥
तेहि पै तुम दानन को उमहौ। धनि धन्य सदा तुम वासव हौ ॥१७॥

तारक

नहिं बैन न आवत ऋद्धि तिहारी। अति आदर की पदवी निरधारी॥
सब देखि परी निज नयनन जैसी। अभिलाष न राजसिरी पर ऐसी ॥१८॥

हंसी

श्री को चाहौ औरे दीनो अतिथिन पर अति करुन करी है।
इच्छा ही सों भोगै त्यागौ नयन सहस सब सिधि सिधरी है॥
तेरी बातैं मीठी मीठी सुनि सुनि तरल सुचित गति तेरी।
तीनौ लोकै पालौ नीकै धनि धनि धनि हरि मति तेरी ॥१९॥

सोरठा

समर सम्मु तनु त्यागि, इत आवत नहि राज ज्यों।
सो सुनिये चित लागि, कारन मैं बरनन करौं ॥२०॥

चर्चरी

भूमि में तुम सों लसै यक भीम भूपति भाग सों।
ऋद्धि सिद्धि विदर्भ देसनि जोग जाग बिराग सों॥
कन्यका तेहि के भई इक ताहि रूप अमोल है।
नाम है दमयन्ति यौवन वैस राजति सोलहै ॥२१॥

लीलागति

मन माँह चाहति है युवा वह जानिये नहि कौन है।
परमान से नहिं मान राखति मूँदि कै गुन भौन है॥
अब है भई वह ब्याह लायक चारु बेलि सिंगार की।
तासु तात चहै स्वयंबर कर्‌यो ठीक बिचार की ॥२२॥

पृथ्वी

मनोज नृप फेरि कै हुकुमराज जीते सबै ।
भये बस दमयंति के समर बात चालै कबै ॥
सुनै जु रुचि तासु की जित गुनैथवा भूषनै ।
करै नित अभ्यास यों सकल सिद्धि ताही गुनै ॥२३॥

दोहा

जे आभूषन दान गुन, वह तिय करै पसंद ।
तिनमें तनिकौ जो चतुर, सो सबमें सुखकंद ॥२४॥

तोटक

जबते वह यौवन बैस भई । रन की सुधि राजन भूलि गई ।
तिनमें मनमत्थ सिकार करै । तिनके मृग नयनन बाँधि हरै ॥२५॥
तिनके घर दूतिन की अरचा । नितही नित ता गुन की चरचा ।
यहि ते इहँ भूप न आवन हैं । तुमसों नहिं आदर पावत हैं ॥२६॥

चर्चरी

भूमि भूप सु-समर सों अति दूरि अतर जानिकै ।
हौं चल्यो इतको इहाँ रन रंग आनँद मानि कै ॥
को न जानत है तुम्हैं बहु युद्ध करत सुभाइ सों ।
ह्वै रहे चुपचाप बोलि मुनीस यों सुरराइ सों ॥२७॥

सोरठा

सुनि ये बचन बिसाल, महा मुदित मघवा भयो ।
होत सुभग रसबास, बचन रचन में प्रभुन को ॥२८॥

[इन्द्र बचन]

दोहा

सुनि ह्याँ राजत हैं सदा, मम सुअनुज दनुजारि ।
संगर की चरचा न है, सोवत पाँइ पसारि ॥२९॥

चौपाई

विस्वरूपता ताकी ऐसी । रीति रची जैमुनि मुनि जैसी ॥
सुर विग्रह जो सहत न नेकौ । व्यर्थ करौ मम असनि विवेकौ ॥३०॥
विनय-समुद्र सुधारस सानी । चुपकि रह्यो हरि कहि मृदु बानी ॥
तजि उलास मुनि भयो उदासी । तब बोल्यो रन-रंग-बिलासी ॥३१॥

[नारद बचन]

सवैया

सुरलोक रसातल युद्ध की आस ते भूमि निवास न चैन गहौ ।
अरु भूमि पताल के संगर सों नभ में नहिं ह्वै निहचित रहौ ॥
तुमको लखि मोद लह्यो सुर-नायक भूतल को अब जायो चहौ ।
करिये किरपा करि आयसु मोहि बहोरि इहाँ सुख आनि लहौ ॥३२॥

दोहा

दमयन्ती के ब्याह को, ह्वै है राज समाज ।
ते करि हैं संग्राम को, भूतल में मम काज ॥३३॥

प्रद्धटिका

यह भाखि चले तुरतै मुनीस । पग रोकि रह्यो बहुधा सचीस ।
गंधर्व कर्‌यो परबत प्रनाम । ऋषि बिदा कियो तब सक्र धाम ॥३४॥
घर इन्द्र आइ कियो सोच येह । केहि भाँति होइ दमयन्ति नेह ।
कर गह्यो बज्र अति कठिन जानि । मृदु गह्यो चहत दमयन्ति पानि॥३५॥
नरनाह काम को हुकुम मानि । सुरनाह चल्यो छिति ओर आनि ।
सिर नाय सची बिलखी अपार । जनु चहै चल्यो अबहूँ पतार ॥३६॥

स्वागत

इंद्र देखि छिति को अनुरागे । रंभ स्याम-द्युति आनन लागे ।
सेत बरन गति ऊपर भाषै । आपु हानि मनमें अभिलाषै ॥३७॥
दीह साँस मुख छोड़ि घृताची । प्रान मुक्ति के मारग राची ।
मुख मैनका नवावत रूखो । सीतबेलि जनु पङ्कज सूखो ॥३८॥

कह्यो तिलोतम हूँ तब ऐसे। गिरे हाथ ते चामर जैसे।
सुरपुर बास न योग हमारे। सुरपति आपु भूमि पगुधारे ॥३९॥
काहू सों कोऊ यों कहै। बैठी कहा बिचारति अहै।
कश्यप को सुत इद्र कहावै। कश्यपसुता ओर को धावै ॥४०॥

दोहा

अगिन बरुन जम ये चले, तीनौ सग दिगीस।
चलत एक आगे चले, पाछे सब दस बीस ॥४१॥

शिखरिणी

पृथक भेजी दूती सबनि दमयन्ती निकट को।
बड़ी भेजी भेटैं बिदरभ अवनी के सुभट को ॥
करैं ऐसे सेवा सकल सुर देवाधिप मिले।
चले चारौ भू को हरखि हियहू को मिलि-हिले ॥४२॥
जबै आये भूमै तुरग छन हू मे सुगति सों।
करी ऊँची ग्रीवा रथ धुनि सुनी एक मति सों ॥
चलै पारावारै चपल लहरी मेघ गरजे।
तलै आगे देखो नरपति लसै स्यंदन सजे ॥४३॥

सोरठा

दयो सारथी टारि, रथ हाँकत कौतुक सन्यो।
लीन्हो ताहि निहारि, नैन जनम को फल लह्यो ॥४४॥

दोहा

देख तरुन वय तासु की, बरुन भयो जड़ रूप।
जलपति को यह उचित है, बिसमय सरस अनूप ॥४५॥

हाकलि

सूरज को सुत ताहि निहारी। स्यामल रंग भयो यम हारी।
आजहु लौ तेहि को जगजालू। भाषत ताहि सबै कहि कालू ॥४६॥

पावक ताप गह्यो तेहि देखी । ता समता अभिलाष बिसेखी ।
रूप निरुपित कै गुन गेह । आजु लगे तेहि तापित देह ॥४७॥
कौसिक देखत ही तोहि रूप । जा सन हारत काम अनूप ।
कौसिक रूप भयो मन माह । नयन सहस्र न सूझत ताह ॥४८॥

मोदक

मूरतिवंत सिगार सोहावन । सुन्दरता तेहि को मनभावन ।
विस्मित देखि दिगीस भये सब । सोचि रहे मन माँह मवै तब ॥४९॥
रूप बिसेषन की परभा जब । भूषन भेष बने सुखमा सब ।
स्यंदन साजि चल्यो द्रुत आवत । देस विदरभै को समुहावत ॥५०॥

दोहा

अति उदार सुकुमार वय, तरुन न ऐसो ओर ।
कुंडिनपुर को जात है, साज स्वयबर जोर ॥५१॥

चौपाई

धरमराज सलिलेश हुतासन । भये हरख चल ताप प्रकासन ॥
प्रान रूप जल को नल देखे । आप माँह बोले सबिसेखे ॥५२॥

[यम बचन]

झूलना

लाभ नहिं दमयन्ति को हमको परी यह आनि ।
छोड़ि सुन्दर राज-भू यहि को बरै सुर आनि ॥
जो बरै तजि याहि हमको तौ न वह हम जोग ।
रूप और कुरूप को नहिं भेद जानत लोग ॥५३॥

[वरुण बचन]

कुमार लहरी

हमै तब बरै यहै । प्रभुत्व जब तौलिहै ।
न दीठि यहु धौ परै । सु कौन चरचा करै ॥५४॥

[अग्नि बचन]

संयुत

हमहूँ दुहूँ दिसि ते गये । घर के न बाहर के भये ।
दमयन्ति याहि बिबाहिहै । यहि के स्वरूप सराहिहै ॥२५॥

दोहा

बाहर पवन में हँसी, ह्वैहै आठौ अंग ।
घर मे नैन न सामुहे, ह्वैहैं रमनी संग ॥२६॥

सवैया

यहि भाँति रहे झकि कै सुर तीनौ कहा करिये कछु और न आवै ।
तब सोचि कछु मन में मघवा मति संचित सों परपंच बनावै ॥

[इन्द्र बचन]

बोलि उठ्यो छल सों नल सों यह रावरी मूरति मोद बढ़ावै ।
सो सुख सों तुम छेम सों हौ तुम्ह देखत ही चित इच्छित पावै ॥२७॥

दोहा

अरधासन मैं जेहि दियो, करि आदर सभार ।
बीरसेनि नरनाह सम, रेखा लसत लिलार ॥२८॥

तोमर

तुम हौ सुपूत सुजान । तेहि राज के कुलभान ।
कितको कर्‌यो श्रम आनि । बहु देस है गुनखानि ॥२९॥
हम हूँ चलै सुभकाल । जेहिको मिल्यो फल हाल ।
यहि राह आधिक आनि । तुमसों भई पहिचानि ॥६०॥

[नल बचन]

तोमर

यह तौ परस्पर बात । गुरु रूप आपु लखात ।
हम अज्ञ हैं बहु भाइ । तुम आपु देहु बताइ ॥६१॥

[इन्द्र बचन]

चम्पकमाला

दंड धरे याको यम जानौ। ज्वाल बरै याको सिखि मानौ।
फांस धरै याको जलनाथौ। सेष रह्यो सो इंद्र सनाथौ ॥६२॥
जाचक ह्वै तेरे हम आये। देखत ही चारौ फल पाये।
मारग को आयासु बितावै। कारज को तौ आपु बतावैं ॥६३॥

सवैया

जाचक नाम सुने हरख्यो तनु फूलि उठे भुज दंड सोहाये।
फूल कदम्ब के तूल भयो तिन पाँयन धाइ लस्यो सिरनाये॥
जो अति दुर्लभ देवन को बहु मेरे अधीन कहौ केहि भाये।
जानि बिरोध परै यहि में तब ससय यों नल के उर आये ॥६४॥

नीलसरूपक

जीवित लौं अब अर्थिन दीजै। ता महँ नेकु न नाहि करीजै।
जो सुरनायक मांगन आवै। तौ कह देइ हियो सुख पावै ॥६५॥
जानि परै कह चाहत ये हैं। तौ बिन जाँचत ही हम देहैं।
जानत हुँ रुचि अर्थिन केरी। देत न जे तिनको धिग टेरी ॥६६॥
जे अति आप खुशामद चाहैं। माँगत बार न नेह निबाहैं।
निष्ठुर बोलन में उतसाहै। दातन में तिनको न सराहै ॥६७॥

दोहा

तृन समान लै दीजिये, जीवन अर्थिन हाथ।
दर्भयुक्ति जल दान बिधि, बहै बतावत गाथ ॥६८॥

सारवती

पंक कलंकित कौल गनै। लच्छि निवास तहाँ न बनै।
जाचक पानि सरोज नयो। आसन ता कहँ आनि दयो ॥६९॥
जाचक के मन को भरि कै। देत न जे करुना करि कै।
भूतल भार भयो तिनको। परबत सिंधु न रूखन को ॥७०॥

भुजगप्रयात

सबै दान ससार के छोडि दीन्हे।
हमैं आइकै एक यों जाँचि लीन्हे ॥
बडी कीर्त्ति दीन्ही हमै देव चार्यो।
कहा होइगो काज मो सों संवार्यो ॥७१॥

सोरठा

छोडि जात यहि लोक, दाता धन दै आपनो।
अरथि बंधु बिन रोक, पहुँचावत परलोक हूँ ॥७२॥

गोपाल

एक गुनो धन दै संसार। देत स्वर्ग पर गुनो हजार।
अरथी लै अधमरन उधार। साधु करत ता सों बैपार ॥७३॥

प्रद्धटिका

यहि भाँति भूप सोचत अपार। बोल्यो बिचारि मन बच उदार।
परसन्न बदन लखि कै दिगीस। अति हर्ष भयो चित बिसेबीस ॥७४॥

[नल वचन]

दोहा

जैसो जाको अन्न तनु, तैसी ताकी होत।
आपन की देखत नयन, सुधा स्वादु उद्योत ॥७५॥

चौपाई

मेरो अल्प सुकृत बरु केतो। कहा होत ताको फल येतो ॥
अति दुर्लभ दरसन तुम देखो। पुरिखन के ये तप फल लेखो ॥७६॥
सरब सहन ब्रत जो छिति राख्यो। ताको आज सफल अभिलाख्यो ॥
जो तुम चरन सरोजनि पूजी। याते धन्य और नहिं दूजी ॥७७॥

गगनागना

जीतब हूँ ते अधिक आप चित जो कछु चाहौ।
मोको सेवक जानि कृपा करि मुखहिं सराहौ ॥

हौ केहि कीबे जोग आप समझत सब नीके ।
पूजौ चरनन अबहि होहि अभिलाष जु हीके ॥७८॥

चित्रपदा

भूपति की सुनि बानी । सत्य सुधारस सानी ।
बासव तौ छल कीनौ । कारज में चित दीनो ॥७९॥

[इन्द्र बचन]

तारक

दमयन्ति बिवाहन को हम आये । सब अंगन मौंह अनगं सताये ।
अब आपुन दूतपनो यह कीजै । सिद्ध कार्य करि जग में दीजै ॥८०॥

दोधक

भूतल में नल भूपति भारे । सिंधु तुहीं सब कूप निहारे ।
जागत हैं नभ में ग्रह जोऊ । भान समान प्रकास न कोऊ ॥८१॥
तीनिहु लोकन को हम देखे । तो गुनसिंधु अगाध बिसेखे ।
कारन मैं तुमको परचायो । तो हमहूँ चित मों सुख पायो ॥८२॥

सोरठा

शुद्ध वंश गुन थान, सायक सों रिपु पच्छधर ।
चहै चलायो आन, सक्र वक्रधनु सों भयो ॥८३॥
सुनि ये छल बल बैन, जानि भेद भूपति गयो ।
किये रूखौहैं नैन, कुटिलन सों मृदुता न हित ॥८४॥

[नल बचन]

छप्पय

जग में जेते जीव चित्त तिनके तुम जानत ।
निज मति दर्पण मौंह तत्व सन्मुख पहिचानत ॥
मुख न मौनु हौ सजो काज नासै जेहि कीने ।
जो कहि के नहिं करै लाज ताको मन हीने ॥

जो करन जोग नहि जासु के ताकी फरमाइसि करत।
तुमही बिचारि समुझौ सकल कहा लाभ यामें धरत ॥८५॥

मनहंस

हम जात हैं तेहि ब्याह को उत्साह सों।
तेहि संग दूतपनो करैं केहि राह सों॥
तुम हूँ बड़े सुरनाह जू सरसात हौ।
हमको छलो बिन लाभ क्यों न घिनात हौ॥८६॥

तोटक

मनमोहत नाम सुने जेहि को। चहुँ ओर न रूप लखै तेहिको।
तेहि संग करौ किमि दूत कथा। केहि भाँति बनै यह योग यथा॥८७॥

सवैया

राजे मनोरथ माँह चढ़ी निसि द्योस रहै तेहि की छवि देखे।
स्वास छुटै मुख पीरी परै बिरहागि बरै खरके सु बिसेखे॥
सो परतीति निहारत ताहि न ज्यों रहिहै उर एक निमेखे।
कौन समर्थ विषैरस जीतत रीति यहै जग की अनलेखे॥८८॥
ड्योढ़िन मे छरिया बरजैं जिनके डर जान न पैयत नेरे।
जैहौं तिन्हैं हनि भीतर तौ नहिं सों मिलि है भय कै घर घेरे॥
प्रानन लौं प्रनदान को है कहि देत दधीचिहि आदि घनेरे।
प्रानन हुँ ते हजार गुनी दमयन्ति दिये न चहौ जस हेरे॥८९॥
जांचत हौ तुम सों करि पूजन मोहि मिलै दमयन्ति सयानी।
लाज न आवत है तुमको अब सो बिपरीति करौ मम बानी॥
मो कहँ तो पहिलेहि बर्‌यो तिन जो तुम राज कुमारि बखानी।
देखत ही हमको लिजिहै भजिहै न तुम्है यह मैं पहिचानी॥९०॥

दोहा

ताते खेद न कीजिए, कृपा करौ सुरनाथ।
हँसी होइगी काज नहिं, बिन उपाइ-जन साथ॥९१॥

सोरठा

सुनि नल के ये बोल, ह्वै अडोल गति देवपति ।
कपट हर्‍यो अति लोल, औरन के मुख देखिकै ॥९२॥

[इन्द्र बचन]

दोहा

कहा कहहु ऐसे बचन, चंद्रबंस तुम भूप ।
अंगीकृत करिकै फिरत, कौन धरम केहि रूप ॥९३॥

मनोरम

यह जो बिलोकतु है जगतु । निज काल नासहि को भगतु ।
तहँ धरम जस को को तजत । यहि भाँति तू हमको भखत ॥९४॥

प्रद्धटिका

जे बस भये तेरे महीप । तिन दान दिये बहु कुल प्रदीप ।
यक इन्दु आदि उपज्यो कलंकु । तुम हूँ न गह्यौ तेहि रीति अंकु ॥९५॥
जो कै कुदीठि मुख मूँदि लेहु । लखि अरथिन सों मानहु न नेहु ।
तुमसे महीप को सो कलंकु । जिमि सीतभासि में ससक अंकु ॥९६॥
तैं पढ़्यो न बरनन मे न बर्न । कै भूल्यो पढ़ि कै भूप कर्न ।
यहि भाँति अरथिजन चित्त चारु । सो करत आनि दोला बिहारु ॥९७॥

इन्द्रवज्रा

पायो घनो यों जस सुभ्र तैंही । छोड़ौ न ताको सिखवो जो मैं ही ।
कौने लह्यो जाचक और ऐसो । जो देवराजा सुरवृक्ष जैसो ॥९८॥

उपेन्द्रवज्रा

मिटै न क्यों हूँ अभिलाष दैवी । करै सदानंद सदा बनैवो ।
तहू गन्यो है तेहि भाँति तो कै । चहै तहाँ जाइ कोऊ न रोकै ॥९९॥

[यमराज बचन]

दोहा

बीरसेनिकुलदीप तुम, तहाँ लग्यो तम आनि।
सोम बंस उत्पत्ति सम, तहाँ करत पहिचानि ॥१००॥
कामधेनु पसु कल्पतरु, कठिन महा तेहि पाय।
जाचक बिमुख न होत है, कहा बिचारत आय ॥१०१॥
माँगत दीजै तुरत ही, जीवन में संदेह।
खुलत मुँदत फल व्यंग्य में, यहै कहत गुनगेह ॥१०२॥

[वरुण बचन]

सवैया

दानि के जल धारनि सों मुक्तागन भूषन संयुत जोहै।
पूरन सादर चन्द्रमुखी वह कीरति नील बधू तुम सोहै ॥
कँवच अभेद तुचामय हौ अस बज्र के अस्थिन जो अवरोहै।
तेउ रहे नहिं कर्ण दधीचि कहा तुम धर्महि त्यागि दियो है ॥१०३॥

दोहा

सत्यपास गुन सों बँधे, अजहूँ चलत न नेक।
बिन्ध्याचल बलिराज ये, धरे धर्म की टेक ॥१०४॥
हम पै माँगत और बर, ते हम मांगत तोहि।
पूरि मनोरथ एक नहिं, सुजस सकल दिसि सोहि ॥१०५॥

द्रुतविलम्बित

चलत बार तुम्हें सुमिरै कहूँ। मिलत मंगल ताहि अनेकहूँ।
अफल गौनु जो होइ तुम्है सुनौ। निखिल मगल तौ अफलै गुनौ ॥१०६॥

मनहरन

इष्ट पै हमारी तै जू प्रतिकूल श्रुति करी यह,
श्रुति के समान ताहि जानिये बनाइ कै।

धरम अरथ ताहि साजि अब महराज आज,
अमित सकत अभिधान पाद पाइकै।
कीरति तिहारी तीनों लोकन पुनीत करै,
एक सेतताइ को हुकुम सरसाइ कै।
वस्तुन में नील पीत हरित सुरख रंग,
तिन माँह रही अब द्वैत छबि छाइकै ॥१०७॥

छप्पय

सहस चरन जे भानुपूत तिनको सनि सोहै।
भयो पंगु केहि हेत तासु छबि सुत अवरोहै ॥
याको उत्तर आज लख्यो हम तोकहँ देखे।
नाघत तेरे तेज भयो रबि पंगु बिसेषे ॥
यहि भाँति चाटु बचनहि बचन मोहि लयो भूपाल मनु।
बर जोर बिगारी पकरि कै, पेटि धरी सिर पीट जनु ॥१०८॥

दोहा

अंगीकार कर्‌यो अबै, वृतभार नरनाह।
तब बोल्यो सुरनाइ हँसि, मुदित भयो मन माह ॥१०९॥
जहाँ तहाँ नृप रावरी, इच्छा ऐसी होइ।
तहाँ तहाँ सब लोक में, तुम्हैं न देखे कोइ ॥११०॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ सुर संगमो नाम षष्टमःसर्गः।



सप्तम सर्ग

दमयन्ती-दर्शन

दोहा

सर्ग सातवें में कथा, कुण्डिनपुर नृपगौन
रतिपति बिबिध बिलास में, दरसन रावर भौन ॥

सोरठा

नैषधपति सुर मित्त, रथ हँकवायो बेगि सों ।
दूतकाज धरि चित्त कुण्डिनपुर सन्मुख चल्यो ॥१॥

बसंततिलका

रोके बियोग नल पावक ज्वाल ही में ।
आन्यो दिगीस गन कारज साँच जी में ॥
जैसे अगस्त्य जल सागर पान कीनो ।
दुर्वारदीह बड़वानल को न चीनो ॥२॥

सवैया

नल की परनालि मिल्यो तिय को रस पूर सवाद पियूषहि चाहैं ।
अति प्यास भरे तेहिके सुर चारौ तहाँ नल को बहु बार सराहैं ॥
लाइ रहे टक सी अनिमेष मनोरथ कैकै करैं उतसाहैं ।
भूषन आप भये तेहि देस के आगम की पुनि हेरत राहैं ॥३॥

सोरठा

कुंडिनपुर मिस आइ, भूमि इन्द्र अमरावती ।
रथ पहुँच्यो नगिचाइ, साधु मनोरथ सिद्धि ज्यों ॥४॥

हरिगीतिका

दमयन्ति के पग सो गली किरतार्थ हैं यहि ग्राम की ।
मुख स्वास छोड़ि उदास ह्वै सुधि आइकै सुर कामको ॥
चख बाम अश्रु प्रमोद कटक पदम नूतनु भोग सों ।
दृग दाहिनो फरक्यो तहाँ पुर देखि नेह सजोग सों ॥५॥
रथ सों तहाँ उतरयो महीपति बेगि कुंडिनपुर गयो ।
जिमि सूरमडल ते कढ्यो चप तेज चद्रहि में रयो ॥
नल को स्वरूप अदृस्य ह्वै तब नेक नहिं लखिकै परै ।
तन माँह आवत सकल-छबि-निधि ज्यों अनग कलाधरै ॥६॥

चौपाई

देखि देखि कुंडिनपुर-बासी । चातुर सुदर बिबिध बिलासी ॥
भाँति भाँति के भवन निहारे । आश्चर्य नल के उर भारे ॥७॥
गाहत सुघर नगर की सोभा । छुटे मनि किरननि के गोभा ॥
महा मुदित मन में तब भयो । राजा राजद्वार जब गयो ॥८॥

लीला

चोर सों छिपि हौं चल्यो यह जानि चित्त लजाइ ।
देखि द्वार लठैतगन तब रहे मोह चढाइ ॥
लालसा दमयन्ति संगम मानि होत हुलास ।
दूतकाज बिचारि कै करि लेत चित्त उदास ॥९॥

अमृतगति

नृप चल्यो नाघि दुआर । निरख्यो न केहुँ तेहि बार ॥
चहुँ ओर देखत जात । मन में न नेकु सकात ॥१०॥

सोरठा

कौन जात यह लेखि, काहुँ सों काहू कह्यो ।
ग्रीव फेरि तेहि देखि, राजसिंह बिस्मित भयो ॥११॥

कवित्त

शावर में उबटावत ही इक जंघ उघारि कछू मृगनयनी ।
देखत ही चख मूँदि लियो नृप त्यों इक आइ गयी पिकबैनी ॥
तासों अचानक भेट भई छुटि और गह्यो थलु कै मति पैनी ।
लालच सों पकर्‌यो चह ताहि तहाँ बहु बार कढै मृगनयनी ॥१२॥

तारक

सब ओर खरी दमयन्तिहि देखे । यह काम प्रपचन को फल लेखे ॥
तेहिते मन और लगे न कुमारी । छवि तासु रही भरि नैनन भारी ॥१३॥
तिन ओर निरास कर्‌यो हियरा है । सुर काजहि को निहचै चित चाहै ॥
बिरहागिन सों तनु छीन भयो है । तेहि देखत स्वाद विषाद लयो है ॥१४॥

सवैया

भ्रम की दमयंति लखै जबहीं तब देव संदेसन को मृदु भाखै ।
सुनि बैन अदस्य तबै जुवती मनमें डरि सोरु सबै करि राखै ॥
लगि मारुत मन्द उड़ै अचरा झमकै कुच कंचन चन्द सों आखै ।
मुख फेरि रहै नृप धीर धुरन्धर चोप चितै न चहूँ चख चाखै ॥१५॥
बालन की अवली गुन सों पुर अन्तरजाल मनोज पसार्‌यो ।
पै नृप नैन दुऔ कर सायल फाँसि सक्यो न किती कहि हार्‌यो ॥
बाँधि के केस हुती तेहिको भुजमूल अतूल खुल्यो झमकार्‌यो ।
लेपति केसरि नाभि लखी तब मूँदि रह्यो दृग दूऔ बिचार्‌यो ॥१६॥
इतते इक जाति हुती उतते इक आवत ही तिन बीच गह्यो ।
कुच कंचन डोल अडोल गडे सुखसिंधु सुवारि समाइ रह्यो ॥
कछु चेतन हो अलगाइ गयो निज अंगन की परिताप लह्यो ।
पुलको उत दोऊ मयंकमुखी सब देह प्रस्वेद प्रवाह बह्यो ॥१७॥

तारक

जितही जित भूपति होत खर्‌यो है । तितही अदभूत प्रकास भर्‌यो है ॥
तहई तहई जुवती जुरिआवैं । चकि मोहित ह्वै कछु भेद न पावैं ॥१८॥

[युवती बचन]

अलि आगत है गृह आजु सोहायो। जितही तित आनंद सों छवि छायो ॥
नहिं जानि परै दुरि कै सुर कोऊ। बिहरै इत यों कहुँ उत्सव होऊ ॥१९॥

दोहा

मूँदति नैन न खोलतै, नयन रह्यो अकुलाइ।
लखि बिलास यह आपनो, आपुहि मोंह लजाइ ॥२०॥

तोटक

तिय ओर जहाँ दगकोर करै। तबही सर मारत मार अरै ॥
फलहीन न फूल भयो तेहिके। करि धीरज पूजन को यहिके ॥२१॥

प्रद्धटिका

जहँ नारि संग नहि भेट होइ। तहँ चल्यो आप थल देखि कोइ ॥
चौपथह मध्य ठाढ्यो महीप। सब साधु दरस परसन्न दीप ॥२२॥

सोरठा

तरुनी मुख की ओर, हेर नयन मूँदे दुओ।
प्रगट करी तेहि ठौर, सो ससि आप सरोज जहँ ॥२३॥

हरिगीतिका

चहुँ ओर ते तरुनी चलैं नल को गहैं तब आइ कै।
लगि अँग लटि झुकती भहरती भाजती डरपाइ कै ॥
बहु बार कदुक सो हत्यो, नखरोट लै तिनहू तन्यो।
तिनहूँ चस्यो कुच चित्र कु कुम सुरति जनु तेहि संग सन्यो ॥२४॥

दोहा

लखो हार हीरा ललित, प्रतिबिंबित नृपरूप।
हेर रहो हियरा मनौ, कर्‌यो प्रवेस अनूप ॥२५॥

तारक

नृप के प्रतिबिम्बन देखत मोहै। रमनी रति सी सब सुंदर सोहै ॥
उमग्यो तनु आइ अनंग बिलासी। अलसाइ रही थकि नयनन हाँसी ॥२६॥

दोहा

ह्वै अदृश्य पुर पुर फिरत, मनि प्रतिबिंब अनेक ।
योगी सों राजत तहाँ, बड़ो वियोगी एक ॥३४॥

सवैया

मैं तो छुयो सखि कोऊ युवा इम छाँह लखी इत मानुख जैसी ।
बोलत सो परख्यो हमहूँ मति मे प्रतिबिम्बित मूरत तैसी ॥
आपुस माँह करै चरचा चित अद्भुत भाँति भई यह ऐसी ।
बेगि बराइ चल्यो तितही जितहीं जितको रुचि सो मति ऐसी ॥३५॥

दोहा

राजसदन सो नृपसुता, आवत ही तेहि बार ।
हेमछरी कर सहचरी, सोहत संग हजार ॥३६॥

सवैया

कोऊ गुलाब जलै छिरकाउ करै समुहे मनि मारग झारै ।
कोऊ करै चहुँ ओरनि चौरनि भौरन की कोउ भीर निवारै ॥
चौसरि चीर सुगंधि लिये सखियाँ सँग राजसुता सरदारै ।
आवै अनूप गली में चली तेहि प्रानपियारो अली परवारै ॥३७॥
देखि समाज छक्यो नृप छैल रह्यो तेहि गैल लोभाइ अकेलो ।
देखत है तिन को यौ ठाट उचाट करै चित मो अलबेलो ॥
नल लेखि दमयंति जहीं निज हार उतारि नयो गहिकै गल मेलो ।
बहु आइ छयो नृप के हिय में पर यों तिनमें अति कौतुक फेलो ॥३८॥

सोरठा

साँच माल हिय लागि, सुख अद्भुत भूपति छक्यो ।
जागि उठी बिरहागि, मनौ कुंड आहुति परी ॥३९॥
लसत एक ही ठाम, लसत हुओ तिसरैत सों ।
करत अचंभो काम, दई काम कैसो भयो ॥४०॥

सवैया

दमयन्ति यही नृप को परस्यो सरस्यो उत अंतर नेकु सोहान्यो ।
थहरी नव बाल ज्यों बाल मृगी चितई चहुँधा न कहूँ ठहरान्यो ॥
सुखसिंधु अथाह पर्‌यो पुहुमी पै उछाह भर्‌यो छिन एक बितान्यो ।
लखि चेत लग्यो झख-केतु जग्यो तब स्वादु भरे उनमादु बखान्यो ॥४१॥

दोहा

साँच मिलहि झूठो गनहि, साँचो भाँति लोभाहि ।
दोऊ है ता बाट रत, टरत तहाँ ते नाहि ॥४२॥

प्रद्धटिका

इमि करत कला अभिराम काम । धरि धीर गई वह बाम धाम ॥
नृप भ्रमत लह्यो ताको अवास । मनि लसत कँगूरा लगि अकास ॥४३॥

दोहा

जरी चंदोवा के तरे, मखमल गद्दी बिसाल ।
आस पास झालरि लगी, हीरा मोती लाल ॥४४॥
उच्च सिंहासन पै सची, सोहत राजकुमारि ।
खरी खवासैं रसभरी, जनु उतरी सुरनारि ॥४५॥

तोटक

सखियाँ सत लाख तहाँ थित हैं । रसरंग बिलासन में चित हैं ॥
नृप मोहि रह्यो लखि कै परभा । रति की सरसै रनिवास सभा ॥४६॥

सवैया

बाजत तार पखाउज बीन नबीन प्रबीन सबै मदमाती ।
गावती गीत सनेहसनी करि नाचु कला अति ही इतराती ॥
भौंहनि में दृगकोरनि में मुसक्यानि में भायनि को दरसाती ।
डोलत बाहँ चुरी खनकैं चमकैं अँचरा दमकै खुली छाती ॥४७॥

तोमर

पिक बेनु बीन निहारि । यहि कठ सोभहिं हारि ॥
धरि तीन रेख अनूप । बरनी तबै यह भूप ॥४८॥
दमयन्ति ले नलराज । तुमको मिलै वह आज ॥
सुनि सारिका मुख येह । नल को कँप्पो सब देह ॥४९॥
हमको लयो इन जानि । नहि है मृषा सुरबानि ॥
तहँ बैठि कै नृप बीर । तब यों धर्‌यो हिय धीर ॥५०॥

दोहा

आली जन ये सीखये, मेरो नाम सुनाय ।
समाधान यों करत हैं, वेई बैन पढ़ाय ॥५१॥
भानमती मालिनि तबै, आइ बेलि सिंगार ।
दूरिहि ते छिति सीस है, किये हार उपहार ॥५२॥

सवैया

स्वाँग स्वयंबर को सखियाँ करि एकहिं लै नल भेख बनाई ।
एक करी दमयंति खरी सुथरी किनहूँ नल कीरति गाई ॥
मोहित है उमड़ी उत को वह ह्याँ यह राजकुमारि लजाई ।
घूँघट ही मुख फेरि हरे झिझिकातही माल पियै पहिराई ॥५३॥

दोहा

ससिबदनी अभरक तिलक, कह्यो ससी तिय एक ।
लखत सखी मुख चन्द्र जहँ, राजत चंद्र अनेक ॥५४॥

मालिनी

अति चतुर चितेरी चित्रनी नारि राजैं ।
सब मिलि दमयन्ती रूपको चित्र साजैं ॥
कर लिखत न आवै कौल को लेखि हारैं ।
कुवलै लिखि पारैं नयन के लाखि हारैं ॥५५।

नित नित परबीनै किन्नरी साजि आवैं।
मिलि मिलि दमयती संग बीना बजावैं॥
रचि रचि सिखरावैं नाच की चाल चोखी।
कुहुँकि कुहुँकि गावैं रागिनी लै अनोखी॥८६॥

दोहा

अरध चन्द नख चुम्बि कुच, लखी सखी यक तासु।
करत नेवारा काम हरि-भीत पयोधर बासु॥८७॥

लक्ष्मीधर

काम के चाप को योगु पावैं जहीं।
आनि के आलि को ह्यौ बिदारैं तहीं॥
हार के व्याज सों फूल आने जिते।
सूचि सों भेदि डारै सहेली तितै॥८८॥

तोटक

दमयंति उरोजन पै रचना। यक आलि करै मकरी रचना।
नल के कर की तसबीर नई। लखि पकज की उन खैंचि दई॥८९॥

चर्चरी

खेल चौपरि में कह्यो हनि सारिका यहि चाइसों।
सारिका बिनती करी सुनिकै हँसी सब आइसों॥
पानदान सुवर्ण को दमयति के अति पास है।
हेम-हंस रह्यो इहाँ करि दूतिका जु निवास है॥९०॥

दोहा

ललित लुनाई की लहरि, राजत सभा अनूप।
दमयतिहि प्रगटित करै, वई अलौकिक रूप॥९१॥

तारक

नल की तसबीर लिखी सब ठाईं। तिन में प्रतिबिम्ब परै बहुधाईं॥
तिनते कछु सुदर आजुहि सोहै। कहती यह देखि तिया मन मोहै॥९२॥

दोहा

दहन समन सखिखेस की, दूती दई निकारि ।
बचन रचन सों तिन जऊ, करी बड़ी मनुहारि ॥६३॥
देखि अनादर आपनो, दूती भई निरास ।
नल दमयंती ब्याह की, फेरि धरी चित आस ॥६४॥

प्रद्धटिका

दमयंति लखि जब सुचित धाम । उठि इन्द्र दूतिका किय प्रनाम ।
कर जोरि करी विनती अपार । मन मुदित भई सखियाँ हजार ॥६५॥

[दूती बचन]

लिपि देवलोक की भूमि थान । पढ़ि सकत कौन ऐसो सुजान ॥
यहि ते मोहिं पठ्यो है सुरेस । तेरे समीप कहि कै संदेस ॥६६॥
करि कै किरपा दृग कोर हेरि । धरि कान नेकु यह बिनति मोरि ।
गहि कंठ अंग मिलि कै सुरेस । तुम कुसल छेम बूझी सुरेस ॥६७॥
तन जाग तोर अनुराग तोम । सदेस कह्यो इक रोम रोम ।
तुव बिरह सचीपति भयो दीन । निसि द्यौस रहै तन मन मलीन ॥६८॥

सवैया

ज्यों अकुलाइ उठै जबही तबहीं लगि आइ कहै यह जासो ।
भीम महीपति को चलि कै नहि माँगत क्यों दमयंतिहिं तासो ॥
ह्यॉ लगि आइ सकै नहिं लाज सों ह्वै न परै कल बाग तमासो ।
सोइ करी पुरहूत को प्रेमिनि बंधि स्वयंबर फूल हरा सो ॥६९॥

दोहा

छीरधि मथि सुर श्री कढ़ी, या अनुराग निमित्त ।
फेरि मथन जन वै करैं, याके ब्याह सुचित्त ॥७०॥

चर्चरी

तीनि लोकन में बड़यो है दिव तहाँ सुर जानिये ।
है बड़ो तिन माँह बासव वेद बात बखानिये ॥

दास होन कहै चहौं तुव रीति सों अनुराग की।
धन्य राजकुमारि तू ठकुरायनी अनुराग की ॥७१॥

सोरठा

सतमख को पद पाइ, करत खुसामदि रावरी।
मानि खेहु करि भाइ, भौंह लास लीला ललित ॥७२॥

कवित्त

देवनदी तट नंदन बाग में जाइ सोहाग विहाग विहारौ।
चौर जेठानी मिलौ लच्छमी तुम पैन्हि के फूलन के बलि हारौ॥
चातुर सुन्दर चोप भर्‌यो तहँ देवरु कान्ह हसोरु तिहारो।
मान मरोरि सची को अहै तुम ये मुख राजकुमारि निहारौ ॥७३॥

माया

लीला ही सो वासव जी में अनुरागौ।
तीनो लोकन पालत नीके सुख पागौ॥
जो जो चाहौ तुम वा सों सब लीजौ।
कीजै मेरी ओर कृपा सो सरभीजौ ॥७४॥

प्रमिताक्षरा

नित पूजि चित्त परनाम करौ। जिनको सुध्यान जिय माहँ धरौ॥
करिहैं प्रनाम तुमको सुर वै। बिधि इन्द्र संग जब तौ जुरिवै ॥७५॥

दोहा

करी बिनति कर जोरि कै, रचि रचि बैन बिसाल।
गुदरानी तेहि दूरि ते, पारिजात की माल ॥७६॥
अति आदर सों नृपसुता, पासै धरी उठाइ।
पूरी सब आसा सुरभि, नल आसा बहिराइ ॥७७॥

सवैया

और बिचार करौ न कछू अब आपु बड़ी तुमहौ सुखदायनि।
काहूँ कह्यो यह तो समयोग है मानु सखी हौं गहौं तुव पायनि॥

काहू कह्यो यह उत्तम है हँसि कै अबहीं कहिये ठकुरायनि ।
काहू कहै यह मंगल काज कहा मनमौन गह्यो है गोसायनि ॥७८॥

[दमयन्ती उत्तर]

इन्द्रमाला

हौ तो बचन अधीन तिहारे मोहि कहा कहि आवै ।
सुनि कै मुदित भई सब सखियाँ दूती मोह बढ़ावै ॥
देखत खड्यो तमासा भूपति रूप अनूप लोभान्यो ।
मिली न प्रान प्रिया मोंको सुरदूत काज तेहि आन्यो ॥७६॥

सोरठा

दमयन्ती मुसुक्याइ, अधर कोर उज्वल करी ।
उतर को समुझाइ, माला को परिणाम करि ॥८०॥

[दमयन्ती बचन]

प्रद्धटिका

तुव बरनै बासव गुन उदार । यह कह्यो परम साहस अपार ॥
को इन्द्र बड़ाई करन योग । कछु देव बखानत वह प्रयोग ॥८१॥
जो जलु जाल के चित्त होइ । सब जानि जात सर्वज्ञ सोइ ॥
तेहि उत्तर दीजै कौन भाँति । जेहि होइ आनि मम चित्त सांति ॥८२॥

दोहा

जो आइसु सुर-नाह को, नाहि करै जग कौन ।
मैं अजान अपमान बच, कहत समै सुर तौनु ॥८३॥

सवैया

दिगपालन के सब अंस मिलैं बहु भूपति देव स्वरूप सोहायो ।
तेहि को मिलिहौ करि ब्याह उछाह भयो यह बासव को मनभायो ॥
कहि चाटु उचाटु करैं कत तैं चित सैल सतोन को कौन चलायो ।
नर को बरिहौं बरिहौं न तऊ नलको बरिहौं यह मैं ठहरायो ॥८४॥

रथोद्धता

मैं बिचारि पहिलेहि जासु को । चित्त माहँ पति मानि तासु को ॥
इन्द्र ब्याह हमको न भावतो । धीरज सुख जग ज्यों न लावतो ॥८५॥

चौपाई

भरत खंड नवखंडन माहीं । पर पावन बरनत बहुधाहीं ॥
मै गृहस्थ आश्रम निरबाहौ । पति सेवा को धरम सराहौ ॥८६॥
स्वर्ग लोक केवल सुख साजै । धर्म कर्म की रीति न राजै ॥
धरनि माहँ पावत वै दोऊ । तजै जानि तिनको नहि कोऊ ॥८७॥

दोहा

दान दया मख सत्य सुचि, सील साधु सन्तोष ।
इनहूँ ते सुर मुदित ह्वै, उदित करत नहिं रोष ॥८८॥

संयुत

सुरलोक ते छिति को गिरे । निज छीन पुन्यनि सों घिरे ॥
नर भूमि ते उत को चले । निज चारु करमनि सों फले ॥८९॥

दोहा

गिरत चढ़त यहि भाँति सों, सुर नर सब ससार ।
परत दुओ कर सरकरा, हानि लाभ अनुसार ॥९०॥

प्रद्धटिका

कहि दूति सग इमि अर्थ बैन । सहचरिन ओर लखि कोर नैन ।
तब बोलि उठ्यो बातैं उदार । जनु बाजि उठी बीना सुतार ॥९१॥
यह है अनादि संसार सिद्ध । तिय पुरुष योग यामै प्रसिद्ध ॥
तुम सबै बड़ी ही हौ अधीन । यासों बिचारि चित कहा कीन ॥९२॥

तारक

सब जीव अदृष्ट अधीन बखानौ । केहि कर्महि काहि उराहन आनौ ॥
बह रूप अदृष्ट झुकै तेहि कोऊ । सुख के समको फल पावत सोऊ ॥९३॥

मोदक

कोमल ईख न ऊँटहि चाहति । ऊँट न कोमल ईख सराहति ॥
आपन की रुचि जामहँ पावत । प्रीति तहाँ हठिकै उपजावत ॥६४॥

मनहंस

गुन इन्द्र के हिय को हरै बहु भाइ सों ।
नल को सनेह बढै तऊ चित चाइ सों ॥
जिमि ब्रह्म को सुख पाइ पूरन मानि कै ।
नहि चित्त लागत लोक के सुख आनि कै ॥६५॥

दोहा

कीट आदि कैटभ मथन, लगु जग में यह रीति ।
निज रुचि के अनुसार सब, करति सबन सों प्रीति ॥६६॥

प्रद्धटिका

यहि भाँति कर्‌यो सबको प्रबोध । तजि दयो सबन मन को बिरोध ॥
उठि इन्द्र दूति सिर धुनि अपार । फिरि चली बिलखि मन में हजार ॥६७॥
सुनि छिपे रूप ये बचन चारु । उर फरकि रह्यो नृप को सिंगारु ॥
मन मुदित भयो सुखसिंधु न्हाइ । दमयन्ति नेह गुन सों लोभाइ ॥६८॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँ प्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ दमयन्ती-दर्शन नाम सप्तमःसर्गः



अष्टम सर्ग

दमयन्ती-वर्णन

दोहा

सर्ग आठयें में कथा, नख सिख रूप बिचारि ।
बरनन राजकुमारि को, नल दरसन निरधारि ।।

दोहा

दरसन मिलन बिचारि, प्रथम मनोरथ पल्लवित ।
देखत राजकुमारि, सो नृप हिय फूल्यो फल्यो ।।१।।

तोटक

पहले तिय अंगन मे मिलई । पुनि आनँद सिंधु समाइ गई ।
फिरिकै सुखके असुआनि छई । यहि भाँति भई नृप दीठि नई ।।२।।

मनहरन

भावती को आनन सुधाधर निहारत ही,
उमड्यो उदधि उर भारी अनुराग को ।
ऊँचे कनकाचल कुचन चढ़ि गई दीठि,
पायो अवलंब थलु फलु भाखे भाग को ।।
मगन भई धौं रूप पानिप पियूख महा,
उरज द्दु बीच दबी देखि मगु लाग को ।
गिरति गिरति चढ़ि तट ते गई लिपटि,
लखत लखत रंग रूप रस राग को ।।३।।

तोटक

कुच के चहुँ ओरन दीठि फिरै । परभा मकर चक्रन आनि फिरै ।
सब ओर छिप्यो मृगमेद महा । तम हेत भयो दिग भेद कहा ।।४।।

भ्रम चक्र नितंबनि सो ढरकी। नल की तब दीठि हिये थरकी।
युग जंघनि रंभ सु थंभ बने। थिर ह्वै गहि कै अवलंब घने ॥५॥

भुजङ्गप्रयात

धरयौ बास को नाम है नेत्र जैसो।
कहै मेरहूँ नाम यों नेत्र तैसो ॥
मिलै अंग मोसों न क्यों भाँति वाकी।
लगी पाँइ याते मनौ दीठि ताकी ॥६॥

दोहा

नैनन सों पीवत छक्यो, आसव रूप अनूप।
आनँद अद्भुत सों भरयो, तब बरनन मन भूप ॥७॥

चुलियाला

होइ बिरंचि मनोज जो कैधों मेरो चित्त मनोरथ।
बनै न तौ या भाँति को रूप अनूप मनो हाँस पथ ॥८॥

गीत

उपजी धराधर सों तरंगिनि है पियूष सिंगार की।
यह पूर जोबन को लसै कुच कोक लोक बिहार की ॥
यहि माँह राजत काम है निज काय ब्यूह बनाइकै।
अति अंग मूरति देखिये बहु रंग की छबि छाइकै ॥९॥

सवैया

कनकाचल की सरिता सर कंचन कौल के साँचेन सों भरि काढ़ी।
सब राकसे अंग अनूप लसैं छहरैं छबि एक घटी नहिं बाढ़ी ॥
बिधि और स्वरूप तिया जे रची यहि ते कम सौदन की मति गाढ़ी।
तरुनी सुघरै अब जे रचि है तिन जीतन को यह ऐंठति ठाढ़ी ॥१०॥
सुंदर जे उपमान नये इन अंगन सों सब हारि गये।
ये न मलीन भये मन में तनिकौ अति ही परसन्न ठ्ये ॥

याको बखान करैं कविता द्युति के रस अद्भुत भाव छये ।
देहैं बड़ाई बड़ी हमहीं ते यही ते महासुख मानि लये ॥११॥

दोधक

देखत मोह करैं बहुतेरे । या उर अवगुन जात न नेरे ॥
देखन के भये ठौरन या मैं । आनि बसै सिगरे गुन यामैं ॥१२॥

तोम

करहाटक काँति कठोर । घिन सी लगै तेहि ओर ।
केतकी द्युति मूल । मुख मेलि छार समूल ॥१३॥

तारक

सिखि पच्छनि सोहत चन्द्र घनेरे । याके कच जीतत ताकहँ हेरे ॥
मुख जीतत है ससि एक सोहायो । तेहि ते निज ऊपर बास बनायो ॥१४॥

दोहा

याके मुख ससि सोभ ज्यों, अन्धकार चहुँ ओर ।
राख्यो पीछे बाँधि जनु, केस पास छल जोर ॥१५॥

मनहरन

सघन तिमिर घन तार मरकत हार,
सोहत सिगार धार सरस समाज के ।
छहरत छबि छूटि छूटन छुवत छिति,
मोह कैसे मारग बिमल सुख साज के ।
बेलि की सुबास फैलि रही आस पास दौरि,
भौंरि गुंजरत पुंज लोभ चाज के ।
मोतिन सों गूँधे प्रान प्यारी के चिकुर चारु,
चाबुक लसत तुरि मयन महाराज के ॥१६॥

सवैया

काम को चाप कछूक जरयो लखि ईस कियो युग टूक नवीने ।
वेमहि आप बिरंचि रची भृकुटी कुटिलै अति ही चित दीने ॥

काम के चाप को काम करै तिसहूँ पर ये तेहि को मत लीने ।
देखत ही हिय को हठि बेधहि झूमति घूमि गिरै परबीने ॥१७॥

दोहा

या मुख ह्वै कर ससि तजो, साँवल रेख सुभाइ ।
काम चाप गहि बिधु दुग्रौ, भौहैं दई बनाइ ॥१८॥

चर्चरी

तीनि बानन सों तिहूँ पुर जीति कै बहु भाइ सों ।
द्वै सरोजन सों रचे दमयन्ति के दृग चाइ सों ॥
भौह को धनु पाइ काम कटाच्छ कोरनि सों कढ़ै ।
भेदि कै तन ग्रान धीरज चित्त मोह महा बढ़ै ॥१९॥

दोहा

पूरि रहत माते मनौ, राते कोर सोहात ।
याके से याके लसत, नयन साँवरे गात ॥२०॥

हरिगीत

जेहि भाँति खैचत रंभ के दल खेत सार सुहाइ कै ।
तेहि भाँति कमलन सों लयो गहि रूप सार बनाइ कै ॥
तेहि सों रचे यहि के बिलोचन लोकनाथ लोभाइ कै ।
दृग भौर देखत ही रहैं छकि मोह सों सरसाइ कै ॥२१॥

सवैया

या ढिग ते जनु नयनसिरी हरिनीन उधार लई सबिलासै ।
माँगि लई तिनको डरपाइ करी कछु चंचल भौंह प्रकासै ॥
ब्याज सों बाढ़ि अनेक बढ़ी तब जाइ चढ़ी लगि दीठि अकासै ।
कोरन सों बिहँसै बतराइ लजाइ करै जुरि जोर तमासै ॥२२॥

दोहा

याके दृग मृग अति चपल, दौर न मिलत सप्रीति ।
करन कूप की भीति इत, उत नासा की भीति ॥२३॥

सवैया

सिसुक फूल न तूल लगै सुभ उन्नत बंस जगे गुन भारे।
छूटि सुगंध रहे चहुँ ओरन भौरन के गन होत सुखारे॥
मोरन कोर तचै नथुनी मुक्तागन भूषन संग सितारे।
मानि की वानि सजै सबही यह नासिका देखत ही हम वारे॥२४॥

दोहा

सध्या जनु मुख चंद ढिग, राजत अधर सुभेख।
फूले पंकज में मनौ, युग इंगुर की रेख॥२५॥

दोधक

ओंठन की समता नहिं पावैं। बिम्ब के तीरन चित्त चलावैं।
बिंब सदा द्रुम देस बिराजै। विद्रुम ओंठनि की छबि छाजै॥२६॥

सवैया

लाल जरी पट ओढनि सों सब ओरन बेनि झमी सुथरी है।
मानहु सूरज की परभा तम पै यक बारहिं आनि परी है॥
मालति माल मिलै मुकुता बिच बीच लरी गुँदि नेह भरी है।
सीस सुमेर समीप मनौ रस हास सिंगारकि धार अरी है॥२७॥
सीस ते बेनी छुटी यक बार जु साँवरि नागिनि सी लहकारी।
फैलि गयो अंग अंगन में विष ज्यों सिसु कै हम नेकु निहारी॥
लालन की गुँदि मालन सों मन लागत साँचहु हेम निहारी।
ज्यों मुख चंद्र सुधा चुहुकी कुहुकी बतियाँ त्यों भगी भय भारी॥२८॥
छूटि लिलाट रहीं अलकैं झलकैं बिच बीच कली मुकतान की।
रैनि अध्यारी मनौ मिलि तारेन चंद पै वारत है सुख दान की॥
बेसरि सों उरझी लट एक चलाचल चौर समीर निधान की।
मोर मनौ बरजोर जुरयो गहि ऐंचत नागिनि बैरनिधान की॥२९॥
बोरे तँबोल लसैं अधरा मन मोहत हैं दुगुनी परभा है।
आनन ओप सुधा-रस-सागर विद्रुम रंग तरंगचला है॥

लालन की किरनै सब सुधि सुहावनी रेख सुवेष रही ह्वै।
याको गुनी चतुराइ बिरंचि बिचारि रची अनुरागमई ह्वै ॥३०॥
ऊपर हाँस लसैं झलकैं छबि ओंठन भीतर म्यान तहीसी।
हीरन की द्युति जीरन होति निहारत सुन्दर रूप बतीसी ॥
मानिक रंग रँगी रसना सुख मानिकै आनि सुबानि बतीसी।
दौरति स्वास सुगंधिन सों सब ठौरनि भौरनि भीर भरी सी ॥३१॥

दोहा

सिरस कुसुम कोमल अमल, याके अंग सँवारि।
मृदुता की रचना करी, पूरी वचन बिचारि ॥३२॥

सवैया

कंठ मे बैठि बजावत बीन प्रबीन सुधारस गावति बानी।
वेद कढ़ै मुख ह्वै अखरा सुबसीकर मोहनमंत्र निसानी ॥
कोकिल मोर मलिंद मराल लजावन की जुगुतै पहिचानी।
मूरछना उघटैं उतवै मों हिय मूरछना सरसानी ॥३३॥

दोहा

मुख देख्यो बिधु चिबुक गहि, याको रच्यो बनाइ।
अंगुलि गाड़ गड़ी मनौ, साँवल बिंदु सुहाइ ॥३४॥

सवैया

फूल्यो मनौ परभात को पंकज अंजन बिंदु जम्यो तल ताके।
रेख कलंक समेटि मनौ ससि बैठि रह्यो हँसि ऊपर वाके ॥
मोहनमंत्र लिख्यो किधौ मैन सुबीच बिराजत रूप रसा के।
नीलम की किरची सम साँवल ठोढी में बिंदु लसै नवला के ॥३५॥

दोहा

मोमन मत्त गयंद को, गह्यो चहत चित चाड़।
रूप खेत में हेत सों, मयन लगाई गाड़ ॥३६॥

सवैया

स्रौन झुकैं झुमका अति लोल अमोल जराइ जरे जरबीले ।
गोल कपोलन पै झमकैं सम कै न सकैं करहाट कुचीले ॥
मोहि गयो मन देखत ही उपमा अवरेखत चित्त रसीले ।
पूरन द्वै ससिसों मिलिकै उदये जनु द्वै रबि रग रँगीले ॥३७॥

मनहरन

हेरे सुरति हरत मन मोहित कै,
मोहनी कै आदर से बोलत सुभाइ कै ।
हाँसी की झलक लखियतु है सुभग छबि,
भरयो अभिमान रह्यो हारन सोहाइ कै ।
श्रुति सुख दीनी गीत गमक प्रबीनो तेरी
कठ की सहज हित ध्वनि सुनि पाइकै ।
बानी बीन तोरै तार नरद मिरोरै नहि,
बोलै करि सोरै कहुँ कोकिल बनाइकै ॥३८॥

सवैया

तैसि नचैं भ्रुकुटी लट छूटत साँट चलै मिलि मैन गुनो की ।
रग भरी बिहँसें अँखियाँ निरखै दुरि औ झलकैं बरुनी की ॥
नेक मिरोरत ही थहरैं गति लै छहरैं छबि लाल चुनी की ।
बैनन मैन को बैन बजै यह नासिका रासथली नथुनी की ॥३९॥
कैसे बिरचि रचे कुच ये नहि दीठि सकै तकि पुंज सभा सों ।
लाल जरी अँगिया पहिरी बरनी न परै गहिरी छबि वा सों ॥
बाहु लतान में आनि कसे मोहरान लसैं भुजबंद झबा सों ।
साँझ समय ससि भोर के भान समान छुटैं किरनै छतिया सों ॥४०॥
बंदन बिदु लिलार लसै रस को बरसै सरसै रँग दून्यो ।
भाग सुहाग कि लाल गुदी जगही बिच कुंकुम की चित चून्यो ॥

औरन ऐसी लखी न सुनी रति सी तरुनी हिय मानति ऊन्यो ।
केसन सों उत होत कुहू इत आनन सों मन लागत पून्यो ॥४१॥
फूलि रहे दल पकज पै जनु इन्द्रबधून की पाँति घनेरी ।
चूनरि चारु मनौ रति की रँगि रग कुसुभ बुटी बहुतेरी ॥
बैठक लाल गदी मनौ काम की जोर गुनीन चुनीन चितेरी ।
बूंदन सों मेहँदी बिलसै मन हाथ रहै नहि हेर हथेरी ॥४२॥
मानिक से नख कोरन की किरनै सम हीरन के परमानो ।
बिद्रुम अकुर अगुरि पानि चुरै रग सुन्दरता सरसानों ॥
छाप छला मुँदरी झमकै दमकै पहुँची गजरा मिलि मानो ।
जाहिर या कर मोंह करयो रति को सब जीति जवाहिर खानो ॥४३॥
गोरे उबान रही खुभि कै चुभि कै चित मोंह बड़ी चटकीली ।
नीलम तार मढ़ी सुकुमार रँगी रचि कंचन बेलि रँगीली ॥
चंचल ह्वै मिलि ककन संग कहै रतिया बतियानि रसीली ।
मूरति सी रसराज कि राजत नील बहू कि चुरी नव नीली ॥४४॥
काम बिरंचि बिचारि रचे सिगरे रँग चम्पक अंग सँवारे ।
बिद्रुम बिम्ब बधूकन सों अधरा नख औ तरवा छबि वारे ॥
कोमल पाँइ मनोहर हाथ औ आनन सुंदर लोचन भारे ।
फूलेइ फूले सरोजन सों सजि कै कुच मैं कलिका करि डारे ॥४५॥
फूलि रसाल लता तनु तापर पाँति मिलिंदनि की छबि छाई ।
कुदन की पटुली मृदु ऊपर मानहु अंजन रेख सुहाई ॥
बीसबिसे बिस फैलि गयो दग रोमलता उरमो दरसाई ।
पीछे परी छुटि बेनि मानो उर आरसि में प्रतिबिम्बित पाई ॥४६॥
चंचल अंचल होत जहीं सजनीजन बीजन पौन डोलाई ।
केसरि रंग तरंग बढ़ी दुहुँ ओर कढ़ी कुचकोर सुहाई ॥
कंचुकि ऊपर जाहिर होति जवाहिर सी छतियाँ छबि छाई ।
द्वै ससिखड मिले रवि मंडल मानहु फैलि रही अरुनाई ॥४७॥

चौसरि हीरन की उर राजत राछनि सों मुकता बिच साजैं।
कंठ सों हाँसी परी छन मानहु फैलि रहे सब बिंदु बिराजैं॥
छबि चीरधि ते निकसी यह जो तन चीर के छीटन की छबि छाजैं।
पढ़ि मन्त्र बसीकर सो छिरकै कि धौं सीकर मैन स्वरूप समाजैं॥४८॥
ईस बिलोचन पावक सों लपट्यो अँग अंग अंनग परान्यो।
नाभिसुधा रस की सरसी लखि झपि पर्यो यहि मोँह बुझान्यो॥
ताते कढ़ी यह धूम लता अति सूच्छम सुंदर रूप बखान्यो।
सोइ बेरगिनि के बरनी नव रोमवली मन है ठहरान्यो॥४९॥
बावली एक अकास पै राजत कंचन तीनि सिढ़ीन सँवारी।
नील मनीन की राह लसै अति सूच्छम मानहु नागिन कारी॥
कंचन कंज कलीयुग तापर है परभा रवि की छबि वारी।
सारद इंदु समीप रहैं निसि बासर फैलि रहै उजियारी॥५०॥
हसक नाम कहावत हौ तुमपै मधुरी ध्वनि बोलि न ऐहैं।
कानन जाइ लगौ बिछुआ किति किंकिनि यों रसकादु मचैहै॥
ह्वै रहिहै चपवेरनि के यह तौ बिपरीति कला सरसैहैं।
श्रवननि माँह सुधारस नैहै जिती रसना रसना ठहरैहै॥५१॥
घाँघरे में मखतूल झबा झुकि झूमति डोरि अतूल सुहाये।
नीबी की गाँठि गुलाब कली सम सौरभ छूटत हैं सरसाये॥
छोरन कोर किनारिन की किरनै चहुँ ओर छुटैं छबि छाये।
घूमत घेर घनो गहि फेरत काम मनौ चित चाक चढ़ाये॥५२॥
ह्वै ससि बिम्ब नितंब बने सु झँपे झमके लहँगा लहकारे।
जंघन को द्युति सघन को लखि कचन की कदली गनवारे॥
चारु कुसुंभ पिंडी पिडुरी घन घूँघुर नेवर हैं झनकारे।
डूंगुर गोल बढ़ी गुलफैं दुरि दीठि परे जब नीठि निहारे॥५३॥
मोकर कौलनि लाइकै जावक बेलि लसै गहिरी परभा सों।
नूपुर की ध्वनि को सजिकै सुर गावत गीत सँगीत कला सों॥

मंद उठाइ कै जौलौ छुवै छिति छावति तौलौं प्रबाल लता सों ।
राजकुमारि के राजत हैं पद इंदुकला नख बिंदु सुधा सौ ॥२४॥
अंबुज चिह्न लिखे बिधि सुन्दर सेवत पांयन को हरखाने ।
बास रहै स्त्रिय को निसि बासर है सर में सब कौल डराने ॥
या कहँ तौ पगु कै न गवौ गति के अति मंजुल भेद बखाने ।
मत्त गयद गनौ यहि को यह अकुस अंक कहैं सरसाने ॥२५॥
कौलन के दल सार लिये पुनि रंग कुसुंभ घने बहु बोरे ।
आरसि से उजरे छबिवारे बिरचि रचे तरवा अति कोरे ॥
बाँधत बाँक न साँकर है मनौ वा के हिये बहु बार निहोरे ।
या गजगौनि के पाइँ लसैं धुनि पायल की कहती कछु औरे ॥२६॥

दोहा

लिखते नख लौ बरनि इमि, धरनि अधीस लुभाइ ।
निज प्रत्यखता होन की, इच्छा करी बनाइ ॥२७॥

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमलाखडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्याकलानिधौ दमयती वर्णननाम अष्टमः सर्गः ।



नवम सर्ग

सुर-संदेश-कथन

दोहा

नवें सर्ग मों बरनिबो, दूतकाज सुर-राज ।
कहिबो सुर-सदेस को, रचना चारु समाज ॥

सोरठा

दमयंती टकलाइ, सखी सहित अद्भुत भई ।
आनँद सिंधु समाइ, देखत ही वा तरुनि की ॥१॥

दोहा

देवकाज को लौ रहै, छिप्यो बिरह संताप ।
ज्यों पलास के जाल में, अनल भार गति आप ॥२॥
जौ लौ भैमी नयन सर, नल उर लगैं बनाइ ।
तौलौं तामें काम सर, सिर लौं गयो समाइ ॥३॥

तोमर

तेहि देखि कै दमयंति । नल की भई मतिवंति ।
वह ह्याँ कहाँ यह जानि । चुप ह्वै रही पहिचानि ॥४॥

दोधक

देखत ही केतिकौ सकुचानी । मोहि गई बहुतै मृदुबानी ॥
छाइ रह्यो रस अद्भुत ऐसो । दीठि पर्‌यो न जुवा यहु जैसो ॥५॥

तोटक

तुम कौन कहाँ कित आवत हौ । नहि बूझि सकी भय मानत हौ ।
लखिकै न रह्यो मन हाथ मुठी । सखियाँ सिगरी भहराइ उठी ॥६॥

दोहा

बैठी राजकुमारि तहँ, साहस सील सुभाइ।
देखि कृतारथ होति नृप, दूत बिचारि लजाइ ॥७॥

तारक

भरि दीठि लख्यो जहँ प्रानपिया ही।
लगि दीठि रहै तेहि अंगन माही ॥
जब और निहारन को अँग पावै।
पहिले निरख्यो तब अंग लोभावै ॥८॥

दोधक

छोड़ि सकै न लखै अँग जेई। और निहारन को उमदेई।
देखत ही नल होत तमासे। चंचल नयन चलै नटवासे ॥९॥

दोहा

नयननि सों पीवत छकी, आसव सुधा स्वरूप।
आनँद की लहरी लखित, अवलोकत नल रूप ॥१०॥

तारक

नल की सुथरी अति सूछम भौंहैं। गुनजाल मनौ मवके सम सोहैं ॥
तिन माँह फँसे दृग खंजन वाके। तनकौ न डरैं न टरैं रस छाके ॥११॥

प्लवंगम

आनन लोचन पाँइ हाथ जलजात हैं।
नयन मिले अकुलाइ देखि निज गात हैं ॥
छाइ रह्यो मन मोह महा सुखसों भर्‍यो।
जीवन मुक्त अमुक्त स्वाद चितमें भर्‍यो ॥१२॥

सोरठा

आवत ही उत कोंद, सिह्व चालि चातुर नृपति।
अद्भुत भरी बिनोद, आदर को उद्यत भई ॥१३॥

दोधक

जानत आदर की परिपाटी। रीति यहै तिन उत्तम ठाटी।
जो परनाम करै पग धोवै। सुंदर बैनन ताप बिगोवै ॥१४॥

तोटक

निज नैनन को तिनुका करिये। तहँ आसन भूमि हिये धरिये॥
बुझिये सुख बैन भले कहिये। इमि पूजन आगत को लहिये ॥१५॥

[दमयन्ती बचन]

सयुत

इत आइ आसन लीजिये। तुम ओर देखत जीजिये।
छिन एक ह्याँ पगु धारिये। श्रम को अयासु निवारिये ॥१६॥
नव कमल कोमल पाँइ हैं। कहिये कहाँ लगु जाइहैं।
वह देश पूरन भाग है। जहँ रावरो अनुराग है ॥१७॥
पतिभार सों बन में भयो। वह देस जो तजि कै दयो।
तुमको कहे गुनधाम हैं। वह कौन धन्य सुनाम हैं ॥१८॥

हरिगीतिका

निज बाहु के बल सों तरयो तुम सात सागर चाइ सों।
सब भाँति भट रच्छित इहाँ पहुँचे तहाँ पर भाइसों॥
यह करयो है अति बिमल साहस सूरसार अपार कै।
वह कौन इच्छित काज है हमहूँ सुनैं निरधारि कै ॥१९॥

भुजंगप्रयात

फले भाग्य सों पुन्य ते नयन तेरे।
सुधा स्वादु लै रावरी ओर हेरे।
लख्यो है न यों मैन में देहधारी।
भई हीन ऐसी भई ज्यों सुखारी ॥२०॥
लख्यो रावरो चारु है रूप जैसो।
अबस्यै फिरो है पराक्रम तैसो॥

चहुँ ओर छायो तपै तेज नीको।
करयो बास है देव के लोक ही को ॥२१॥

सुपथ

बस्त्र दोइ नहि एक बखाने। कामदेह नहि धारन आने ॥
चिन्ह चारु तिनते छबि छाये। रूपरासि सविसेष बताये ॥२२॥

तोमर

जेहि बस में तनु लीन्ह। तेहि को कृतारथ कीन्ह।
बहु सिंधु सों अधिकातु। जेहि को भयो ससि तातु ॥२३॥

दोहा

अलबन्ध बिद्या निरखि, जान्यो देस स्वरूप।
आदर के कछु बचन कहि, बरनन करयो अनूप ॥२४॥
आपुहि उठि आसन दयो, कर गहि कै बैठारि।
अरघादिक पूजन करयो, उदयाचल रविवारि ॥२५॥

[दमयन्ती बचन]

गीत

हर नयन कुंड हुतास मैं निज देह होमि बनाइकै।
अब मयन ह्वै तुम अवतरे तेहि पुन्य के फल पाइकै ॥
बिधि को मनो द्युति कोस अक्षय येकठो करिकै धरयौ।
सियरात देखत रोम रोम बिनोद यों उरमें भरयौ ॥२६॥

दोधक

नयन दुऔ कर सायक तेरे। कोटि करैं गति के अति फेरे।
राखत हैं ससि आनन नेरे। बाहन के हित चाहत नेरे ॥२७॥

सोरठा

रासि करी यक ठौर, तुम सब जग परभान की।
भ्रमत भ्रमत चहुँ ओर, खिलाबीन बिधुकर सजै ॥२८॥

चौपाई

महो सफल नरवर तुम जोहौ। स्वर्ग भाग अति जो सुर सोहौ ॥
उरग बंस भूषन तुम जो तौ। सब ऊपर पाताल गनौ तो ॥२९॥
या संसार सिंधु में दूजो। नल प्रतिबिम्ब रावरो पूजो ॥
दोई एक रूप अति रूरे। बिधि के सिल्प अचिन्तित पूरे ॥३०॥

उपेन्द्रवज्रा

बड़े भये संसय चित्त मेरे। तुम्हैं प्रभा पाटल रूप हेरे ॥
पीयूष सवाद कछूक बातें। सुन्यो चहैं कान तृषालु या तें ॥३१॥

दोहा

दमयंती के अधर नव, जपाकुसुम धनु तानि।
बचन काम सर ये हने, बिध्यो भूप मन आनि ॥३२॥

सरसी

निज अनुराग सुधा श्रवनन सो पीवत रह्यो अघाइ।
दुर्लभ सुख जो बेनुभाव तो हित सुख क्यों न सुहाइ ॥
बिरह भार संताप दाबि हिय धरम धुरंधर धीर।
खोल्यो स्रोत पियूष सरस रस बोल्यो नल गम्भीर ॥३३॥

[नल बचन]

नीलस्वरूपक

देव समाजहिं ते हम आये। चारि दिगीसन ठेलि पठाये ॥
आपुन को जु संदेस कहे हैं। ते हिय माँह बनाइ लहे हैं ॥३४॥
जो किरपा करिके सुनिये जू। मोहि कृतारथ कै गुनिये जू ॥३५॥

तोटक

जबते तुम बैस कुमारि भई। सुकुमारि महा रति रूप छई ॥
तबते सुर चारि न चैन गहैं। तुव सेवकता चित माँह चहैं ॥३६॥
सुरनायक और सलिलेस सही। यमराज हुतासन प्रीति कही ॥
सरपंच प्रपंचन में परि कै। अब तो सरनागति हैं डरि कै ॥३७॥

तारक

नवयौवन सैसव ये नृप दोऊ । अब तो तन राज करैं बलि ओऊ ।
अवलोकि दुराजु भयो मनभायो । तिनको चित धीरज मैन चुरायो ॥३८॥
अब रावरीयै तिनके मन आसा । नहि पावत हैं अपनी तिय आसा ।
तुव यौवनके संव ही उदयो हैं । अनुराग बढ़्यो अति बासव को ॥३९॥

सवैया

इकबार महानिसि मे अकुलाइ गयो दिसि पूरब की रजधानी ।
पूरन चन्द उदोत कर्‌यो चहुँ ओर छुटी किरनै सरसानी ॥
देखत ही बिरहागि बढ़ी उर सूखत सूरज की मति आनी ।
कै कै हजार बिलोचन लाख कराल चितौनि तकै अभिमानी ॥४०॥

दोहा

तीनि नयन के बैर सों, काम भयो यहि भाइ ।
सहस नयन के बैर सों, कौन दसा ह्वै जाइ ॥४१॥

स्वागता

इन्द्र रीझ नहि नन्दन माहीं । सूल तूल पिक बोल सुनाहीं ।
भाल इन्दु अपराध बिचारे । ज्यों डेरात सिव ओर निहारे ॥४२॥
अंधकार चहुँ ओरन छायो । काम बान रज सों उपजायो ।
ह्वैहू रहो सुरैनि उजेरी । सौंचु कीन पिक बानि घनेरी ॥४३॥

लक्ष्मीधर

सक्र को हाथ ही हाथ राखै जहीं । और ते और ह्वै सेज साजै तहीं ॥
और के दारिदै जे हरैं बात सों । ते भये दारिदी रूख बेपात सों ॥४४॥

भजंगप्रयात

जबै काम के चाप टंकार छूटैं । तबै आइ कै इन्द्र के कान फूटैं ॥
प्रबोधै भली भाँति सों जीव जैसे । सुनै कौन निरबाम संवाद ऐसे ॥४५॥

मालिनी

मदन अनल पीड़ा छेम को तोरि लीजै।
कमल नव कली लै सेज को साज कीजै॥
सरस मधुसमै हूँ स्वर्णदीमै प्रकासी।
सिसिर रितु सरीखी छाय राखी उदासी॥४६॥

भुजगप्रयात

सुनासीर यों भाँति है देह छामे। रहै रोज संताप सों मूरछा मे।
न जानै सुखौदु:ख औ सीत घामै। रहै प्रान जो रावरी रीझ यामै॥४७॥

दोधक

याचक जा तनु को निज पूजे। मूरति जो सिव की कहि दूजे।
सोउ दिगीस तुम्है चित चाहै। जा जग पावक नाम सराहै॥४८॥
तो कहँ पाइ मनोभव ऐसो। ताप कर्‌यो तियको तनु तैसो।
आपुन तापहि को दुख पावै। वा डर औरन को न सतावै॥४९॥

[दूती बचन]

झूलना

हर नयन में बसि आगि ह्वै इन दह्यो जब मार।
तेहि कोप सों तिन शुद्ध ह्वै तब कह्यो बैर बिचार॥
अब रावरे तिरछे बिलोचन में बस्यो सुखसार।
तनु जारि छार कर्‌यो हुतासन यों भयो उद्धार॥५०॥

मोदक

काम खर्‌यो सर फूलन मारत। भेदि हियो सत टूक न पारत।
होमहु मैं कोउ फूल चढ़ावत। दीखि सिखी हिय मों डरु पावत॥५१॥

सवैया

ईंधन काम कर्‌यो हियरा तेहि माँह मृनाल लता लपटाई।
आगि अनंग मनो सुलगी निकसी नव धूम सिखा छबि छाई॥

ऐसे जंजाल पर्‌यो बिरहा बस बेहद व्याकुलता सरसाई ।
बार हजार करी बिनती पर रावरी मै न कछू रुचि पाई ॥२३॥

नीलस्वरूपक

चंदन की दिसि को मन भौतौ । जा सह सूरय है पुतरौतौ ।
वा यमराज धर्‌यो चित तो मै । धीरज काम सिखी महँ होमै ॥२४॥
सेवत हैं मलयाचल ताको । नील प्रवालन कै रचना को ।
जे दुखहू नहिं छाँड़त सेवा । जानत प्रान तिन्हैं नर देवा ॥२४॥
अग सबै तेहि के हित लागे । मानहु काम सुकीरति जागे ।
कै तोहिं बाहु प्रतापनि छाये । तौ बिरहानल जोर सताये ॥२५॥

तोमर

इमि है भयो यम दीन । निसि द्यौस चैन न लीन ।
अब रावरी मति पाइ । तेहि सों कहैं हम जाइ ॥२६॥

सवैया

केसर सी जहँ फूलत साँझ को वा दिसि को पति सुंदर जो है ।
चेतु प्रचेतुहु को तुमही में लग्यो निसि बासर हो मन मोहै ॥
यों बड़वानल ताप करै न सदा बिच सागर के बसिबो है ।
ज्यों परताप करे जल पालक पक भयो सब सूखत सोहै ॥२७॥

प्रमाणिका

मृनाल दंड जो धर्‌यो । हिये बिचार सो कर्‌यो ।
मनोज बान जे भरे । हजार छिद्र ये करे ॥२८॥

हरिगीतिका

यहि भाँति देव त्रिलोक के पति सरनि आवत रावरी ।
निज चरन सेवकता चहैं तुव रूप सोभ सुधा भरी ॥
तुव नयन बंक हथ्यार लै अति दर्प दर्प हियो करै ।
सुरलोक माँह अलोक लागत कौन को न हियो जरै ॥२९॥

चर्चरी

भोर रावर है स्वयवर लोक मे चरचा चली।
सार धार सुधा परी चहुँ देव काननि मै भली॥
रावरे मृदु ओठ के रस स्वाद लोभहि सों भरे।
देव लोक विमान मारग त्यागि कै छिति अवतरे॥६०॥
है नजीक वहौ जहाँ छितिमें विभूषित हैं खरे।
मोहि भेजि दयो इहाँ ढिग रावरे निहचे धरे॥
हैं सँदेस कहे कछू तिनको कहौ अब चाइ सों।
आपहू सुनि लीजिये करि प्रेम पूरन भाइ सों॥६१॥

सवैया

पीन उरोजनि सों मिलिकै इक एक करी बिनती है जु तेरी।
मैन को मूरछा आनि जगै जब एक तू जीवन मूर घनेरी॥
केतक द्यौसनि लौ तरसै दग प्यास स्वरूप रहे भरि तेरी।
ह्वै परसन्न भुजागल मेलि सजै परिवेष की रेख सुफेरी॥६२॥

चचरी

काम ताप तुषार से दग कोर सों हँसि हेरि ले।
दूरि कै तन ताप को उर मै न पीर निबेरि ले॥
देवि जारति है वृथा हम काम बाननि सों जरे।
और ठौर न है हमै अब रावरे तकि पॉ परे॥६३॥

सवैया

याचत हैं तुमको नृप द्वार हजारन की बिनती अनुरागे।
पै हमको यह आसरो एक जु आइ तिहारे हैं पॉयनि लागे॥
जो छल चूक गनौ कछु या महँ तौ यह न्याउ अनग के आगे।
ज्यों जिय माहि रही मिलि त्यों अब आइ मिलो छतियाँ रस पागे॥६४॥

गीतिका

जिय मोँह तो कछु है दया दिव लोक को सुख लीजिये ।
छिति मोँह जो रुचि रावरी सुखवास तौ छिति कीजिये ॥
उपहार फूलन के करौ तुम पै न भावति है हमैं ।
पग कौल सुन्दर रावरे हम सीस छ्वान को छमै ॥६५॥

सोरठा

सुधासरनि कल नाहि, सुख कैसो अपसरनि मै ।
रीझ न चंदन माहि, रुचि बन्दन तुव भाल पै ॥६६॥
मदन अचानक मीच, बचि न सकत पीयूषहू ।
अहे अधर रस सींच, स्वादु सुधा सों सौ गुन्यो ॥६७॥

घनाक्षरी

केतु सो सहित धरे धनुष मकर जर्‍यो,
हर के प्रबल नयनानल में परिकै ।
अब अवतार तेरे मन हीं सों पायो पुनि,
काम तव वेई षटक ठाढे धीर धरिकै ।
भौहनि को चाप गानताननि के बान तेरे,
नयननि सों मीनध्वजा राखति फहरिकै ।
कंचन अडोल गोल कुचन गाढोई भयो,
भेदतु तिलोक जोर जोरन जजरि कै ॥६८॥

सवैया

सोवत में निरखौ तनु की द्युति मोहि रहीं अँखिया अति ऐसी ।
गान में कानि अलिंगन में तनु नाक सुबास छुटै मुख जैसी ॥
तुव ओठ सुधारस में रसना गुन रावर में मन की मति ऐसी ।
तुम आज करी करसायल अंगनि मार सिकार की रीति अनैसी ॥६९॥

तोटक

यहि भाँति संदेसन की अवली । रसना तल में लिखि मै सबली ।
फल मोहि कृपा करिकै करिये'। इनमें सुर एक हिये धरिये ।।७०।।

दोहा

सुरपति पति ह्वै उचित अति, समन संग समभोग ।
अनल समंगल सों सुमिल, बरुन तरुन तुम्र जोग ।।७१।।

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमडलाखडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ सुरसदेश कथनो नाम नवमः सर्ग ।



दशम सर्ग

नल-परिचय

दोहा

पच दूगुने सर्ग में, यह बरनन उर आनि ।
उत्तर प्रतिउत्तर बचन, ह्वैहै नल पहिचानि ॥

सोरठा

सुनै भौंह के भाइ, प्रगट उदासी को कहत ।
सुनत तऊ चित लाइ, पिय मुख निकरत सुर गिरा ॥१॥
सुनी अनसुनी कीन, बानी प्रगट अनाकनी ।
भैमी परम प्रवीन, नृप सन्मुख नैनन बिहँसि ॥२॥

[दमयन्ती बचन]

तारक

हम तौ तुमसों कुल नामहि बूझे । तुम औरहि और कथान अरूझे ।
कहिये यह कौन बड़ी चतुराई । छल की रचना रचि आपु चलाई ॥३॥

दोहा

कहूँ प्रगट अप्रगट कहूँ, उत्तर दयो बनाइ ।
चतुर सरस्वति रावरी, नदी सरस्वति भाइ ॥४॥

तोमर

इमि रावरे सुनि बैन । निहचै भयो चित चैन ।
अब आप नाम पियूख । तेहि की रही भरि भूख ॥५॥

लीला

रतन नायक हो भये यह कौन है वह बसु ।
दूरि भागत है तमोगुन देखि ज्यों रबि-अंसु ॥

छाँड़ि कै कुल स्थान ये कहिये कृपा करि हेरि ।
ह्वै रही चुपचाप आपन लई नयननि फेरि ॥६॥

[नल बचन]

इदु

कुल अभिधान हमारे बूझहि जौन ।
कहियतु है नहि जानि प्रयोजन कौन ॥७॥
फल न होइ वह बैन कहे बकवादु ।
अल्प बचन फल अधिक सुबानि सवादु ॥८॥
नाम जानि कै करियतु जग व्यवहार ।
हम तुम यह साधारण कह संसार ॥९॥
मेरो जो कुल समल सुन्यो केहि काज ।
कुल उज्ज्वल हम दूत बड़ी यह लाज ॥१०॥

मनहंस

यह जानि कै नहिं मैं कही कुलनाम है ।
तुमहूँ हठौ न तुम्हैं कहा यह काम है ॥
रुचि रावरी बहुतै बड़ी निरधारिये ।
ससि बंस के हम हैं करीर बिचारिये ॥११॥

इन्द्रवज्रा

आचार की बात बड़े बतामैं । लीजै न क्यों हूँ मुख आप नामैं ॥
राजा रह्यो यों अहितापकारी । मानौ सिखी सारद मौन धारी ॥१२॥

[दमयंती बचन]

सवैया

जो तुम हो ससिबंस बिभूषन संसय तौ न टरै चित मेरे ।
बोलुँगि हौं हुँ न तौ लौ सुनौ नहिं जौ लगि नाम के आखर तेरे ॥
साधन की पदवी तुम तोरत तौ सत बैन कहैं हम टेरे ।
जासों न जान पिछानि कछू मिलि ता सँग कौन करै हित हेरे ॥१३॥

तोमर

सुनि बैन ये नलराज। मनमें लहे सुख साज।
दग सामुहे करिलेतु। मुसुकाइ उत्तर देतु ॥१४॥

[नल बचन]

प्रद्धटिका

सुनि जलजनयनि मृदुसुधाबैनि।
अनुराग रासि मम बचनकैनि॥
करि देवि सफल मेरो अयासु।
सजिये दिगीस सँग रमनि बास ॥१५॥
कहिये सँदेस चित में बिचारि।
जेहि होहि मुदित मन दानवारि॥
चहुँ देवन के मन सांति होइ।
कहिये बिचारि अब बचन सोइ ॥१६॥

सोरठा

ज्यों ज्यों लागत ढील, करत खुसामद रावरी।
त्यों त्यों होत कुचील, चारौ सुर चिंता बिकल ॥१७॥
बासव नयन हजार, हेरत ह्वैहैं मम डगर।
धिक मौ को संसार, परकारज में सिथिलता ॥१८॥

तोटक

पुहुमीपति मौन गह्यो रहि कै। सब देव सँदेसनि को कहि कै॥
दमयंति रही सुनतै रसि कै। चहुँ देवन की मति को हँसिकै ॥१९॥

[दमयन्ती बचन]

चौपाई

जलपति मो ढिग तोहि पठायो। औ परेत राजा पहुँचायो॥
अरु कौसिक के कारज काजे। ऊरध-मुख-सिख के हित साजे ॥२०॥

दोहा

देव कुमति अति व्यंग्य में, प्रगट करी सुकुमारि ।
अब प्रकास बोली बचन, रचना चारु बिचारि ॥२१॥

[दमयन्ती बचन]

सयुत

यह कौन सों सुभ जोग है । जग में हंसी अरु सोग है ।
जहँ ताल हसन सों सनै । बगुलीन को तहँ को गनै ॥२२॥
झमकैं जहाँ तिय ईसुरी । तहँ मानुषी कत बापुरी ॥
नहि स्वर्ण को जेहि को जुरै । तहँ पीतरयो गहनो फुरै ॥२३॥

तारक

सुरभाखत ही अपनी मन भाई । उपजी मम कानन में बधिराई ॥
सम ही सम योग संसार सराहै । हरनी कहुँ मत्त गयंदहि चाहै ॥२४॥

सोरठा

कहि कछु ऐसे बैन, कह्यो सखी सों कान लगि ।
दूत ओर करि नैन, कहि सखि मेरी ओर ते ॥२५॥

दोहा

देवदूत तुम अति चतुर, पतिव्रत की गति जोइ ।
लाज भरी मेरी सखी, कहति सुनौ अब सोइ ॥२६॥

तोटक

मैं तो बिचारि चित मे नल राज राख्यों ।
त्राहौं न और बिबुधै यह साँच भाख्यों ॥
ये ही सतीन महँ रीति चली सुवेखा ।
जैसो चलै न बन पाथर पुंज रेखा ॥२७॥
मेरो हियो जो कबहूँ नल छाँड़ि औरै ।
चाहै अयान पन में जब नींद दौरै ॥

तो जानि कै बरन काज हमै अरूझैं।
चारौ दिगीस अपनी मति क्यों न बूझैं ॥२८॥

द्रुतविलम्बित

करहि देव अनुग्रह आपनो। मनुज देह करैं हम आपनो।
देहि भीख हमहि यह आसही। नल मिलैं हमको सबिलास ही ॥२६॥

प्रद्धटिका

सुनि और प्रतिज्ञा मम कठोर। दृढ़ करी चित्तमें जानि जोर।
जो होइ न ब्याह नल सग माँह। तनु त्याग करौ तौ अनल माँह ॥३०॥
गल बाँधि फाँसिकै अन्त लेउँ। कै जल अगाध में जीव देउँ।
जब होत जतु आपदा बृद्धि। नहि दोख होत कारज निसिद्धि ॥३१॥

दोहा

जब बरखा में होत है, मारग जल संयोग।
बाट छाँड़ि ऊबट चलत, सकल सयाने लोग ॥३२॥

सारवती

मै तिय जानि न ज्ञान लहौ। का बिधि उत्तर देन कहौ।
हौ तुम ही सब भाँति भलै। सो कहिये जेहि माँह फलै ॥३३॥

चम्पकमाला

दूत भयो यासों मनहोनो। बोलि कह्यो तब बैन नवीनो।
प्रीति समय तैं रीति प्रकासी। आनि कछू तामें रिस भासी ॥३४॥

[नल बचन]

सोरठा

अहो नारि सुकुमारि, तुम चतुरै सब जगत पर।
मैं हूँ लई बिचारि, जैसो मति कछु रावरी ॥३५॥

चर्चरी

देवता तुमको चहैं निज प्रानसों सरसाइ कै।
आप हौ उनते उदासिन कौन सों गुन पाइकै ॥

दरिद दीरघ मैं कहूँ निधि जाति है न बिचारिकै ।
मूँदि कौन कपाट ता महँ रोकि लेत निवारिकै ॥३६॥

सवैया

मानुष जाति न देवहि चाहति आप नवीन कही यह बानी ।
दूरि करी गुरु हू हित ते नहि तो हिय ते ग्रहदोस नसानी ॥
देवन की गति पावत मानुष देवकृपा सबहीं ते बखानी ।
पारस के परसे बिन लोह न हाटक कांति गहै मनमानी ॥३७॥

शरभ

सुरपति तजि तुम नल को चहती । पुनि निज मति तुम अतुल सरहती ।
कदलि तजत मुख धरियत बदरी । करम सरतु कुमति मति निदरी ॥३८॥

मनहस

तप आगि मे तनु होमि कै सब संत है ।
सुरलोक के फल लेन को बिलसत है ॥
सुरलोक सों तुम ओर आवत चाइसों ।
तुम ताहि क्यों न चहौ कहो केहि भाइ सों ॥३९॥

सवैया

जो तुम बंधन कै तनु तजिहौ तौ तुम बासव के घर जैहौ ।
जो जरिहो किरपा करिहौ सब अग हुतासन के सियरैहौ ॥
जो परिहौ जलमाँझ अगाध तवै हियरा बरुनै हुलसैहौ ।
और उपाय जो कै मरिहौ तब तो जमराजहि लै सुख लैहौ ॥४०॥

दोहा

हैं निषेध कै बिधि वचन, यह नहि जानो जात ।
व्यंग्य बचन सुनि रावरे, चित चिता सरसात ॥४१॥
तौ सरस्वति रस भौर परि, भ्रमतु महा मम चेतु ।
कहि दीजै अब लाज तजि, केहि दिगीस सन हेतु ॥४२॥

चौपाई

ऐरावत करि कुंभ सँयोगी । जो पूरब दिसि को रसभोगी ॥
सहस नयन सो देखन लायक । तो समान सुन्दर सुरनायक ॥४३॥

सोरठा

तेरो संगम पाइ, सजै सकटक अग हरि ।
रहे सची बिलखाइ, मनौ नयन कंटक लगे ॥४४॥

तोटक

हम तौ अपने जिय जानि लही । तुम पावक सों अनुरागि रही ।
कुल क्षत्रिय तेजवती तुम हौ । तेहि के अति ओजहि सों उमहौ ॥४५॥

प्रद्धटिका

तनु ताप जानि तासों उदास । जनि होहु सती तुम हो प्रकास ।
जब खेत परीक्षा बार बार । सिखि होतु ससीकर में तुषार ॥४६॥
तुम धर्मसील गुनज्ञान गेहु । किय धर्मराज सों अधिक नेहु ।
मै कह्यो देखि मन में बिचार । यह भयो योग संयोग सार ॥४७॥

तारक

मलयाचल में निज जाइ बसौ जू । मृदु चंदन के बन में बिलसौ जू ॥
ऋषिराज अगस्त्य असीसन पावो । कल या बिधि लो मिलि मोच नसावो ॥४८॥

सोरठा

सिरस कुसुम सुकुमारि, पति जलपति तोको उचित ।
ज्यों रजनी निरधारि, मिली सीतकर सों हरखि ॥४९॥

चन्द्रमाला

तजि बैकुंठ जहाँ धामै हरि मिलि कमला सग सोवैं ।
सुरनर नाग सिद्ध किन्नर मुनि हाथ बाँधि पग जोवैं ॥
ता रत्नाकर माहँ रैनि दिन होइहै बास तिहारो ।
लहरी ललित केलि जल साजौ मिलिकै प्रान पियारो ॥५०॥

चर्चरी

आपु आजु बसौ इहाँ तुम ओर देखत जीजिये ।
जाइगो दिन बीति कै मिस प्रीति को रस लीजिये ॥
है लिखी तसबीर ज्यों खगराज जो नलराज की ।
सो मिलै छबि रावरी सम एक सील सुभाइ की ॥५७॥

नीलस्वरूपक

साँचु ठगे बिधि लोचन तेरे । जो तुव आनन ओर न हेरे ।
भोर बिलोक नलै फल लेहौ । भूतल चन्द्र सुधाहि अचैहौ ॥५८॥

हंसगति

अब देव सँदेस न भाषौ । यह दंतकथा धरि राखौ ।
हम माँगत अजुलि जोरे । यह बोलि रही मुख मोरे ॥५९॥

सोरठा

ज्ञान दया अरु धर्म, तीनि रत्न जिनहूँ कहे ।
कहौ कवन यह कर्म, ताहि तजे पावै नरक ॥६०॥
सुनत सुधा से बैन, मदन अनल आहुति परी ।
करि सकुचैहैं नैन, गनत आपुको अदय अति ॥६१॥

दोहा

बिध्यो मरम आरत बचन, दूत धरम थिर नेहु ।
दीह साँस मुख छोड़ि नृप, कपु कंटकित देहु ॥६२॥

[नल बचन]

प्रद्धटिका

सुर रूख रहत सब इन्द्रधाम । वे देत सदा अभिलषित काम ।
तुमको सुरेस माँगै पुकारि । गहि देइ तुम्हैं तब हिय बिचारि ॥६३॥
हिय तो बिवाह अभिलाष आनि । रचि अगिन यज्ञ बिधि साँचु जानि ।
निज माँह होमि निज अस भाग । गहि लेइ तुम्हैं निहचै सभाग ॥६४॥

तोमर

यमराज की दिसि ईस । नित हैं अगस्त्य मुनीस ॥
बरदान को संभाव । जगमें प्रसिद्ध प्रभाव ॥६५॥

दोहा

तुमको जाँचत जाइ यम, जो तिनसों कर जोर ।
तो तोंको ऋषिराज गहि, देहि तुम्हैं बरजोर ॥६६॥

तारक

जलपालक के सुरभी बहुतेरी । तुमको तह जाँचत जो करजोरी ॥
तब तौ वहिके घर ही तुम जैहौ । सुर सोक करे नल को नहि पैहौ ॥६७॥
जब इन्द्र मने करिहैं निजनारी । करिहैं न सची मखकी रखवारी ॥
जब जूझ स्वयंबर में भरि है जू । नहि माल गरे नलके परिहै जू ॥६८॥
गनिहैं न अचारज की बहु फूंकै । करिहै अपनी नहि आगि भभूकै ॥
बिनही सिखि साखिन ब्याह बनैगो । नल सों मिलनों केहि भाँति सनैगो ॥६९॥
जलनायक जो यहि भाँति रुठैहैं । छिति ते सिगरे जल ऐंचि उठैहैं ॥
केहि भाँति सँकल्प पिता करिहैगो । कर तव नल के कर पै धरिहैगो ॥७०॥
इन बातन ही यमराज हठैहैं । अपनो इक किंकर मीच पठैहैं ॥
तुमही कहँ कै नल को हरि लैहै । सब ही दुख सागर को भरि दैहै ॥७१॥

दोहा

ताते मो हित की कही, चित धरि राजकुमारि ।
बरिये आप दिगीस यक, चारौ माहँ बिचारि ॥७२॥
जहाँ होत सुर विघ्नकर, करत चित्तमें रोख ।
कर में धरो न पाइये, है करमै को दोख ॥७३॥
नल मिलाप की हानि गनि, सुनत दूत के बैन ।
बरसावन लागी कुँअरि, सावन भादौ नैन ॥७४॥

सवैया

कमलन सों अलिनी अलि ज्यों दुहुँ नैनन सों अँसुआ युग टूटै ।
काजर नीर मिलै झमकै परि पीन उरोजन पै छवि लूटै ॥
नील मनीन से चचल चारु लसैं छिन आखिन सों नहि छूटै ।
द्वै रवि बिम्ब धरे जनु भाल पै बाल सनीचर से चित चूटै ॥७५॥

प्रद्धटिका

चहुँ ओर भ्रमत जोवतु अपार । अति धुनत सीस बगराइ बार ॥
तनु उठी लपट बर मदन झार । पियराइ गईं तजि कै सम्हार ॥७६॥
इग बैठि गईं सूझत न आन । मति भई मूढ़ जिमि बिगत प्रान ॥
नहि होत जानि नलको मिलाप । तब करन लगी बहुतै बिलाप ॥७७॥

[दमयन्ती बचन]

द्रुतविलम्बित

अनल मैन करी अभिलाष मै । सजहि बेगि हमै किन राखमै ।
निषध देस चलौं उड़ि बायु सों । समै पाइ मिलौ नल पाँइ सों ॥७८॥
ऐ बिरंचि बडे तुम धीर हो । परमनोरथभजन बीर हो ।
जियह कोटि बरीखन जाइ कै । पियहु मोतन प्रान अघाइ कै ॥७९॥

तारक

कहि तु हिय जो तुम लौहमये हौ । बिरहागिन सो कुंभिलाइ गये हौ ॥
सर फूलन भेद तुमै न अनैसो । अब आपन बज्र केहो तुम कैसो ॥८०॥
अति तापथ मान भयो हियरा है । अजहूँ जिय ताहि न छोड़न चाहै ॥
यह कौन बिचार सजीव सनो है । युग चारि सती अत मै हँसनो है ॥८१॥

मनहरन

नयन हमारे पूरे पातक अयन साँचे,
जिनके मनोरथ बिफल भये आइकै ॥
अँसुआ प्रबाहन सों धोवत रहत नित,
तऊ जरत हजार बार बार अकुलाइकै ॥

चारिहूँ दिगीसन के दया को समुद्र सूख्यो,
जा सों मिटि जात ताप तीनहूँ बनाइकै।
जिनके कटाच्छ एक मोहूँ ते सरस कोटि,
तरुनी तुरग तिन्हैं मिलै सरसाइकै ॥८२॥

सवैया

ये जुग से छिन बीतत हैं दिन मीच न मोहि कहा सहिहौगी।
प्रानपियारो छुटै मन ते न छुटैं मन मोर यहै चहिहौगी॥
आँसुन के झर सों निसि द्यौस बड़ी बरखा रितु कै रहिहौगी।
हेरि यहै सुर सोइ गये बिन काज बिलाप कहा करिहौगी ॥८३॥
ये नलराज तुम्हैं चित में धरि दासि भई निहचै हम तेरी।
देखतु हौ निज नैनन सों अब होति है जो कछु जातना मेरी॥
बाग के ताल तलैयन में नित ढूँढि फिरी बहुतै कर फेरी।
सोऊ बिरंचि लये हरि कै खग डारि दई जिन पाँयन बेरी ॥८४॥
तेरे बियोग गई तजि कै तनु एक तिया दमयन्ति बखानी।
रावरे कानन में परिहै नल यों चरचा चलि कै सरसानी॥
आप दया तब तौ करिहौ सुनि कै करुना रस की यह बानी।
अंजलि जोरि कहौ तुम सों सुधि कै सजियो भरि अंजलि पानी ॥८५॥
अंबुज नैन बियोग भरी बिरहाकुल बैन कहे दुख भीने।
सो सुनि कै उर लागि उठी बिरहागिन की लपटैं अति पीने॥
बासव काज सबै बिसरयो नलराज भये सुमहा मन दीने।
बैठि रह्यो तेहि ठौर ठयो जनु बावरो सों पियरो रँग कीने ॥८६॥

[नल प्रलाप]

कारज कौन बिलाप करै मृगलोचनि सोचनि को तज दीजै।
पंकज सों मुख छाइ रह्यो मुक्तागन आँसुन बिंदुन भीजै॥
आगे खड्यो नल है यह तो तसलीम करै किरपा करि दीजै।
कै तिरछी दृगकोर निहारि सुधारस प्यास बुझै तब जीजै ॥८७॥

दोहा

बिन्दुमती की चातुरी, तैं जु करी निरधार।
तोही ते ससार यह, निहचै भयो स-सार ॥८८॥
जलजपात पै इंदु ज्यों, कर पर धरे कपोल।
अँसुअनि के मुक्तानि सों, लसत हार हिय लोल ॥८९॥
नैनन जल कज्जल मिलित, हौ पोछौ निज हाथ।
पग पराग रजभूरि हौ, नैनन सों घसि माथ ॥९०॥

त्रिपदा

मान करौ तुम जोपै। दोष कछू लखि मो पै॥
तो बहुतै अनुरागौं। हौं तुम्र पाँयन लागौ ॥९१॥

मनहरन

रूप अभिमान भरी बोली धों न बोलो बैन,
नैन सों निहारे होत कौन सुप्रयासु है।
कलपलता है तैंहीं याचक समाहैं सब,
मोको दीठि दान मैं कृपनता निवासु है॥
मधुर अधर कोर कीजिये बिहँसि सित,
भौह की ललित लोल लीला गति लासु है॥
कीजिये हुकुम मोहि अरज महेस जू की,
चरचा को करौ नेह चरचा प्रकासु है ॥९२॥

सवैया

आँसुन की बरखा रितु को तजि सादर कै मुसक्यानि जुन्हाई।
लोचन खंजन खेल करै मुख पंकज कांति चढ़ै सरसाई॥
सार सुधारस केलि कथा कहिये मम कानन मानि मिताई।
चम्पक से तनु अक अभूषन ह्वै मिलि कठ की माल सुहाई ॥९३॥
काम नराचनि को ठगिबो सबु तैं मृगनैनि सिख्यो सरसान्यो।
ज्यों मिलती हिय भीतर त्यों तनु बाहर भेंटन को अकुलान्यो॥

तेरोइ रूप अनूप छयो मन नैनन को बहु कोचु बखान्यो।
मारन मार लगै किन बाननि प्राननि मै न कहूँ डर आन्यो ॥६४॥

हसगति

तुअ ओंठन को रस चाहौ। मधु सीध सुधाहि सराहौ।
गिरिश्रृंग उरोज बिलासौ। नख इंदुकला परकासौं ॥६५॥

मनहरन

मनमथ मान को नटनु तैं करति नित,
रोमावलि नवल ललित सूत्रधारी है।
तेरे अग हार में सरस रुचि नायक की,
सीस फूल द्विजराज हूँ लौ हाँसकारी है॥
नव रस भाव अनुभाव के भवन नीके,
लोचन अनन्त गति चतुर सँचारी है।
अभरन तार सुकुमार ये बजत बीन,
मोहत प्रवीन तैं नवीन बैसबारी है ॥६६॥
सोभन सुरेस अठ बरगु सुबेस लिख्यो,
मृदुल अधर पर तेरे बिधि चाइ सों।
लगन भली मैं लयो तो तन मनोज राज,
भयो मन भायो काज सरल सुभाइ सों॥
लगत दसनछत रोचना तिलक ताहि,
करमैं बनाइ सब अंगनि बनाइ सों।
जीति कै सुरत रैनि प्रीति कै मुदित मन,
गहि गहि पाँइ जाइ मिलो रसराइ सों ॥६७॥

मृदुगति

बोलि हँसि मृदु बैन। हम पै करुन करि ऐन।
रस अधर चाखि अभेव। हम करै उरसिज सेव ॥६८॥

दोहा

ज्यों गिरिजा गिरि सयन की, सीतकरनि की रैनि ।
हों नल हौ ताकी तुही, प्रान सजीवनि ऐनि ॥९९॥

तारक

बिरहाकुल बोलि चुक्यो यह बानी ।
पुनि चेत भयो मनमें मति आनी ॥
मुनि ज्यों लखि चित्त बिकारहि जाने ।
तब रोकि रहे मन में पछिताने ॥१००॥

[नल बचन]

प्रद्धटिका

मै कर्‌यो कहा ऐसो अ-काजु । यह जानि जाइगो देवराजु ॥
मैं दयो हाइ आपुन बताइ । बहु भाँति रह्यो अवलोकि पाइ ॥१०१॥
सुरकाज गयो सिगरो नसाइ । सकिहौ न तिन्हैं आनन देखाइ ॥
हनुमान आदि जससेत दूत । उपहास सेत हम हैं अभूत ॥१०२॥

झूलना

नाह आपनी मति सों कहे हम बोलि बैन असाध ।
निज जानिहैं यह देवता निज बुद्धि बूझि अगाध ॥
अब देखिये कहिये कहा जग लोग ये यहि काम ।
सब कहत पालक सों जनार्दन हरति तेहि सिव नाम ॥१०३॥

सोरठा

फटतु हियो भरि लाज, सुर सँचोटि या काल में ।
है न और सों काज, जन मुख में को कर धरे ॥१०४॥
होत ज्ञान सों काम, सो बिधि पहिले ही हर्‌यो ।
देव होत जब बाम, तब सुरहूँ सो होत नहिं ॥१०५॥

तोमर

यहि भाँति सोच नरेस । करि चित्त माँह कलेस ।
तिनको प्रबोधन काज । तब आइयो खगराज ॥१०६॥

दोहा

भयो पच्छ झंकार तब, ऊपर लख्यो महीस ।
आयो हाटक हस यह, सांई है बिसबीस ॥१०७॥

[हंस बचन]

भुजगप्रयात

महीपाल तोमै न नेको दया है । निरासा करयो याहि ऐसो कहा है ।
सहै काम के सूल यों अक आंडै । तिहारे बिना सोचेहू प्रान छोड़ै ॥१०८॥

सारगिका

जतन करी ही रचिकै । सुरपति काजे सचि कै ।
तेहि पर यों सोचत हौ । तुम न मृषा रोचत हौ ॥१०९॥

मल्लिका

बोलियो मराल राज । साजि कै दुहूँ सुकाज ।
माँगि कै बिदा बिनोद । जाति भो बिरंची कोद ॥११०॥

करहंत

नल सुरनि जानि । किय हृदय मानि ।
करि करि प्रनाम । लखि मुदित बाम ॥१११॥

[नल बचन]

नाराच

दिगीस काज लागि कै कुबोल मैं महा कहे ।
सुधन्य धन्य देवि तैं बिनोत ह्वै सबै सहे ॥
बियोग की जु आगि सों बच्यो हिये बनाइ कै ।
भलो भयो प्रमादु मोहिं भागलों सुहाई कै ॥११२॥

सोरठा

दोष होत गुन आइ, काहू मिलि काहू समै।
जो लघनु सरसाइ, बड़ी बड़ाई ब्रतन मे ॥११३॥

सवैया

याँचतु हैं तुमको सुर चारौ बड़ी करिकै मनमें अनुहार्‌यो।
मोहूँऊ सेवकु पायँन को अब चाहत है कर्‌यो चित्त तिहार्‌यो॥
हौ चतुरै परबीननि में तुमसों करिये निरधार बिचार्‌यो।
सूल अतूल बढ़ै पछितात जबै सहसा कछु काज बिगार्‌यो ॥११४॥

बिम्ब

सुनत नल बैन ऐसे। सरस पिकराज जैसे।
नृप मुकुट भीमजा के। सुकृत तरु फूल याके ॥११५॥

दोहा

उमड़ि मोद हरख्यो हियो, मधुर बोल सुनि कान।
ज्यों मधुरितु सोभा बढ़े, कूकत पंचम तान ॥११६॥

सवैया

छूटत ही नल के छल को दमयंति तजी चित की दुचिताई।
जाति भयो भय भूल्यो बिराग भई अनुरागहि की सरसाई॥
ता सँग बैठि सुआनन खोलि औ बोलि करी बतियानि ढिठाई।
नारि नबेलि कि नारि नई नख ते सिख लाज के सिंधु समाई ॥११७॥

दोहा

आनँद के अँसुआनि सों, उमहे रोम अतूल।
बरखा रितु बिकसत भयो, ज्यों कदम्ब के फूल ॥११८॥

दोधक

उच्च उरोजनि पै सिर नाये। कन्धर कन्ध न नेक उठाये।
जानि गई मनकी मति आली। आपन ते चरचा हँसि चाली ॥११९॥

[सखी बचन]

दोहा

सकल भूप सिरमुकुटमनि, महाराज गुन भौन ।
सत्यसिंधु सुखसिंधु ससि, तुम समान जग कौन ॥१२०॥

चौपाई

सुनी आप मुख ते निज बानी । पूरी लाज रावरी आनी ।
हौं याकी अब कथा बखानौ । सो सुनि सुखद सोंच मन मानौ ॥१२१॥
मूरत लिखी रावरो जहाँ । खड़ी रहै निसि बासर तहाँ ।
बार बार पायन सिर नावै । नैनन राखि प्रवाह बहावै ॥१२२॥

पृथ्वी

तुम्हैं सुर मराल ही बरनि बात मेरी कही ।
बियोग दुख की दसा दुसह दीह जैसी रही ॥
सुधानिधि सुबंस में जन्म रावरो है सही ।
मलीमस नृसंसता कहो आप कासों लही ॥१२३॥

छप्पय

तुमसों हारयो काम सरस तनु काँति प्रकासौ ।
मुखसों हारयो चन्द्र चारु चन्द्रिका बिलासौ ॥
यह ताकी है तिया मोहि जानत वै दोऊ ।
देत मोचु निपटाइ ताप तन पाप समोऊ ॥
यहि भाँति भयो मेटो भलो मोहि तिहारी कै गन्यो ।
सब अमर सत्य संकल्प है तौ बनाव मेरो बन्यो ॥१२४॥

सवैया

मोहि जराइ सुधाधर अंसनि राख कै चाहत कालिमा मेट्यो ।
यों अकलंकित ह्वै मिलि है मुख रावरो मैं सुबृथा सुख मेट्यो ॥
हौ मरिहौ सुबधू बध पातक तो मुख माँह कलंक लपेट्यो ।
जो करै पातक से बढ़ती उतपातनि सों नित होत सोहेट्यो ॥१२५॥

मनहस

निज बान दै परसन्न ह्वै रतिराइ सों।
बहु आनि मोहि हनै तहीं अति चाइ सों॥
तुम मोंह प्रान मिलाइ कै तजि देह को।
तब जीतिहौ तुम रूप पाइ बिदेह को॥१२६॥

सवैया

देवन के गुन वेद बखानत भेदिन सों श्रुति की चरचा मै।
ये तुमसों अनुरागि रह्यो जनु ताहि कहा तनिकौ मनभामै॥
प्रात बड़ाइ करैं करजोरि सबै तपसी रबि की महिमा मैं।
चन्दहि देखि अनन्दित होत कुमोदिनि के कछु काम न आमै॥१२७॥

वंशस्थ

हथ्यार धारी ब्रत ये सदा धरैं। डरै सुनासीरहु सो तिन्हे भरै।
प्रसून नाराचन काम जो हनै। न मोहिं को रच्छत हो कहा गनै॥१२८॥

मनहरन

हम तौ तिहारे चरनन की सरनि गहि,
ताहि मारयो चहत मदन निरदई है।
ताहि कहा छोड़त हो देवता-स्वरूप जानि,
देवता न जानै वा चंडार गति लई है॥
ताही के बनावत विषम ये विसिष मधु,
कुटिल कठोर मति तासों मिलि गई है।
दोषी औ अदोषी सों भलाई औ खोटाई करे,
होत अनरथ बात बेद निरमई है॥१२९॥

छप्पय

स्वयंबर की रीति आप रुचि सों अनुरागै।
करयो सोंच तुम दूत पाप तनिकौ नहि लागै॥

तुम मोसों मिलि जज्ञ साजि देवन सुख दैहौ।
पूजन दान बिधान मान गुन वेद बनैहौ॥
यहि भाँति हरखि हिय सकल सुर सुरपुर सहित समाज सों।
नहि देहौं तोहि उराहनो बदन मौन धरि लाज सों॥१३०॥

शार्दूलविक्रीड़ित

आवैं क्यों न यहाँ स्वयबर बने चारौ महा देवता।
हौ तोको बरिहौ बनाइ उनकी कै के बड़ी सेवता॥
आवेंगे करुनानिधान उनको मो को दुखी जानिकै।
वे नाही तुम हौ न काम तिनहू ऐसो करो खानिकै॥१३१॥

प्रद्धटिका

यहि भाँति देखि तेरी सबीह। इमि करति बिलापनि दीह दीह।
बिच बीच मौन मर्याद ओलि। दिय सुधासार भूखनहि खोलि॥१३२॥

दोहा

मन्मथ अनुचर रावरो, साँचौ चोर चँडार।
बनवासी मधु मित्रकरि, चित्त चुरावन हार॥१३३॥
मैन उपनिषद में दयो, याको तुम्हैं सुनाइ।
आवै इच्छा रावरी, सोई बनै बनाइ॥१३४॥

दोधक

दमयति यकंत कही यह बानी। बिस्वास सुधारस सों लपटानी।
तुम देवन सग स्वयबर आवो। तिनको निहचै करि बैन सुनावो॥१३५॥

प्रद्धटिका

तब कर्‍यो नृपति यह अगिकार। सिरनाइ सकुचि यह बार बार।
पुनि बिदा भयो करि कै बिनोद। रथ साजि चल्यो सुरपथ निकोद॥१३६॥
युग चारि भये सब रैनि याम। अति दुसह बिथा तनु करी काम।
यहि ते दथाइ मानौ बिरचि। सब रैनि त्रिजामा कीन सचि॥१३७॥

सोरठा

भयो जो कुछ व्यवहार, आइ नृपति बिनयो सकल ।
जानि गये सब सार, भये उदास दिगीस सब ।।१२८।।

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमडलाखडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ नलपरिचयो नाम दशमःसर्गः ।



एकादश सर्ग

स्वयंवर-वर्णन

दोहा

कथा ग्यारहे सर्ग में, राजस्वयबर ठाट ।
राजन को आगमन पुनि, नगर ग्राम बन बाट ।।

सोरठा

स्यन्दन साजि कुमार, सब कुलीन आये घने ।
सुन्दर सूर उदार, चतुर स्वयंबर को सरुचि ।।१।।

सवैया

कौन न मैन के बान बिध्यो अरु को न कुमार चल्यो अकुलाइकै ।
कानन मारग पूरि रह्यो हय मत्त गयन्दन सों सरसाइकै ।।
कौन पहार न चूर भयो दलिकै न गयो बन कौन बनाइकै ।
कौन न सागर सूखि गयो अरु को न दिगीस उठ्यो हहलाइकै ।।२।।

तारक

तेहि लायक ब्याहन को मति चाली । हठ सों हरि लेन चले अपचाली ।।
जन और तमासेहिं की रुचि दूनी । पहिचानि परै दसहूँ दिसि सूनी ।।३।।

गीत

यहि भाँति सों सबही भरी नृपसैन भीरन सों भली ।
छुटि सीस ते तिल ना लहै तल यों रही गसि कै गली ।।
तेहि माहँ जो तनिकौ चल्यो कोउ आगेहो सरसाइकै ।
दमयति ब्याहि लई मनौ बहु यों रह्यो सुख पाइकै ।।४।।

दोहा

नगर बढ़्यो कौतुक भयो, उठीं नारि भहराइ ।
लखै दरीचिन में दुरी, तब बरनै सब भाइ ।।५।।

दोधक

रोकि रहे मग लोग अगारी । देत धका बहुतै पिछवारी ।
अगन अग गये मिलि ऐसे । जत्रन बीच चपे जन जैसे ॥६॥

मनहरन

दिसि दिसि हूँ ते दिनकर से दिपति दीह,
राजनि के दल चले कुंडिन नगर को ।
घूँघुरि के पटल सघन परि पूरि रही,
समुद्र सुखाने सोच बढ़त सगर को ॥
तजिकै दिगीसन दुहागिल कै दीनी दिसि,
मेले ह्वै बदन सहैं सोक की रगर को ।
डगर डगर पुरबासिन सों मिलि रहे,
जाने न परत गये बगर बगर को ॥७॥

सवैया

भीर भरी चहुँ ओर खरी थकि राजन की सब फौज घनेरी ।
उच्च पताकन सों नगरी करु फेरि बुलावत है बहु-तेरी ॥
हाथिन के हलका गन मढि भई नभ ज्यों बसुधा घन घेरी ।
चंचल बाजि खुरीन कि रेनु भज्यो बसुधा तल ज्यों नभ ये री ॥८॥

दोहा

आखंडल औ दंडधर, सिखी बरुन दिगपाल ।
गये चारि येई तहाँ, गये न और उताल ॥९॥

[सखियों का संलाप]

सवैया

कह्यो सखी केहि हेत, आये और दिगीस नहि।
तीनो लोक समेत, कौन रह्यो उत्सव सुने ॥१०॥

तारक

नृप भीम पुरोहित जे रिषि आये। दिग बन्धन के सब मन्त्र सुनाये।
बहु नैरिति जो दिगपाल कहावैं। तब क्यों करि तामँह वे यहँ आवैं ॥११॥

तोटक

दमयति बिलोचन देखि हरे। समुहैं न सकें चलि ये बिचरे।
मृगबाहन पौन जु है दिगराजै। यहि हेत तहाँ वह आवत लाजै ॥१२॥

सोरठा

स्वच्छ सैल मनि देखि, अति कुभाँति तन आपनी।
पुन्य-जने-सुबिसेखि, नहि आयो दिगपाल तहँ ॥१३॥

छप्पद

राजत आधे अंग में बनिता छबि छाई।
ताके आगे होति है केहि भाँति ढिठाई ॥
ऐसी भाँति बिचारि कै नहिं देखन आये।
महादेव परसन्न ह्वै तहँ आसिस गाये ॥१४॥
धरें कहाँ छिति भार को अहिसेस सयानो।
नागी दिसि दिगपाल ज्यों सब देव बखानो ॥
खोलि बिलोचन बीससै उत्सुक अतिभारो।
होतु बने नहि तासुको पुर कुंडिनचारो ॥१५॥

सोरठा

लोक वेद मत जानि, आये तहाँ बिरचि नहिं।
काहु न कह्यो बखानि, ब्याह पितामह सग करु ॥१६॥

नीलस्वरूपक

आलिन की मुख की सुनि बातै । आप अनादर की चरचा तै ।
दूखित चित्त गये मुख मैले । चारि दिगीस चले तेहि गैले ॥१७॥

सवैया

नल के भ्रम सों दमयती कहूँ बरिहै हमको इन आस न पागे ।
सब चातुर चारि दिगीस तबै नलके सम रूप बनावन लागे ॥
कोटि उपाय करैं खमकै अगकै न सिरी तनिकौ तहँ जागे ।
झूठन की छबि तौ लगिहै नहि जो लगि आवत साँच के आगे ॥१८॥

तोटक

पहिले मुख पूरन चन्द्र करयो । परफुल्लित पंकज कै निदर्‌यो ।
तब दर्पन में लखि कै न बन्यो । सुर चारहु के उर सोच घन्यो ॥१९॥

सोरठा

करि करि थाके कोटि, लही न ता मुख की प्रभा ।
नलमुख कैसे होहि, कहे बेद सुर अनलमुख ॥२०॥

दोहा

देवन की छवि सों बढ़ी, नल तन छबि नित नूत ।
यहै जनावन काज बिधि, मनौ करे यकसूत ॥२१॥
चारों भये अलीक नल, पहुँचे राज समाज ।
सबै आपने काज को, लजत न छोड़त लाज ॥२२॥

तारक

पहुँचे सुर वे नल के कछु आगे । नहिं नैसुक देखत सुन्दर लागे ।
परिजात जबै हरि जू हरिलाये । नहि चार सुरद्रुम होत सहाये ॥२३॥

सोरठा

महादेव हिय हार, आये बासुकि सेत छबि ।
करत सोर सभार, सेना अनुचर सग सब ॥२४॥

मनहरन

मदन अनल फूँक फूंकन फुलाये तूल,
लीला तुलन आये आनँद के मूल हैं।
सातौ द्वीप दीह दीपति अवनी दिपति,
अवनीपति समूह राजभौनन के फूलहैं ॥
सुंदर सदन सौध बगला बिचित्र बाग,
आसन सवारे उपवन फूल फूलहैं।
आदर सों आगै ह्वै ह्वै लै लै राज भाग लोग,
भागन सयोग राखे मन अनुकूल हैं ॥२५॥

बंधूक

कुंडिन बासव आपुहि आये। राज समाजन को सिरनाये।
आदर कै बिनती बहु कीनी। इच्छित वस्तु सबै भरि दीनी ॥२६॥

सोरठा

कीरति तिया सलील, भूप सदन नृप भावती।
दान दया सुचि सील, ये रखवारे कंचुकी ॥२७॥

तोटक

जिनसों पहिचान हुती पहली। तिन संग रही मतिहीन मिली।
नृप भीम करी इकसी अरचा। सब भाखतु वा गुन की चरचा ॥२८॥

दोहा

कहा राउ कह रंक सब, सनमाने नृप भीम।
यथायोग सब ह्वै मुदित, गहे आपनी सीम ॥२९॥

नीलस्वरूपक

राजसमाज सबै नृप नदिर माँह गये।
विस्तृत भौन सुपास न संकट लेस लये ॥
ज्यों मुनिको कर सगत सागर आनि लसै।
ज्यों हरिके प्रतिरोम अनेक त्रिलोक बसै ॥३०॥

दोहा

द्वार द्वार उत्सव लगै, चित्रित करे अपार ।
नभौ भये भूषित मनौ, नृपभूषन सभार ।।३१।।

सवैया

बोल विलास विभूषन सुन्दर हैं जिनके सब चाकर ठाढ़े ।
जानत हैं अबला जन बालक मानहु ये नृप हैं द्युति बाढ़े ।।
चामर पौन प्रस्वेद चले नहि देखि समाज रहे लिखि काढ़े ।
छत्रनि सों कुम्हिलात न फूल यों देव नृदेव गये मिलि गाढ़े ।।३२।।

संयुत

निसि महँ सोचत देखि कै । दमयति को अवरेखि कै ।
सब होत पूरन काम हैं । अभिलाष सों अभिराम हैं ।।३३।।

सोरठा

भोर भये नृप भीम, पठये राज बोलाइ सब ।
गईं स्वयबर सीम, नर भूषन भूसित भये ।।३४।।

दोहा

बैठत ही नलराज के, भये राज छबि छीन ।
सकल कलानिधि कै उदै, ज्यों तारा द्युति हीन ।।३५।।

सवैया

राजसमाज की दीठि परी नल के पहिलेइ उछाह भरी ।
बानक देखि अचानक ही पुनि भ्यानक भौह मरोरि करी ।।
इन्दु उयो पहिले पुहुमी महँ मूरति दूसरि काम धरी ।
दुज भयो तिसरो निहचै छल की महिमा बहु भाँति भरी ।।३६।।

दोधक

बोलि उठे उर बुद्धि कुचालो । राजनि इर्यों केतिकौ द्युतिसालो ।
रोस भरे हँसि बाँह उठाई । आस अलीक नहीं दिखईरा ।।३७।।

सोरठा

गुन को दोख बखान, करत और की और नित ।
लेखत सहज अजान, निज गुन दोष बिचार नहिं ॥३८॥

तारक

नित गावत हैं जेहि को जस बानी । तड़ितायुत अबुद ज्यों सियरानी ॥
नभ देखत ठाढ़ स्वयंबर साजै । हरिजू चढ़िकै खगराज बिराजै ॥३९॥

श्येनिका

आठ ओर आठ दीठि दै रह्यो । लोकनाथ आश्चर्य छ्वै रह्यो ।
भूलि विश्वकर्म हूँ सुचातुरी । राजथान देखि चित्र आतुरी ॥४०॥

चौपाई

मूरति एक करी हरि लोचन । दूजी उदयाचल मन रोचन ।
द्वादस तनु रबि दस तनु धारी । दसहूँ दिसि नृप भीर निहारी ॥४१॥

सोरठा

सुर गिरि की रजनीस, नित प्रति करति प्रदच्छिना ।
तहूँ लख्यो बिसबीस, हरके बायें नयन हूँ ॥४२॥

दोहा

सब नभ ते टूटी परै, छूटी बेनी छोर ।
अमर बधूटी रसभरी, निरखि राज चहुँ ओर ॥४३॥

चर्चरी

जच्छ लच्छनिसों लसैं सतलच्छ सिद्धन सों भरी ।
भीर किन्नर कोटि कोटि महर्षि हर्षन बिस्तरी ॥
बाल्मीकि बखानहीं निज आदि ही कविता करी ।
गीरवाननि संचरेव रस गुरुनिहूँ महिमा धरी ॥४४॥

प्रद्धटिका

ये जुरे आइ जे हैं भुआल । नहि भीम बुलाये भूमिपाल ।
निज देखत कौतुक बिधि अपार । रचना सुचारु त्रैलोक सार ॥४५॥

बिधि धरतु आनि प्रतिमास जोरि । जे घटत सुधाधर तोरि तोरि ।
तिन मेलि रचतु इनके सरीर । ज्यों झलझलात तन हेम हीर ॥४६॥

सोरठा

इन भूपन में आनि, मिलै दीजिये दृष्ट जो ।
परैं न ह्वै पहिचानि, आपस मे किन पचि मरे ॥४७॥

दोहा

ये जे राजत है युवा, परम रूप को खानि ।
एक मयन के जरि गये, कहा होत जग हानि ॥४८॥
उच्च मंच सिखरन सुथित, किये भीम कर जोरि ।
मेरु सृंग बैठे लसत मनौ देव सत कोरि ॥४९॥

चौपाई

देखी राज बीर बहुधाहीं । भीम भूप सोच्यो मन माहीं ।
ये सब भूपति देव सरीखे । कौन कहै इनके गुन सीखे ॥५०॥

दोहा

कौन सुतहि समुझाइहै, गुन कीरति कुल गोत ।
कीजै कहा उपाइ अब, भयो बिसाद उदोत ॥५१॥

तोटक

तिन ध्यान धर्यो हरि को जबहीं । हरि जू परसन्न भये तबहीं ॥
कमलै धनि बानिहि बोलि कह्यो । उनहूँ मनमें अति मोद लह्यो ॥५२॥

[हरि बचन]

तोटक

यह राज समाज सुहावत है । गुनगोत तुम्हैं कहि आवत है ।
इनके तुम जाइ चरित्र कहौ । जगती कबि कौतुक मोद लहौ ॥५३॥

प्रद्धटिका

तब चली बानि करि कै प्रनाम । अवतरी सभा बिच बेस बाम ।
सुभ उदर लसत बलि त्रयो रूप । साहित्य लखत लोचन अनूप ॥५४॥

मुख धरत सोभ सिद्धांत चारु । अरु उदर सून्यता बाद सारु ।
है बरन मात्रा दोइ भाति । सब छंद मनौ भुज युगल कांति ॥५५॥

सोरठा

जाके चरित अपार, सब सिच्छा के ग्रंथ हैं ।
रचना सहज सिंगार, कल्पग्रंथ आकलप बिधि ॥५६॥
गुन दीरघ के भाव, मधुर नदत शब्दावली ।
सुबरन रूप बनाव, रसना रचि व्याकरन सों ॥५७॥

दोहा

ज्योतिमयी तारक रसमि, भई दंत द्युति मूल ।
पूरब उत्तर पच्छ मत, द्वै रद छद अनुकूल ॥५८॥

सोरठा

ब्रम्ह कर्म के भेद, द्वै बिधि स्रुति विद्या करी ।
उत्तर जानि अखेद, परसन उत्तर चरन द्वै ॥५९॥

प्रद्धटिका

कर लसत बिपची सेत बेस । हिरदै न रची गहि के कलेस ।
उर राजत मुक्ता माल लोल । जनु बेदन के आखर अमोल ॥६०॥
तेहि कह्यो भीम नृप सों पुकारि । मन माह मोद करिये बिचारि ।
कुल सील दान साहस चरित्र । हौ कहिहौ राजन के पवित्र ॥६१॥
सुनि मुदित भयौ मन भूमिनाथ । उठि दौरि लग्यो पग नाइ माथ ।
करि पूजन वाको उचित रूप । अति उच्च दयो आसन अनूप ॥६२॥

गीत

तब भीम भूप बुलाइकै महलीन सों तुरतै कह्यो ।
इत लाइये दमयंति को उन सीस पै आयसु गह्यो ॥
सब देस देसन ते महीपन ऐंचिबे कहँ जाल है ।
गुन रासि रूप रसाल मजुल काम चपक माल है ॥६३॥

सब भाँति भाँति सिंगार अंबर साजिकै सखि लै चलीं।
सुखपालकी असवारकै चहुँ ओर ते फिरनै रलीं॥
बजि ताल बीन मृदंग मंगल गीत गावहि किन्नरी।
जय जीव विप्र बधू पढ़ैं बर बिरुद बदिन उच्चरी॥६४॥

दोहा

लागे मग आगे चले, बनि दासिन के जूह।
कर सुंदर हाटकछरी, टारत लोग समूह॥६५॥

तारक

पहिले सत लाख लखी जब दासी। उमड़ी सब राजन के दृग हाँसी।
सखियाँ रति-सी जब फेरि निहारी। तब तो तनुकी सब सुद्धि बिसारी॥६६॥
दमयतिह देखि रहे टक लायो। जनु आनँद सिंधु सुधाहि समायो।
चमके अति चचल गात घनेरे। रचि चित्रिन में जनु काम चितेरे॥६७॥

तोटक

सब ओर सुगधन की लहरी। अवली अति भौरन की छहरी।
जिन सों छिपि नेकु न देखि परै। परभा रूर चक्रनि चित्त हरै॥६८॥

तारक

सब ओर गुलाबन को छिरकायो। हँसि कै सखियान अबीर उड़ायो।
कर कदुक फूलन की नवला सी। परिहास करैं सुधरै दृग हाँसी॥६९॥

दोहा

निज लोचन को फल रह्यो, सब भूपन तेहि देखि।
आसव रस सिंगार छबि, कछु बरनत सबिसेष॥७०॥
देखति टेढ़ी भौह कै, जहाँ जहाँ नर नाह।
सखी ओर करपूर यों, कस्तूरी परवाह॥७१॥

गीत

मुसक्यान की द्युति सों दबावति जोन्ह पूरन धारकी।
यह आनि अवनि सुओतरी निज बाम सी हरिद्वार की॥

सब अंग अंगन में अभूषन रतन काँति अपार हैं।
जनु लोक लोचन ये लगे जहँई तहाँ सुखसार है ॥७२॥

मनहरन

रदन की द्युति निदरत द्युति तारन की,
बदन की कॉति रुचि चद की किरकिरी।
केसन सों कुहू के अध्यारे निरध्यारे ध्यारे,
सीस फूल परभा प्रभाकर की लै धरी ॥
अभिरत गिरत अलीक स्रम सीकर ह्वै,
अलकनि गुंदी मुक्तान की महा लटी।
दोऊ ओर चलत चमर अवदात मानौ,
आस पास नाचै हँस बनिता उजागरी ॥७३॥
गरब सरब बह्यो नाक लोक बासिन के,
देखि अपसरा ऐसी और गैर नाहिने।
याके अब तरे अवतरे भयो नाक लोक,
भूरि भाग भूमि जामे ऐसी निधि चाहने ॥
याको जैसो जैसो सुनि सुनि रूप दूरिन ते,
आये हम सब याके गुन अवगाहने।
वाहू ते सहस लाख कोटि गुन्यो रूप याके,
लखत बनत पै न बनत सराहने ॥७४॥

सोरठा

रससिंगार जलरासि, कहूँ लसत पीयूषमय।
ताते भई प्रकास, यह लच्मी लावण्यनिधि ॥७५॥
मुख ससि मुख्य सुयेहु, ससि नभ मैं लाछनिक पुनि।
भौह चाप गुन गेहु, फूलन को नहि कामधनु ॥७६॥

सवैया

तारन की युग कुंडलिकै निहचै बिरच्यो निज काम निसानो ।
भौह दुहूँ सों कटाच्छ छुटै बिच ह्वै निकसो सुथरे सर मानो ।।
धूरि भयो घुन भौर धरयो तजि फूल दयो धनु काम पुरानो ।
याही की भौहन सों बसकै जग जीति लयो पचिकै पहिचानो ।।७७।।

तोमर

बिधि कौल लै हिमि मास । गहि खंजरीट प्रकास ।
तु आनि पावस जोइ । यह दीठि पोसतु सोइ ।।७८।।

सवैया

दमयति के नैन अरु कौलन सों कछु होत बिसेस सों भौर न बूझै ।
जनु जानि यहै बिधि आनि लिखी पुतरी मिस भौरन की द्युति सूझै ।।
रति काम के सौध रचै कुच पै छबि पुंज छुटै नहिं दीठि अरुझै ।
जिनकी द्युति देखत ही चकि कै चकई चकवा लरि आपुस जूझै ।।७६।।

चौपाई

मानुस लोक न ऐसी और । लखी न काहू काहू ठौर ।
स्वर्ग उरग के लोक निहारे । तहाँ न ऐसे रूप सचारे ।।८०।।

सोरठा

यह ऐसी सुकुमारि, मनहीं सों बिधिना रची ।
हाथ छुये निरधारि, होतो ऐसो रूप क्यों ।।८१।।

तोटक

नव फूलन सों सब अंग सची । यह काम बिरंचि बनाइ रची ।
सुर पंचम कंठ निवास करयो । मुख माँह कपूर सुवास भरयो ।।८२।।

दोहा

सब ऐसे बरनन करत, बासव सुरन समेत ।
अचल चर्षनि सिखि लखि रहे, लहे सरस सुख चेत ।।८३।।

सोरठा

कारज हेतु बनाव, निज नलको आदेस करि ।
दुष्ट थानि बटु भाव, धर्यो इन्द्र ब्याकरन कर ॥८४॥

सवैया

भूमि की मैनका आइ गई यह मंजु मनोहर भूषन साजे ।
राजस्वयंवर को अवलोकत मंगल के सब बाजन बाजे ॥
आनँद के असुवानि छ्वये नल के दृग देखि तहीं अति राजे ।
ज्यों ज्यों बखान करैं नरनाह ते आपनि ओर निहारत लाजे ॥८५॥

दोहा

हंस चढ़ी आगे चली, श्रीभगवती अनूप ।
दौरि लगे चरनन चतुर, तिहुँ लोकन के भूप ॥८६॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
स्वयंवर-वर्णनो नाम एकादशः सर्गः ।



द्वादश सर्ग

द्वीप-पति-वर्णन

दोहा

सर्ग बारहे में कथा, बरनत हैं अति चारु।
द्वीप-पुरी नरनाह सब, बरनन करि निरधारु॥

सोरठा

सभा देवता रूप, लखति नैन अनमिष बिमल।
लाभ काज बर भूप, दमयती ताको भजै॥१॥

सवैया

तेहि अंग अभूखन में प्रतिबिंब परैं सब राजन के बहुतेरे।
मानौ समाय गये बहु अंगनि मोहित ह्वै निहचै चित चेरे॥
गाधिको नन्द मुनीस्वर और कहूँ रचते सुर ओक घनेरे।
देखत देव बिमान चढ़े चहुँ ओर लसे नभ यों हठि हेरे॥२॥
धूपन के परवाह सुगंध हजारन छूटि रहे सबधाई।
रोकि रही रवरग भरी सुभ भौंरन की अवली सबधाई॥
मंगल तुंग मृदंगन के प्रतिशब्द उठैं ध्वज चीर सोहाई।
सौधन की अवली जिमि पातुर चातुर नाच करैं सुँदराई॥३॥

सोरठा

तब भगवती सुजान, बानि बानि बोली बिहँसि।
चढ़ी मराल बिमान, दमयती के दाहिने॥४॥

[सरस्वती बचन]

सोरठा

आये लखि यहि ठौर, कोटि कोटि ये देवता।
जित चित की तुव दौर, मन बिचारि करि वाहि पति ॥५॥
लगत कल्प सत कोटि, एक एक के गुन गनत।
मन मे लेइ अगोटि, जो सुदर नीको लगै ॥६॥

दोहा

तुअ दरसन की टकटकी, सहज टकटकी संग।
अमृतपान तुव बदन-रस, त्यों इनको इक रग ॥७॥

तोटक

इनके गिरि आदिहि भूमि दुही। सुर साखिन की अवलीन पुही।
मुक्ताफल भूरि फलैं बिलसैं। जनु छीर पयोनिधि बिदु लसैं ॥८॥
कर जोरि दमयति प्रनाम ठये। जनु कौल मुंदे लखि चंद नये।
जिय जानत यों अपराध भयो। डरि चाहति औरहि ठौर गयो ॥९॥

सोरठा

मैले मुख सुर देखि, जान्यो चरित कहार गन।
मृदुल चले सबिसेखि, दमयंती के हुकुम बिन ॥१०॥

चौपाई

असुर भयकर ता सों पागे। विद्याधर तो अधर सभागे।
सिद्ध प्रसिद्ध बिराग बिचारे। मुनिगन के पग ओर निहारे ॥११॥

दोहा

एक गंधरव में नहीं, नेक गंधरव तासु।
त्यागि सबन न्यारे चले, करि कहार भव लासु ॥१२॥

भुजगप्रयात

लख्यो बासुकी नाग राजा सुहायो। लसै छत्र सिंहासनै साजि आयो।
बने बेष रूरे करैं सेव ठाढ़े। फनी फु करैं चारु सिंगार बाढ़े ॥१३॥

सोरठा

जाको जग बिस्तार, लोक वेद बानी बिमल ।
बोली करि निरधार, चद्रमुखी दमयति प्रति ॥१४॥
है हरको उपवीत, गिरिजा कुंकुम मिलि अरुन ।
पाट सूत्र परतीति, बासुकि सेवकसार यह ॥१५॥

सवैया

कंकन याहि करैं कबहूँ मनि सुंदर सीस हजार बखानौ ।
याहि सों बाँधैं जटाँनि के जूटनि औ कबहूँ गुनिकै धनु तानौ ॥
आसन बाँधि समाधि समै सिव साधत जोग महा मन मानौ ।
प्रान समान प्रधान भयो हरके घर बासुकि एक खजानौ ॥१६॥

छप्पय

एक जीभ हरसीस इन्दु रस को अनुरागै ।
और जीभ सौ स्वाद अधर रस तेरौ पागे ॥
जानै यहै बिसेस जीभ द्वै जा के सोहै ।
सुन्दर सूर उदार देखि तरुनी मन मोहै ॥
जिन जानि बिखम बिष भीति सों, जनि डराहिं चुंबन समै ।
बिधना बिचारि पहिले रचे, अधर रावरे अमृतमै ॥१७॥

सोरठा

सुनिके बचन अपार, और ओर हेरन लगी ।
फन सकुचात हजार, नील कमल मुद्रित मनो ॥१८॥
गये कहार तुरत, जहँ बैठे भूपाल गन ।
मधुकर निकट बसंत, बनसोभा ज्यों लै गये ॥१९॥

प्रद्धटिका

लोकेस नारि बोली बिचारि । सखि चन्द्रबदनि थिर रहि सभारि ।
लखि तोहि चोप सों नृप समाज । निज नैन जन्म फल लहहिं आज ॥२०॥

हरिहर बिरचि जिन किये लीन । सिगार सार रस के अधीन ।
सर पच पच इन्द्रियन छोभि । वह काम करै आनन्दसोभि ॥२१॥
दमयति देखिये द्वीपनाथ । नव द्वीपन ते आये सुगाथ ।
इनमें बिचारि निज ब्याह योग । मै बरनति हौ करि भोग भोग ॥२२॥
यह सबन नाम भूपति सुढारु । सग्रामसूर सुन्दर उदारु ।
जल मधुर समुद याके सुदेस । पुष्कर सुद्वीप को है नरेस ॥२३॥
करि जाइ तहाँ जल केलि चारु । बन बाग बीच लीला बिहारु ।
सुर लोक सोच याको सुदेस । तू सची इन्द्र यह है नरेस ॥२४॥

द्रुतविलबित

लसति मूरति चारु बिरंचि की, बट सुमडल के तल सचि की ।
लखत तोहि अनन्दित होइ रहैं, सकल सिल्पिन मे पदवी गहैं ॥२५॥

चौपाई

राजहँस यह कीरति याकी । सेत हसिनी त्रिभुवन ताकी ।
आश्चर्य एकै चित चाही । नीर छीर बिलगावत नाही ॥२६॥

दोहा

सुदर सूर सराहनो, सकल कला की खानि ।
लग्यो न मन दमयति को, नाम न नल पहिचानी ॥२७॥

सोरठा

चित सों चतुर कहार, और राज ढिग लै चले ।
लखि मैलो निरधार, वा भूपति को बदन ससि ॥२८॥

चौपाई

बानी बिहसि कहो जब बानी । अति बिचित्र पीयूषनि सानी ।
याहि देखि सखि पकज नैनी । हव्य नाम राजा मति पैनी ॥२९॥
पढ़त बदि याके जसभारे । सकल शब्द जूठे करि डारे ।
मेरे च्रम्न चरन कित धरै । अरथ आनि पुनरुक्ति न परै ॥३०॥

दोधक

साकल द्वीप सुदेस बखान्यो । जा महँ साक महा तरु मान्यो ।
पल्लव जूह दिगंतन राजै । जासु हरी हरिता छबि छाजै ॥३०॥

मोदक

जा महँ क्षीर पयोनिधि सोहत । बक्र तरगनि सों मन मोहत ।
भौहँन की समता मन में करि । जाइ तहाँ करि लेइ बराबरि ॥३१॥

सोरठा

क्षीर पान करि थूल, भुजग राज सैय्या सरस ।
ह्यौं सोवत सुख मूल, सिया सहित पकज नयन ॥३२॥
तोहि तहाँ लखि पाइ, सीय डरै तो रुप सों ।
राखै अधिक सोवाइ, चरन चापि हरि को चतुर ॥३३॥

सवैया

उदयाचल सीस बिहार सजौ यहि भूपति के संग कै सुघराई ।
तहँ गैरिक राग करौ दुगुने पग जावक की मिलिकै अरुनाई ॥
दिनहूँ महँ साँझ सी जानि परै लखि भाल पै कु कुम की अरुनाई ।
चहुँ ओर चकोरनि भीर भरै ससिपूरन आनन देत दिखाई ॥३४॥

सोरठा

तेरो बिरह कृसानु, तहँ आहुति भूपति भयो ।
कर्यो सोच अबिधानु, हव्य आपनो जानिकै ॥३५॥

प्रमाणिका

सुने सुबैन बानि के । परे न चित्त आनिके ।
तहीं सुदोस यों दियो । न इंद्र याचनो कियो ॥३६॥
अधीस क्रौंच द्वीप को । सुरेस है बनीप को ।
कुमारु बैस मारु है । बिरचि सृष्टि सारु है ॥३७॥

दोहा

दधि को उदधि सुहावनो, मधि जनपद के जासु ।
जानौ याको जस जम्यो, तीनो लोक प्रकासु ॥३८॥

प्लवगम

क्रौंच महीधर महा बिचारि बिहारि को ।
रम्य बगीचनि बीच विनोद अगार को ॥३९॥
षट्मुख के रस छिद्रनि बोलत हस है ।
मानहु तव गुन गान प्रकास प्रसस है ॥४०॥

नीलस्वरूपक

पूजति जाहि मिलैं फल चारो । सागर ससृति होत उधारो ।
सो भगवान सदा सिव सोहै । ता कहँ सेवत देस सजो है ॥४१॥

सवैया

तेहि सैल में काम कलोल कला कुल केलि करौ पति के चित चाही ।
दधिपूर पयोनिधि के तट माह महीपति के संघनी छकि छाही ॥
तुव भाल कपोल उरोजन पै न रहे श्रम सीकर ये बहुधाही ।
दधि के कनजाल मिल्यो लगि मारुत ह्वै है सुबासु खवास की नायी ॥४२॥

तोमर

करि भाँति भाँतिन भोग । तुव बाम ब्याहन जोग ।
यहि नाम है द्युतिमन्त । बुधिवन्त गावत सन्त ॥४३॥

तोटक

यहि को जस हंस समान चरै । परि सागर छोरिनि माँह तरै ।
परताप दिवाकर को निदरै । परताप करै अरु पाप हरै ॥४४॥

प्रद्धटिका

सुनि सुनि बखान ताके सभाग । मन भयो नेक नहि सानुराग ।
लै चले और ढिग को कहार । तब बोली देवी बच उदार ॥४५॥

दोहा

दर्भ द्वीप अवनीप यह, नयन कुसेसय आपु ।
मोहू को उत्तम लग्यो, योगायोग मिलापु ॥४६॥

तोमर

यहि नाम ज्योतिष मानु । महि ह्वै रहै जिमि भानु ॥
घृत को पयोनिधि चारु । यहि देस में बिस्तारु ॥४७॥

बसततिलका

स्वच्छद मदर महीधर कदरा है । यासों मथ्यो सागर यों सराहै ।
श्री सेषनाग रजु ऐंचन की नसीनी । तामे बिहार सजिये चखि कै प्रबीनी ॥४८॥

सवैया

रावरे देखि उरोजन को सुमिरै सुर बारन कुंभ सोहाये ।
हाथन को लखि कै कलपद्रुम पल्लव चित्त लगे छबिछाये ॥
आनन को लखि पूरन चन्द पियूष मयूष मनौ मन भाये ।
मदर देखि तुम्हैं दबिहैं पुनि सागर मन्थन की सुधि आये ॥४६॥

सोरठा

ताम्यों भई उदास, ज्यों हरि जू सों गिरि सुता ।
तहीं कहार प्रकास, और राज सन्मुख चले ॥५०॥

मालिनी

तबहि बचन बोली दाहिने श्रीभवानी ।
अभिमुख भुज कै कै चारु सिगार सानी ॥
अयि सखि दमयंती साल्मली द्वीपवारो ।
यह नरपति रूरो तोहि के योग प्यारो ॥५१॥

चौपाई

वपुष्मान है याको नाम । सुरा सिधु याके अभिराम ।
बिपत सिंधु सुनि सागर डरै । निडर एकु यह है छबि धरै ॥५२॥

दोहा

तामें निज परिजन सहित, प्रान पियारे संग।
करौ केलि मधुपान की, कला रास रस रंग ॥९३॥

भुजगप्रयात

तहाँ द्रोन नामा लसै सैल नीको।
मनौ द्वीप को द्वीप प्यारो मही को ॥
महा औषधी काँति वाली प्रकासै।
लगे कज्जलै मेघ मानौ प्रकासै ॥९४॥

पृथ्वी

तहाँ साल्मली तरु लसत अकास सों।
झरै मृदुल तूल यों परम सेत सुकुमार सों ॥
मनौ गिलम ए बिछि सुभग भाँति देखी परै।
बिहार जग तू करै चरन कमल नीके धरै ॥९५॥

तारक

यहि के गुन को सुनतै अकुलानी। सिविका चरबाहन हू यह जानी।
तब और नरेस समीप सिधारे। परमेस्वरि हूँ हँसि बैन उचारे ॥९६॥

सोरठा

मेधातिथि है नाम, प्लक्षद्वीप सासक यहै।
याके उर लगि बाम, ज्यों हरि के कमला लगो ॥९७॥

चौपाई

बड़ो दीह पाकरि तरु हेरे। जीह माँह होईहै मति तेरे।
झूल डारि साखा अति ऊँचो। खेलि केलि की अवधि पहूँचो ॥९८॥

सवैया

इक्षुर सों दधि यों निधि राजत या जगतीपति के अति नेरे।
वासो उदास ह्वै जाइगो भूपति स्वाद करे अधरामृत तेरे ॥

देस में भोजन पान करै नहि कोउ सुधाकर के बिन हेरे।
रावरे आनन औनष हैं लखि मावस है महँ चंद घनेरे ॥५९॥

उपेन्दवज्रा

नदी बिपासा जहँ चारु लीला। महोज्वलासार पियूषसीला।
सरोजराजी विकसी तहाँ हैं। मानौ करौ आरति आपु चाहैं ॥६०॥

सोरठा

और ओर मन जानि, हारे चले कहारगन।
बोली बानि सुबानि, ता ऊपर तृन तोरिकै ॥६१॥

प्रद्धटिका

जेहि सीस रतन उपजी अमोल। सोइ जम्बु द्वीप को नृप अडोल।
यहि द्वीप माँह युवराज भूरि। सब रहे सुजस भरि पूरि पूरि ॥६२॥
नव द्वीपन को यह आपु भूप। धरि आतपत्र सुर गिरि अनूप।
कैलास छटा चामर चलंत। चहुँ ओर सत सेवत अनत ॥६३॥

दोहा

जामुनि जम्बू में लगी, सिद्ध बधू तेहि देखि।
ये हाथी कैसै चढ़े, बूझै तब सविसेषि ॥६४॥

तोटक

तेहिके फलकी द्रवरूप भई। यमुना सरिता रबि आपु ठई।
जेहि के तल मृत्तिक स्वर्णमई। उपमा तुव अगन सब लई ॥६५॥

सोरठा

यामे कोटि हजार, नरपति संब सुहावने।
मै बरनौ निरधार, आप योग तू समुझि ले ॥६६॥

दोहा

अरि युवती सिगार बर, इन्दीवर तम भानु।
नृप अवन्तिपुर को अहै, है तेरे मन मानु ॥६७॥

सुलक्षणा

तहँ लसति अति सिप्रा नदी। जनु बरुन बैठक की गदी।
भुज लहरि तोहि मिलै बसी। नव बदन पंकज में हँसी ॥६८॥

सवैया

याकी पवित्र उज्जैन पुरी महँ आपु बिराजति गौरि गोसाइनि।
बाम सरीर विभूषन संभु की तीनिहुँ लोकन की ठकुराइनि॥
सेवक दीन दयालु सदा तेहि सों सिखि लीजौ पतिव्रत भाइनि।
चाइन सों निहचै धरिहौ बरदायनि के परिहौ नित पाइनि ॥६९॥

सोरठा

क्यों न करै खुट चाल, पति सों पटै न कटुक तिय।
चन्द्रकला हर माल, सदा एक परिवा रहै ॥७०॥

दोहा

भूप ओर हेर्‌यो कुँअरि, करि रूखे दृग कोर।
बिरस देखिबे ते भलो, नहीं देखनो ओर ॥७१॥

प्रद्धटिका

नृप भूषन की मति सोभ मोंह। प्रतिबिंब परी दमयन्ति छाँह।
तहँ देखि उदासिल चित कहार। लै चले और नृप ढिग उदार ॥७२॥
तब बानि बिहँसि कर को उठाइ। दिय गौड़ देस राजा दिखाइ।
यहि ओर नेक दमयन्ति हेरि। मन तो पर दीन्हो वारि फेरि ॥७३॥

मनहरन

भारे भारे कद अरि दुरद बिदारे याके,
　　प्रबल कृपान मुक्ता झरत परत है।
दीरघ परिघ याके भुजके प्रताप तपौ,
　　मानौ राजसिरी के सेद बिंदु पसरत है॥
जोरि कै सपत तन्तु जस के बसन बिन,
　　बाइ सब लोकनि को छाँह बितरत है।

चक्र को धरे तु याते कोऊ नरवर न करै,
कोऊ नरवर नरहरि के डरत है ॥७४॥

सोरठा

दमयती की जानि, चिंता कछु महिपाल पर ।
गही और ढिग आनि, जानत भाव सुजान सब ॥७५॥

तोमर

तन बानि बोलि सुजान । सखि बानि मो करि कान ।
पृथुराज है गुन गेह । मथुरा महीपति येह ॥७६॥
किन अंक राजतु जोर । कर मूल में सब ओर ।
सर चाप धारन जोग । यहि को कहैं बुद्ध लोग ॥७७॥

छप्पय

गोवर्धन गिरि माँह मोर बहु सोर मचावैं ।
ताते भय को पाइ साँप कहुँ दीठि न आवैं ॥
बृन्दाबन में निडर केलि कीजै चित चाही ।
कुंज कुंज प्रति कुसुमलता पुंजन की छाही ॥
सम स्वेत सलिल सीकर सुरत मुक्ता भूषन अग के ।
ते हरत चीर लौ चलत थकि धीर समीर सुरग के ॥७८॥

तोटक

दमयंति उदासिल भाँति भली । तेहि ते टरि औरै ओर चली ।
तब बैन गिरा सुख पाइ कहै । सब राज सुनै चित लाइ रहै ॥७९॥

सोरठा

राजत मान सुरेस, कासिराज कासीपुरी ।
याको उत्तम देस, रजधानी है मुक्तिकर ॥८०॥

सवैया

पातक पुंज लखे कलि के करुनामय के करुना अति आई ।
क्यों तरिहै जगजीव बड़े जब कोटि करै किन दैव सहाई ॥

कासि प्रकासि करी पुहमी परदेह तजे सुरलोक बड़ाई।
जोग बिराग बिना जप याग सु जा महँ मुक्ति परी जनु पाई ॥८१॥

सोरठा

भवसागर जल जतु, कासी मरि हरि रूप को।
लहत तोरि जग ततु, अस्ति धातु भू भाव ज्यों ॥८२॥

दोहा

गगा गौरि गिरीस गुर, गोविद के गुन गान।
गीरवान से गुनि गने, गावत हैं गुन मान ॥८३॥

सवैया

रतिसी तुम या नृपके उरमें कुसुमायुध सों यहु तौ मिलि सोहै।
जनु आनि लयो अवतार बहोरि कै जोरि बनी रति काम की जोहै॥
नख अक उरोजनि केसरि बक अनूपम रूप बराबरि को है।
सिव सीस की चन्द्रकला लजिहै निहचै भजिहै लखिकै मन मोहै ॥८४॥

मनहरन

याके दल चलत पहल सी हलत भूमि,
सेसरु हलत कोल कच्छप दहलतु हैं।
धुंधुरि की धारा सों धमकि विधि विधि जात,
सूर के तुरंग तुग पगु ह्वै चलतु हैं॥
बिंधि से भरत मद दुरद बिहद कद,
निनद मचावैं नभ सुडनि बलत हैं।
भारे भार भारे सों सहसफन वारे फूटे,
रुधिर छंछारे वै पनारे से लगत हैं॥८५॥

सोरठा

नेक दीठि नहिं कीन, दमयती वा ओर को।
वा को वदन मलीन, भयो अनादर सो नयो ॥८६॥

एक एक ढिग जाइ, छोड़ि छोड़ि औरै गहै ।
परम पुरुष चित लाइ, मनो उपनिसद की रिचा ।।८७।।

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँ प्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ द्वीपपतिवर्णन नाम द्वादशस्सर्गः ।



त्रयोदश सर्ग

देश-पति-वर्णन

दोहा

सर्ग तेरहें में कथा, देसपती नरनाथ।
तिनके गुन गन बरनिबो, सुभ बानी सुभगाथ॥

सोरठा

निज तरुनी की लाज, करि बिलम्ब अकुलात नृप।
आये सहित समाज, समुद वारहू पार के॥१॥
ठाढ़े भये कहार, कंध बंस सुखपाल लै।
दासी सखी हजार, देखि भूप विस्मित ये॥२॥

उपेंद्रवज्रा

सरस्वती बैन तबै सुनायो। महीप नीको निकटै दिखायो।
सुवर्णकी केतकिपर्ण जैसो। सुवर्ण राजा ऋतुपर्ण तैसो॥३॥

दोहा

मिलन तिहारे की अवधि, मगन भयो नरनाह।
निज रजधानी अवधि की, करत न नेकौ चाह॥४॥

तोटक

यहि के उर में रसरंग रचौ। जल केलि बिहारन जाइ सचौ।
सरयू जल बिन्दुनि हार लसै। तुव उच्च उरोजनि आनि बसै॥५।

मनहरन

या के कुल भूपति बनायो पारावार एक,
दूजे नरनाह भरयो गंगाजल धार सों।

बांधोंहैगो अरनव को कुल को कमल राम,
जोरि बनचर कोरि सघन पहार सों ॥
झलझल होत याके सुजस हजार भारे,
उलँघत पारे पार अगम अगार सों।
मारतड बंस को सुदंड परभा उदोत,
एक ते सरस एक चंड अवतार सों ॥६॥

मोदक

यहि भूपति को जस छीर पयोनिधि।
नहि पावत पार कबीस्वर की बुधि ॥
यहि के गुन के गन जो गनि आवतु।
अरि कीरति की बिरतो बिनसावतु ॥७॥

सवैया

यहि भूप के तेज दिवाकर सों बिधि दीह ते दीह बड़ो दिन कीन्हो।
बड़वानल याहि को है प्रतिबिम्ब पयोनिधि जारि प्रकासहि लीन्हो ॥
अरि राजनि को जस तारनि लों कहुँ नैसिक दीठी परै नहि चीन्हो।
तम भीतर बाहेरहू नर है न रहै सुख मारग मे मन दीन्हों ॥८॥

मनहरन

या के अरिन की अपकीरति अधिक बढ़ी,
यमुना नदी सी फैलि चली चहुँ ओर सों।
या के भुजदंडिन सों भई सुरसरि रूप,
कीरति सुहाई मिलि ता सों अति जोर सों ॥
संगर के संगम में न्हात जे सुभट कोट,
कोटि उद्भट तारे तूरज के सोर सों।
रंभा के सघन बन नंन्दन संदभ मिले,
रभा परिरंभन करत साँझ भोर सों ॥९॥

प्रद्धटिका

यहि भाँति परे गुन तासु कान। रहि सिर कँपाय कछु सावधान।
तब और नृपति दीन्हों दिखाय। भगवती बचन बोली बनाय ॥१०॥
यह पौण्ड्र बस है भूमिपाल। है कीरति रमनी भाल लाल।
यहि ओर नेक दृग कोर हेरि। जनु मैन पीर बाधा निबेरि ॥११॥

सोरठा

छिति में फिरी बनाइ, चढ़ि अकास नाच्यो चहै।
बड़ो बंस यह पाइ, नाचति कीरति नर्तकी ॥१२॥

दोहा

या के डर अरिवर फिरैं, बनन बनन करि दौर।
निज नगरी बन-सी बनी, बनी न एकौ ठौर ॥१३॥

मनहरन

संगर सों भाजे अपकीरति सो लाजे अरि,
तेंदु के सघन बन तहाँ बिलसतु है।
अनल प्रताप लागे अनिल नराच फूँक,
ताते चिनगारेन को जूह निकसतु है॥
जैसो जैसो ईंधन जरत त्यों बढ़त तैसो,
कबहूँ घटै न ऐसो अब धधकतु है।
मारतंड मंडल ओ पावक तपत भव,
भाल पै नयन बज्र इंद्र निकसतु है ॥१४॥

तारक

यहि के दलदंति चलैं जब झूमैं। कुल पर्वत से लखिये रन भू मैं।
सँग देवन के पृथु देखन आयो। फिरि चाहत है छिति सैल उड़ायो ॥१५॥

सोरठा

बोली दासी टेरि, दमयंती को ओर लखि।
धर्‌यो चहत सखि हेरि, काक पताका पै चरन ॥१६॥

हँसे सभा सब कोइ, भूप बदन मैलो भयो।
जहाँ स्वेतता होइ, टकटकात तहँ स्याम रँग ॥१७॥

मालिनी

तबहिं बचन बोली भारती भाव लीन्हे।
चल नयनि दमयती ओर को दीठि दीन्हे॥
यह नरपति नीको इन्द्र के सैल को है।
कर गहि सखि याको रूप सों तोहि सोहै॥१८॥
अरि सकल पराने नाम या को सुने ते।
बिपिन कल न पावै कीरबानी गुने ते॥
गुन गनि गनि या के बे पढ़े सीखि लीन्हे।
सुनत भजत आगे भीति मीड़े मलीने॥१९॥

दोधक

या डर भूपति बेग पराहीं। छाँड़ि देइ तरुनी मग माहीं।
बूझतही निज देस बतावै। सीतल चद न चद गनावैं॥२०॥

सोरठा

धनुष बान गुन पाइ, यह भूपति जग बस करत।
केवल गुन परभाइ, तू बस करि या ते सरस॥२१॥

मनहरन

या सों जे भजत अरि तिनकी रमनि गिरि,
बिलनि में बासर व्यतीत करिबो करैं।
चंद्र के उदोत निकरति सिखरन पर,
खेल की बतक जानि बाल अरिबो करैं॥
रोवन लगी हैं ज्यों ही बिषम उसासिन सों,
छतिया पै चन्द्र प्रतिबिम्ब करिबो करैं।
तिनको गहत हरखित ह्वै रहत सुत,
अद्भुत दुख सुख भाव भरिबौ करैं॥२२॥

विजय बजाइ मारू जहाँ है चढ़त सोइ,
धरनि सराहै निज भाग सरसाइ कै ।
यहै मेरो पति मेरी याही में सुरति याते,
काँपति हैं थर थर सु सातुक बनाइ कै ॥
याके सम्मुख ह्वै समर में सरीर छोड़ि,
जैहैं सुरलोक अरि गन समुदाइ कै ।
सूरय में बिल अवलोकत प्रबल खल,
मानो यम साजो दरवाजो चित लाइकै ॥२३॥

संयुत

गुन रासि को सुनि तासु की । रद दाबि अंगुलि हाँसु की ।
चुप ह्वै रही तब ईस्वरी । नृप और के ढिग को टरी ॥२४॥

दोहा

पुरी कानची को लसै, भूप पुरनदर येहु ।
सुन्दर मदर सों अचल, बल गौरव गुन गेहु ॥२५॥

मनहरन

सुभट अटूट कोटि कोटि रन जूझवारे,
या को जूझि देख मति कौन की भरमै ।
तीर ज्यों कठोर जो लचै न सों दिगन्त जात,
चाप ज्यों मुठो मे थान पावैं आनि रन मै ॥
जगवीर धीर परपीर को करत भग,
रंग सो करत कछु आइ कै समर मै ।
बाजत निसान गान जीत को बखान होत,
नाचती बजारन मे बैरिन की हरमै ॥२६॥

छप्पय

भरे भाल सिंदूर उच्च अति सूर सुहायो ।
और रग सब स्याम तमोगुन ज्यों छबि छायो ॥

नभ में उदित उदार नखत मुक्तागन राजैं।
सोर करत सब ओर भँवर भीरन सो छाजैं॥
जब हूल करत गजराज रन मनौ आइ सध्या गई।
सब सूर तेज अथवन लगे जोरि पानि अंजलि ठई ॥२७॥

सवैया

हरि को उर छोड़ि दियो लछमी मकरी मनि के छल पूर्‌यो जराहै।
तजि कौल दयो तब ते छतिया छिदि छेद हजारन कौन सराहै॥
आपने लायक बास बिचारत ढूढ़ि फिरी तिहुँ लोक धरा है।
तेज के पुंज प्रकासित देखि बसी स्त्रिय या भुज के पिंजरा है ॥२८॥

मनहरन

आँखिन में मोद को सलिल न धरत याते,
बैन उन ही सौ नित सुनत सुहाइ कै।
तन में न रोम ताते मन में मुदित ह्वै कै,
रचत न पल पुलकावलि बनाइ कै॥
याहि ते अहीस नेक सीस न कँपावैं कहूँ,
छिति गिरबे के डर हिये में डराइ कै।
कहा धौ करत सेस सुनि कै सुजस या को,
कौन भाँति धावन सों प्रीति प्रगटाइकै ॥२९॥

समर में अरिगज कुम्भन में हन्यो तीर,
फोंक लौ समात बीर ऐसो तेजधारी है।
रावरे कुचनि की बराबर चहति या ते,
सालत हैं तिन्हैं सेवा करत तिहारी है।
परत है पाँय तेरे करि कै उपाय तै ही,
ऐसो पति पाइ अहे कहा वैसवारी है।
मोहूँ सों दुराइ लेहै बातन भुराइ तैं तो,
आपु चतुराई भरी बिधना सँवारी है ॥३०॥

प्रद्धटिका

दमयति लख्यो मुस्काय नेक। तब और बतायो भूप एक।
सखि लखि नैपाल महिपाल आप। दिनकर समान जाको प्रताप ॥२१॥

छप्पय

तरकस में ते लेत धनुष जोरत नहि जान्यो।
ऐंचत पर्यो न जानि कान लौं धौ कब तान्यो॥
छुटत पर्यो नहि जानि चलत लागत नहि देख्यो।
याको आसुग अवनि माँह अद्भुत करि लेख्यो॥
रन रग घोर अगनि विजय गावतु हैं गुन गान सों।
भिदि भिदि अनेक महिमें गिरैं जानत या अनुमान सों ॥२२॥

सोरठा

हँसी सखी यह देखि, दमयती की भौह चल।
या में गुन गन लेख, सकट सों कैसं कहै ॥२३॥

सुलक्षरा

नृप और ढिग करुनामई। सुखपालकी सग लै गई।
मिथिला पुरदर को कह्यो। मन माँह मोद वहूँ लह्यो ॥२४॥

चौपाई

पाहि पाहि यासों नहि कह्यो। तौ ताको ऐसो फल लह्यो।
समर माँहि जाके अरि राज। याते काढ़त ओठ समाज ॥२५॥
या सों जग याँचत है जेते। मन भाये पावत फल तेते।
कल्पवृक्ष फल भारनि भर्यो। टूटि टूटि डारनि सों पर्यो ॥२६॥

दोहा

नयन सैन दमयति की, देखि गिरा गुन भूरि।
कामरूप राजा तबै, दयो दिखाई दूरि ॥२७॥

चर्चरी

है सखी रति रूप तू यह कामरूप महीप है।
ब्याह लायक रावरे कुलकौल दीपति दीप है॥
रंग सगर मॉह बैरिन को बधू सिर को धुनै।
जीति की लीपि ज्यों लिखै निज नाथ को संकट सनै॥३८॥

सोरठा

यहि सन्मुख रिपु हारि, बूडे आसुन धार सों।
तरनि टूक कै डारि, तऊ तरे सागर जगत॥३९॥

दोहा

खासदान सों लै दई, बिरी खवासिग चारु।
परिहरियै यासों जननि, मुख परिश्रम को सारु॥४०॥

चौपाई

उत्कल भूप और करि हाथ। बानी बरनत भयो सनाथ।
नयन कोर सों नेक कनेखि। गुन अनुराग रूप यहि देखि॥४१॥

गीतिका

जग मॉह याचक यूह जोरि समूह दानिनि सों भरे।
सुररूख औ सुर धेनु की ढिन जात हैं न कोऊ परे॥
निज दूध सींचत धेनु वाहि सुदेतु भोग पतान के।
यहि भॉति आपस मे करैं उपकार को नित दान के॥४२॥

सोरठा

या प्रताप उर भान, भ्रमत अगिन बन में छिप्यो।
धिक बड़वानल मान, निज अरि जल सरननि बच्यो॥४३॥

तोमर

दमयंति को रुचि जानि। हँसि कै कह्यो तब बानि।
सखि देस कीदृक राज। गुन धीर धर्म समाज॥४४॥

दोहा

मुख सौ रच्यो बिरंचि यह, रह्यो न दीपति कोस ।
अंधकार पुंजनि सज्यो, चिकुरनि के निरजोस ॥४५॥

मनहरन

याकी असि साँपिनि कढ़त स्यान सुखिर सों,
लहलही स्याम महा चपल निहारी है ।
नेकु न अघात घूट घूटन पियत नित,
बैरिन की प्रान बात ऐसी भूख भारी है ॥
बिस की लहरि बढ़ै तिसकी अधिक चढ़े,
तिन्हैं न सातवै जिन सुगति बिचारी है ।
बसन गरे में डारि अगुरी दसन दाबि,
भागनि सों ऐसी नाग दवनि सुधारी है ॥४६॥

छप्पय

पीठ देत जो समर सत्रु की ओर अनैसो ।
जहाँ रहै तहँ होइ बक्र ताही सों तैसो ॥
अंगनि आपु कठोर सोर ज्यों बज्र करेरो ।
महा दोष को धरै मूठि को बंध घनेरो ॥
यहि भाँति वीह कोदंड को गहत एक गुन चाइ सों ।
यहि सरि न और बिधि निरमयो गुनग्राही परभाइ सों ॥४७॥
याके सर औ सत्रु एक से दो सौ होवैं ।
रन सन्मुख ह्वै गिरैं कंप मुख शब्द न जोवै ॥
भये दुओ जब मुक्त बहुरि आवत नहि नीके ।
बड़े बड़े गुन योग जिन्हैं गावत सब ही के ॥
इमि कछु विसेष नहि लखि परै आश्चर्य एकै तकै ।
तहँ एक अमित्रनि को हनै एक भेदि मित्रहि सकै ॥४८॥

सवैया

फूलत मंजुल कंजके पुंजनि गुंजत भौंर महा सुख पायो ।
हीरन को दग नीर गही सर तीर बली बनमालनि छायो ॥
मारग को स्रम पार गहो गुन नागर सागर सों बनि आयो ।
जागत जाग करै अनुराग यही बड भाग तड़ाग खनायो ॥४६॥

दोहा

याकी कीरति सो बिमल, स्वेत भये जग जाल ।
अरि अपकीरति दीप की, छाया सी तिहुँ काल ॥५०॥
दमयन्ती की सहचरी, कविता निपुन अपार ।
याकी अपकीरति बरनि, हौं करिहौ निरधार ॥५१॥

चौपाई

या भूपति के अयस निहारे । गने परारध ते अति भारे ॥
गावत हैं गूँगा गन खरे । जिनके बचन समझ नहि परे ॥५२॥

दोहा

गावत लै सुर आठ यों, बहु बाँझन के पूत ।
कूरम रमनी के दुगध, सागर तट इक सूत ॥५३॥

सोरठा

हँसी समा महराइ, सुनिके अद्भुत बचन ये ।
भैमी चली लुभाइ, द्युति सागर लखि निकट हो ॥५४॥

दोधक

पाँच लखे इक रूप सुहाये । भूषन बेस समान बनाये ॥
चारि अलीक न ता मन भाये । एकहि देखत नैन जुड़ाये ॥५५।

सोरठा

नल लखि राजकुमार, सरबस अपने चित्त को।
सुधासिंधु मथि वारि, बूडि रह्यो तन मदन मय ॥५६॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ देशपतिवर्णनं नाम त्रयोदशः सर्गः ।



चतुर्दश सर्ग

पंचनली-वर्णन

दोहा

सर्ग चौदहें में कथा, पंचनली को संग।
बरनन श्लेष बिलासमय, भैमी संसय रंग ॥

सोरठा

ज्यों सुगन्धि अलि माल, नदन सों ढिग कल्पतरु।
त्यों भैमी सुखपाल, चलि कहार जहँ पंचनल ॥१॥
कह्यो भगवती टेरि, कछु गाथा अश्लेष की।
बासव नल त्यों हेरि, लख्यो न काहू भाव सो ॥२॥

दोहा

वीर सेनि उद्भव सिखर, बलजित पौरुष सार।
सेनाचर गज मुख सहित, दानवारि बिस्तार ॥३॥

सवैया

भूभ्रत सत्रुन के हठि काटत कोटिक पच्छ अगोटि अठाये।
देवनि माँह अधीस यहै गुन रंजित जीव सबै चित लाये ॥
पाँइन में अनुरागित है सुभ सेवत लेखनि के गन आये।
याके संजोग सची सुख लै बिधि एक रची सब अंग सुहाये ॥४॥

प्रद्धटिका

सुनि गिरा बैन नल हरि समान। निरधार भयो नहिं परत कान।
नहिं नैनन सों पायो बिसेसु। ज्यों बासव त्यों नैषध नरेसु ॥५॥

पुनि गिरा गूढ़ बोली बिचारि। नल राज अग्नि सों एक मारि।
सखि यह प्रतापनिधि सुचि स्वरूप। सिर दिपत ज्योति ता के अनूप ॥६॥
मुख बिबुध सभा को यहै देव। सब याग करति या की सुसेव।
अति तरल हेति पारथीव मूल। याकी बिभूति फैली अतूल ॥७॥

सोरठा

सुनि बानी की बानि, मिलि समान नल अनल सों।
परी न कछु पहिचानि, राजकुँअरि बिस्मित भई ॥८॥

मनहस

तबहीं हँसी परमेस्वरी सुखपाइ कै।
दमयति ओर अनूप भौंह चलाइ कै ॥
रविनन्द के गुनगान तौ बरनै लगी।
नलराज के छल सों प्रकासन में पगी ॥९॥

सोरठा

धरत दंड सब ठौर, याकी रुचि सों अमर की।
धरमराज सिर मौर, मित्र परम प्रिय चित्रगति ॥१०॥
सकल भूतगन बास, सब याके बस में रहत।
नेकु न होत उदास, तीन लोक के भोग सों ॥११॥

दोहा

गिरा बोलि ऐसे बचन, नेकि डोलि पग मंद।
नल के छल बरनै लगी, जलनायक मुख चंद ॥१२॥
रहत सर्वतोमुख बनी, अनो ग्राह भटजोर।
लसति भूरि तरवारि निधि, जासु बाहिनी घोर ॥१३॥

चौपाई

रत्नाकर या के बहुतेरे। समुदै निसिबासर हित हेरे ॥
काम दान महिमान बढ़ावै। सदा पूरि घन रस बरसावै ॥१४॥

दोहा

बचन अनेकारथ सलिल, सींचति ज्यों ज्यों बानि ।
त्यों ससय लतिका बढ़ी, दमयती उर आनि ॥१५॥

तोटक

नलके गुन गौरव की रचना । मति देवि करी मति की सचना ।
यह राजत है सुर रंग सभा । छबि अच्छ हजारन को परभा ॥१६॥
वह जारत दारुन को सबहीं । झलकै परिताप लगै जबहीं ।
घन फूलन भूषित सी तनु है । भुवनेश्वर नाम सोहावनु है ॥१७॥
पति दच्छिन और न या सरि को । परमारत चोप बचै टरि को ।
सुनिकै यह अद्भुत बात नई । पचहूँ नल ओर चकी चितई ॥१८॥
नहि पावत है निरधार कियो । धरको हियरा अति ताप लियो ।
हरिनी जनु चानक जाल परी । जनु सोनचिरी अबहीं पकरी ॥१९॥

दोहा

इन्द्र अनल यम बरुन सों, नल बरनन मिलि जात ।
चारिपच्छ गनि दोष मन, पंच मही ठहरात ॥२०॥
एक एक नल लखि छकी, पंचम पै मनमोज ।
गनती बानन ईसफल, मानौ करी मनोज ॥२१॥
चारि ओर हेरै नहीं, लखि पंचम बड़भाग ।
मन अन्तर उपज्यौ मनौ, जन्मान्तर अनुराग ॥२२॥

लीलाछन्द

ह्वै गई अति बिकल तनमे छूटि जात सभार ।
सुमिरि कै मनमाहँ आनति हेम हस बिचार ॥
देव लोक मराल को इत पाइये किन आज ।
आइ देइ बताइ तुरतै कौन है नलराज ॥२३॥
लखत चन्द्र अनेक जगजन आँखि में जब रोग ।
है भयो भ्रम मोहिं अद्भुत कौन रोग सयोग ॥

काय-व्यूह बनाइकै नल धौ करै परिहास ।
सकल विद्यनि को कलानिधि खानिहै सबिलास ।।२४।।

तोमर

इन माहँ है नल एक । पुनि एल राज विवेक ।
अरु तीसरो तहँ काम । युग दस्र है अभिराम ।।२५।।

दोहा

पहिले पेखे बिरह में, नल अनेक भ्रम लागि ।
लखति पाँच आई मनौ, वहै दसा जिय जागि ।।२६।।

तारक

इनमें नल क्यों कर जानि परैगो । नहि मानुष लच्छन सों उभरैगो ।।
इनमें सुर चिन्ह परै लखि नाहीं । अकुलाइ गई कलपै मन माहीं ।।२७।।

दोहा

मै कैसे पाऊँ नलै, जड मानुष अज्ञान ।
कहि गाथा अश्लेष सों, श्रीभगवती सुजान ।।२८।।

मालिनी

अमर सदै हूजै याँचिहौं रावरे सों ।
नल नरपति मोकों दीजिये पा धरे सों ।।
मदन अनल लागो सूखि गैयों तिहारो ।
करुन जलधि जी को दोष लाग्यो हमारो ।।२९।।

चन्द्रमाला

भटकायो नल रूप आपु धरि पेखो पुन्य तिहारो ।
मूरख हाथ परी पोथी ज्यों परउपकार बिसारो ।।
जाके करम लिखो ईश्वर जो सोई होतु सवारे ।
सूरज ताप लगे फूलत हिमि लागत कमल प्रजारे ।।३०।।
देवी के कर बरनमाल दै जो नल को पहिराऊँ ।
तौ दिगीस देवी दुख मानै कैसे तिन्हें लराऊँ ।।

जो इनमे साँचो नल सोई बरनमाल यह धारै ।
तो समाज पंचन मे कोऊ कैसे लाज बिसारे ॥३१॥
चारि नलन को एक सेस है पचम अचल बखान्यो ।
सुधा सलिल सींचति नैनन को मैन रुप मन मान्यो ॥
या सों रस बस मेरो चित है सरबसु यहै सुहायो ।
होत कवित के छोर छबीलो अनुप्रास छबि छायो ॥३२॥

प्रद्धटिका

इम करि बिकप्प संदेह चित्त । पायो न चिह्न नेको निमित्त ।
अति मुदित होत लखि नल रसाल । बिन लाभ अधिक अकुलात बाल ॥३३॥

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमडलाखडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
पचनलीवर्णन नाम चतुर्दशःसर्गः ।



पंचदश सर्ग

देव-गमन

दोहा

सर्ग पंद्रहे बरनिबो, बरनमाल को ठाट।
दै असीस सब देवता, लौटे सहित उचाट ॥

सोरठा

नल मिलिबे के हेत, सेवन देवन को लगी।
सुरभी देव निकेत, सुर सेवा है नरसुरभि ॥१॥
धूपन सलिल चढ़ाइ, आल बाल परदछिना।
इष्ट मृष्टफल पाइ, देत देव सब देवतरु ॥२॥

सवैया

देवन की मन भावना कै सुमिरे एक एक के नाम सुहाये।
आठहु सिद्धि नवो निधि पावत गावत जे इनमें चित लाये ॥
साधि समाधि धर‍्यो हिय ध्यान कर‍्यो कछु ज्ञान भये मन भाये।
भाजन भाग सभाजन राग भरे रस देखि रहे टक लाये ॥३॥

दोहा

गीत सहित षट्पद जुकुत, कुसुम लता के संग।
पूजन लागी बिनय बहु, सब छ्दन के रंग ॥४॥

वंशस्थ

करी बड़ी भक्ति दमयति दीन ह्वै। रहे सु चारौ सुर आपु लीन ह्वै।
हर‍्यो महामोह दया निकेत है। करै कृपा ताहि सुबुद्धि देत हैं ॥५॥

चौपाई

जो जो गाथा गिरा प्रकास्यो । ताको अरथ हिये में भास्यो ।
सब में नल नल में सब जोरे । नलकी अधिकाई चित्त भोरे ॥६॥

सोरठा

व्यंग्य बचन की खानि, जापर यह किरपा करै ।
सो मूरति धरि आनि, खरी भारती आपु है ॥७॥

संयुत

नहि पाँइ भूतल में लगै । सुरचारि आनँद सों पगै ।
नलके लगे पद मेदिनी । लखि जाति जानि नितबिनी ॥८॥
सुरके सरीरन में कही । कनरेनु के लखिये नहीं ।
नल देह पै द्युति पाइकै । जनु भूमि भेंटत छाइ कै ॥९॥

तोटक

नल के पल लोइन माँह लगैं । सुर नैनन मे न निमेष लगै ।
सुर सीस न फूल मलीन भये । नलको सिरके कुम्हलाइ गये ॥१०॥

तारक

इन भेदन सों नल को पहिचान्यो । चित अन्तर सिंधु सुधाहिं समान्यो ॥
तब काम उतायल कै अकुलावै । जयमाल न लाजन ते पहिरावै ॥११॥
जबहीं पहिरावनको उमहै री । तब सातुक थँभु उठै तन बैरी ॥
दगलाज मनोज हिये डरपावै । दुहुँ ओर बँधी फिरकी सम धावै ॥१२॥

सवैया

नैसिकु हाथ बर्‌यो पिय त्यों पुनि ऐंचि लयो छतिया धरकानी ।
चंचल दीठि चली उतको हँसि कोरनि हाँस सुबीच बिलानी ॥
आवत जात कटाच्छ रहैं नल हैं नल हैं जिनको अभिमानी ।
काम कला कुल आकुल ह्वै अबला अब लाजहि पै ठहरानी ॥१३॥

दोहा

अर्ध नयन फेर्‌यो खरे, गिरा बदन की ओर ।
नल मुख कमल लखे दुरे, अरध नयन की कोर ।।१४।।

[देवी बचन]

दोहा

लाज लहरि लीलामई, नई तुहीने आपु ।
तोहीं तल गति लै मिलै, कै सीतल कै तापु ।।१५।।
तब देवी के कान लगि, दमयती परवीन ।
अर्धनाम नल को लियो, हँसि मृदु उत्तर दीन ।।१६।।
लै उतारि सुखपालकी, गहे हाथ सों हाथ ।
जरी बिछौननि पै चली, गिरा लिये ही साथ ।।१७।।

सवैया

बाहु लता गल मेलि गिरा दमयति करी मघवा मग सोहै ।
नै गइ आ भई दुगुनी ससवाइ करी कुटिलै पल भौहै ।।
हाथ सों हाथ गह्‌या हँसिकै मति साथ चली पग द्वै मनमोहै ।
लाज लता हिय में उलही झहराइ भजी दुलही स-रिसोहै ।।१८।।

चित्रपदा

आवत देखि दमयंती । रीझत इद्र इकंती ।।
भाजत पखि डरानी । बासव दीठि लजानी ।।१६।।
दौरि गही पुनि बाही । त्यों झहराइ झुकाही ।।
बासव के ढिग आनी । गूढ़ गिरा मुसकानी ।।२०।।

गीतिका

यह रावरी अरचा करै कर जोरिकै चिललाइकै ।
नहि माल मेलि सकै गरे नल राज सों समुहाइकै ।।
तुम मोंह एक बरै तबै जब तीनि को अपकारकै ।
यह जानिकै सुर असमें नलमें चहै सुखसारकै ।।२१।।

निज हाथसों गहि कधग्रीव मिलाइ पाँयन पै दई।
करिये कृपा सुरनाह या पर रावरी सरनै गई॥
मुसकाइ नेकु कह्यो सुरेस्वर भौह सैननि सों कह्यो।
हरखी सखी सिगरी गिरा नल ओर को मारग गह्यो॥२२॥

दोहा

नल सौंहे जब लै चली, बदन हँसौहे बानि।
झुके रिसौहे नयन के, लीन्ही भौहैं तानि॥२३॥

सवैया

बाजत नेवर नेकु चलै झिझिकै पुनि पोछेहि को फिरि आवै।
नेकु लखै तिरछे दृग कोरन जोरि कथा लजि नारि नवावै॥
कबहूँ मुरि पीठि पै ठाढ़ि रहै कर ओट दै माल पियै देखरावै।
यह पूरि मनोज रह्यो नल के वह दूरहि ते छलकै ललचावै॥२४॥

मालती

चली गज चालि। लगी ढिग आलि।
गई नल पास। भरी सुबिलास॥२५॥

सवैया

चौर पंखा चहुँ ओर सुगध सजै तिन दासिन त्यों चित लावे।
त्यों त्यों भजै कर ठेलि रिसाइ ज्यों ज्यों मतिलै नल सों नियरावै॥
पाइँ परैं सखियाँ सिगरी कर जोरि निहोरत बाँह उठावै।
ग्रीव नये बिहँसे छितिपाल खरी नहि माल पियै पहिरावै॥२६॥
देखत ही उमड्यो परै वा पर तोरति अगन लेति जम्हाई।
लाइ रहै टकसी थिर ह्वै जनु लेत पिये तिय की सुघराई॥
वा ढिग घेरि चलै सखियाँ पग चारिक लौ कर ऐंचत आई।
अचल ओट दिये ही दिये कर चंचल माल नलै पहिराई॥२७॥

दोहा

जनु निज प्रीत परतीति की, बरनावली बिसाल ।
पहिराई नल के गले, नव मधूक की माल ॥२८॥

सोरठा

पुही दूब दल स्याम, जनु सिगार रस बेलि यह ।
फॉस चलाई काम, भूपति के गर में परी ॥२९॥
नल उर संगम पाइ, अकुर सों पुलकित भई ।
देखति भौंह चढ़ाइ, दमयती वा माल को ॥३०॥

सवैया

नौबति बाज उठी इक बारहि मगल बीन मृदग सुहाये ।
गाइ उठीं सखियाँ सुख गीत निछावरि भूषन चीर लुटाये ॥
बन्दि पढ़ैं बिरुदावलि नन्दित आसिस बिप्र बधून सुनाये ।
नाचती हैं चहुँ ओरनि किन्नरि भीम के धाम असीम बधाये ॥३१॥

तोटक

नल के उर निर्मल माल नई । सब फूलन सों प्रतिबिम्ब भई ।
कछु नाहि कलूक समाइ गई । सरधार मनोज मनौ हतई ॥३२॥

तोमर

नल माल सों उर लागि । परसेदु आवत जागि ।
जनु अरघ साजत काम । तेहि ब्याह को अभिराम ॥३४॥

दोहा

तूल तूल दमयति के, कँपत अग सतिभाइ ।
आश्चर्य भूअतु कप्यो, काम बान बस बाइ ॥३४॥

भुजगप्रयात

जही माल की ओर राजा निहारो । गयो पूरि आयो महा मोद भारो ।
भयो गग पीरो धरो होय धीरो । कदम्बै कली ज्यों सजो है सरीरो ॥३५॥

लखे भाव ऐसे तबै देव चारौ। उदासी भये आपको मान मारौ।
धरे आपने रूप सोभा प्रकासी। हँसे जे जुरे आइ राजा बिलासी ॥३६॥

तोमर

प्रगटे सुनैन हजार। कर बज्र तीछन धार।
सब राज हेरति नीठि। इमि इन्द्र आवत दीठि ॥३७॥
चहुँ ओर छूटत ज्वाल। तहँ ह्वै रही छबि लाल।
इमि देखि पावक रूप। बिसमय भये सब भूप ॥३८॥
कर दण्ड लोचन लाल। सब देह राजत काल।
यमराज रूप निहारि। भजि कै चलीं सब नारि ॥३९॥

दोहा

चित्रगुप्त कायस्थ गुन, दीठि परयो तेहि ठौर।
मसी लिखै इक पत्र पै, मसी छिपावत और ॥४०॥

तारक

करपास धरे जलनायक नीको। तहँ देखि परे उजरो जगती को।
परमेस्वरिहू निज रूप प्रकास्यो। अति अद्भुत तेज तहाँ तब भास्यो ॥४१॥

दोहा

नल दमयंती की लखी, जोरी परम रसाल।
तब बोल्यो सुरपाल हँसि, सुन्दर बैन बिसाल ॥४२॥

[इन्द्र बचन]

प्रद्धटिका

नल कह्यो हमारो दूत भाउ। दमयंति लह्यो ताको प्रभाउ।
अब मिल्यो तोहि सरबसु सुचेतु। सिंगार सार सुख को निकेतु ॥४३॥

[अग्नि बचन]

प्रद्धटिका

नल करे होम हयमेध याग। बहु दिये लोकपति देव भाग।
हम भये मुदित मन पाइ भोगु। दमयंति भयो तेरो संयोगु ॥४४॥

नलराज तोहिं बरदान देतु। तू सरस रसोंई स्वाद लेतु।
करि सिद्ध सुद्ध परकार भूरि। हम करहि पाक जिमि अमिय मूरि ॥४५॥

[धर्मराज बचन]

हम धर्मराज भाषत पुकारि। नलराज नेकु इत को निहारि।
नहि कष्ट दसा तुमको लखाइ। नहि चित्त धर्म ते अत जाइ ॥४६॥

[वरुण बचन]

छप्पय

जहाँ जहाँ तुम चहौ तहाँ निर्जल महसागर।
सकल बाहिनी सग रहैं तेरे गुन आगर॥
करत ताप नहि तेज भानु पावक डरि जाहीं।
देस देस के गौन रहौ जस मेघन छाहीं॥
कुलि फूलत फूल सोहावने ते सुगंधि अति ही धरैं।
दमयती सग जल केलि मे महामोद तुमको करैं ॥४७॥

[सरस्वती बचन]

दोहा

मेरी सखि तेरी प्रिया, है प्यारी अति मोहिं।
मोहि रही हौ तोहि लखि, देत तहीं बर तोहि ॥४८॥
बिन माँगे जो पाइये, ताहि न दीजे छोड़ि।
दैव देइ जो करि कृपा, लीजै ओली ओड़ि ॥४९॥

छप्पय

नारि पुरुष आकार भेद द्वै भाँति बखान्यो।
पार ब्रह्म के रूप तेज को पुज प्रमान्यो॥
आदि अन्त में प्रनव बीच हरि बीज बिराजै।
अनल सग सुभ रंग लता लछमी छबि छाजै॥
सिर मुकुट सुधाकर की कला अमल लसै परकास सों।
चित सुमिरि भूप मम मत्रको होइ सिद्धि सबिलास सों ॥५०॥

जपतु याहि चित लाइ होत सुरु गुरु की बानी।
मोहत सुरनर नारि काम की कान्ति लजानी॥
जो जो मन अभिलाष तीनि लोकन मा आवै।
सुरहु दुर्लभ होइ वस्तु तुरतै सो पावै॥
यहि भाँति भोग ससार के बाढ़त ज्ञान सुतन्त्र है।
नल भूप सुनै मम रुपमय यह चितामनि मन्त्र है॥२१॥
धूपदीपयुत पुहुप भोग पूजा जो साजै।
हँसबाहिनी मोहि ध्यान धरि ज्ञान समाजै॥
वर्ष एक जो जपै मन्त्र चितामनि मेरो।
पावै मेरो रूप भानु सम परै न हेरो॥
जेहि ओर कृपा करिकै लखै धरै हाथ जेहि सीस पै।
सो रचन लगै कविता तुरत जैसो बनत अहीस पै॥२२॥

सवैया

पुण्यश्लोक करै कविता तुम पुण्यश्लोक भये जग जाने।
कीरति कीरति तीनहुँ लोक बिलोकि तुम्हे जन लेत लजाने॥
सुन्दरता मनि आकर तेज दिवाकर ते झमकै सरसाने।
पाप हरैं सुमिरे कलिके तुम श्रीहरि के सरिके मन माने॥२३॥

दोहा

बोली देवी देव सब, कहा देइ तुहिं धीर।
जे तो तियपातिब्रत हरे, होइ भस्म सो बीर॥२४॥

मनहंस

तब देवता नभ को चले सुख पाइकै।
घनघोर दुदुभि दीह दीह बजाइ कै॥
उठिकै चले नृप झुंड सों अकुलाइ कै।
गये यक्ष किन्नर दानवादि लजाइ कै॥२५॥

चर्चरी

और राजनिसों सखी गन ब्याह को ठहराइ कै।
भीम भूपति सों कह्यो दमयति यों चित चाइ कै ॥
ते सखी सब रूप सुदरि सील भूखन सों भरी।
हेरि हेरि निहाल होत महीप ओरनि को खरी ॥५६॥

चौपाई

इन्द्र सग सुर तीन सिधारे। हस चढे देबी पगु धारे।
औसर जानि तबै अति भल्यो। नल डेरनि को चाहत चल्यो ॥५७॥

दोहा

बरसे फूल अकास ते, सर मे छोड़त मारु।
पॅजनि गुजति ओर चहुँ, भौरनि को परिवारु ॥५८॥

मालिनी

जहॅ जहॅ निज डेरा थे तहाँ भूप आये।
नल मिलि दमयती सग बैठे सुहाये ॥
मुदित चित महँ ह्वै ब्याह के साज साजै।
सब सजत बधाई भेंट दै भीमराजै ॥५९॥

इतिश्रीमत्प्रचडदोर्दड प्रतापमार्तंड भूमडलाखडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ देवगमन नाम पचदशस्सर्गः।



षोड़स सर्ग

वर-यात्रा

दोहा

सर्ग सोरहे में कथा, नल विवाह को रँग ।
दमयन्ती सिंगारिबो, अंग अंग परसंग ।।

सोरठा

निषध देस नरनाह, डेरन को हरखित चले ।
बरन माल उरमाहि, लगि दूजी दमयति सी ।।१।।

दोहा

मारग में बरखत चल्यो, अरथिन को धन भार ।
करि राखे बहु ढेर उन, ढोवत रहि न सम्हार ।।२।।
भीमराज भीतर गयो, रानी सों बतराइ ।
जनी सहेलिन सों सहित, लीन्ही सुता बोलाइ ।।३।।
राजा रानी सों कह्यो, बड़ो तिहारो भाग ।
नलसों पायो पाहुनो, जामे जग अनुराग ।।४।।
सजैं साज सब सुन्दरी, कुँअरि ब्याह के योग ।
बाहर आय बुलाइ लिय, सकल ज्योतिषी लोग ।।५।।

प्रद्धटिका

तब ब्याह लगन सोधी बनाइ । नहिं सप्तम अष्टम ग्रह लखाइ ।।
गुन रासि रहै छत्तिस अमोल । दस द.ष दूर भजि गये लोल ।।६।।
तब दूत बेगि भेजे महीस । नल निकट जाय कहियो असीस ।।
करिये पवित्र हमको सधाम । तुव चरनोदक सों सफल काम ।।७।।

शशिवदना

कहि चारन बानो । नरपति मानी ।
हँसि नल बोले । वचन अमोले ।।८।।

दोहा

मेरो कहौ प्रनाम चलि, हौ आवत यहि बेर ।
बिदा कियो नृप दूत को, दिये दान बसु ढेर ।।९।।

तोमर

सुनि भीम दूत सुबानि । मन माँह आँनद मानि ।
रथ बाजि बारन आनि । पठई तहाँ अगवानि ।।१०।।

दोधक

जे लिखनो करि चित्र प्रवीने । ते अति गर्व करै रग भीने ।
जे पकवान घने करि जानै । ते अपनी सरि और न मानै ।।११।।

दोहा

करत खुसामद सबनकी, राजरानि गुनगेह ।
पान दान सनमान कै, मानति सबन अछेह ।।१२।।

तोटक

सबही मुक्ता मनिमाल लगी । पुर द्वारन द्वारन रग रँगी ।
भरि आँनद दीह बिलासतु है । मुख मजुल हास प्रकासतु है ।।१३।।

प्रद्धटिका

आकालिक करो लै बसन चारु । ते सजे पुहुप कीन्हो सिंगारु ।
निज दै सुगंध रँग रँग रँगीन । झालरि बितान मों झलक लीन ।।१४।।
तन सजे जराऊ नग अमोल । पुर प्रजा फिरैं भरि ललक लोल ।
मनि बँधे-खरंजा धाम धाम । प्रतिबिम्ब होत तिन माँह बाम ।।१५।।

नील

बाजत हैं घन बाजन ये चहुँ ओर घने ।
साजत हैं तत्काल तहाँ ततमोद सने ।।

ह्वै सुखिरै मुख उच्च सुधा ध्वनि टीप पढ़ै ।
आनद की ध्वनि धीर सुमे मन मोद बढ़ै ॥१६॥

सवैया

बीनन की ध्वनि ये न छुपावत बैनुन की ध्वनि गीत छुपावै ।
गीतन की छबि लोपत झरझर दुंदुभि झरझर को सकुचावै ॥
दुदुभि के रव दूरि करै जब ढक्कुनिको हनि दीह बजावै ।
वेउ न नैसिक जानि परैं जब मर्दल ताल बजावत गावै ॥१७॥

दोहा

ये कोटिन बाजन बजैं, मुखर सोर सभार ।
चीत करन दिग्गज लगे, फूटत करन अपार ॥१८॥

चौपाई

सात कुंभ के कुंभ सुहाये । ते सुगध जल सों भरि लाये ।
उबटि कुँअरि चौकी बैठारी । मगल न्हान सँवारै नारी ॥१९॥

चर्चरी

एक सरवरि को चहै दमयति के कुच की सही ।
कोप सों यहि ते सखी घट ग्रीव सों गहि कै रही ॥
बोरि नवल रसाल पल्लव ओषधी अधिकै परी ।
न्हान साजै मीत सुंदरि गीत गावैं किन्नरी ॥२०॥

दोहा

न्हाइ बसन पहिरे बिसद, रही बिहद छबि छाइ ।
सरद चाँदनो सी लसो, निकसी घन बिलगाइ ॥२१॥
झहरि झहरि जलकन गिरैं, छहरि छबीले बार ।
मनौ गिले मुकुता नखत, ते उगिलत तमधार ॥२२॥
बार घने बरखत सलिल, बसन स्वेत परकास ।
मनौ मिली वर्षा सरद, अद्भुत बढ़त बिलास ॥२३॥

अग अंगौछत बढ़ि चले, सब दीपति के जाल ।
सान धरी गुन मान जनु, हेम काम करवाल ॥२४॥

सोरठा

दौरि सखी समुदाइ, साज्यो रतन चबूतरा ।
तहँ बैठारी जाइ, करन लगी सिंगार सब ॥२५॥

मोदक

अग अभूषित से सब लागत । भूषन भार कहाँ रस पागत ।
या तनु मे करिये जब मडित । भूषन पावत ज्योति अखडित ॥२६॥

सवैया

कुद कली मिलि केस गुँदे बिच बीच भली मुक्ता लर सोहै ।
आनि बसे ससि के सिर पै रस हास सिंगार मनौ मन मोहै ॥
धूपित धूप सुगधनि सों मद अध मधुव्रत के अवरोहै ।
ऐंचि लई हलके बल सों यमुना जल की लहरी कहि टोहै ॥२७॥

प्रद्धटिका

पुनि तिलक भाल सों रचि अनूप । तिहि रूप भूप मुद्रा सरूप ।
रचि करन फूल कानन सुढार । मिलि करन दिवाकर करत प्यार ॥२८॥

तारक

छहरीं अलकैं मुख मोतिन गूँदी । जनु भादों के घन धारत बूँदी ।
गनि चंद विरोध गहे जनु तारा । दुहुँ ओर फिरैं ससि के तम धारा ॥२९॥

सोरठा

अजन रेख सुढार, कोर काढि नैनन रची ।
पुतरी नीलम सार, तिनकी सॉवल राह जनु ॥३०॥

सवैया

पीछे खरी इक केस गुँदै अलबेली भिरी तकिया लगि सोहै ।
सौंहैं खरी इक आरसी लै तेहि ओर तकै बिहँसै मन मोहै ॥

और दुहू सखि चौर करैं तिन्ह बोल सुनाइ सुधा रस बोहै ।
नदित होइ उमगै कविता रुचि बदि बधूनि सों बूझति दोहै ॥३१॥
नैनन अंजन एक सजै इकतौ मुक्ता नथ लै पहिरावै ।
एक सँवारत हार हिये इक लाल जरी अँगिया कसि आवै ॥
सूरज की किरनै जनु ओढ़नि घाँघरे में रसना झनकावै ।
एक करै पग पायल नेवर एक तिया बिछियानि बनावै ॥३२॥
कोऊ रुमाल लै पोंछि कपोल फुलेल तिलौछति बार प्रबीनी ।
कोऊ कसैं भुजबन्द झबा मनिकंकन चारु चुरी मृगनयनी ॥
अँगुरीन मे छाप छला मुँदरी नख कोर रची मेहँदी सुखदैनी ।
कर मोरति कोऊ बलाइ लै लै तिनु तोरति कोरि फिरै चित चैनी ॥३३॥

मनहरन

सॉवल कमल को गहतु है धनुष काम,
पनच करत तहाँ अवली अलीन की ।
तीछन तरल ता में सायक धरतु करि,
जतन जुगुति कोकनँद की कलीन की ॥
याके ये नयन येई करत कटाछ नई,
इन ही सों जीति मयन जगती बलीन की ।
कमल को न धनुष भँवर को न पनच,
कलीन के न बाँन कहैं सुमति नलीन की ॥३४॥

सवैया

पाँयन में ठकुराइनि के रचिकै सुभ जावक बेलि घनेरी ।
चाइनि सों करै कौलनि जोरि गोंसाइनि सो कह्यो नाइनि चेरी ॥
पीतम की पगरी लगि कै सिगरी रचना बिगरी यह मेरी ।
कौल की ऐंचि दई सखि या हँसि नौल बहू तिरछे दग हेरी ॥३५॥
केसरि केसरि अगनि मै कत लेपन के मिसि मेल मिलाई ।
दीपति दीपक की कलिका दिन रैनि न एक सी देत दिखाई ॥

कामिनि के गुन ही न तपै तन दामिनि में अति ही तरलाई ।
दूसरी और रची न गई बिधिपै यह सी यहई बनि आई ॥३६॥

दोहा

पकज केसर सों मिली, ज्यों मिलिन्द की पाँति ।
सुदर दसननि पै दिपै, रेख मिसी की काँति ॥३७॥

सवैया

नयन बडे बड़े मोती बडे नथ बार बडे छहरे लटकारे ।
पखज पाँखुरी सी अँगुरी कुच कुदन कचुकी के अनुहारे ॥
ये रति सी दुलही उत वे दुलहा रतिनाह से सुदर प्यारे ।
भौन के भाइन ही में गये मिलि प्रान दुहूँ के दुहूँ पर वारे ॥३८॥

दोहा

पधी लबित सतलरी, पुही प्रेम रग ताग ।
मनौ बिपंची काम की, रागति पचम राग ॥३९॥
लगे मैन अधरा मृदुल, भये महा सुकुमार ।
तापर रग बीरीन को, नीको लगत अपार ॥४०॥

सोरठा

दुपहरिया को फूल, ईंगुर के रँग सो रँग्यो ।
रति को किधौं दुकुल, रँगि कुसुम सोहो करयो ॥४१॥

दोहा

भूषन की किरनै छुटैं, बासव धनु अनुहारि ।
मनौ सिलीमुख धनुष लै, करतु मैन रखवारि ॥४२॥

दोधक

अंगनि में सब भाँति सिगारी। देहि असीस पतिव्रत नारी ।
जीवहु जावत वर्ष करोरी । गौरि गिरीस बनी जिमि जोरी ॥४३॥

दोहा

जलके सरल बिलास मय, चातुर खरे खबास।
बहु बाजन बाजन लगे, साजत भूषन बास ॥४४॥

दोधक

पीरी रची सिर पाग बिराजै। सीस सुमेर मनौ रबि छाजै।
हीरन मोतिन लालमनी को। मौर दिपै सिरो पै अति नीको ॥४५॥

तोटक

झमकै सिर राजन की कलँगी। जनु राजसिरी सिर ज्योति जगी।
कल हीरन को सरपेंचु लसै। ससि सारद पूरन ज्योति बसै ॥४६॥

दोहा

जरतारे को झलमल्यो, तूरी द्युति दरसाइ।
मुखससि जीती सूर की, दई किरनि छिटकाइ ॥४७॥
पाग मिली झूमै बिमल, मुक्तावली बिसाल।
फूल्यौ मानौ अमर तरु, नवमजरी रसाल ॥४८॥

प्रद्धटिका

लखि खोरि लगै नीको लिलार। ससि खड चारु जनु एक सार।
परिवेष मनौ बिधु को बिसाल। गल राजत मुक्ता नखत माल ॥४९॥
मकराकृत कुंडल मंडि कान। जहँ कढ़त तरल सुकटाच्छ बान।
दिय अजन नैनन भौंह मोरि। जनु बाँधे खजन स्याम डोरि ॥५०॥

दोहा

जग जासों लच्मी कढ़ी, परवारन को हेतु।
साँचो भयो समुद्र कर, चक्र रतन संकेतु ॥५१॥

छप्पय

बाहनि में नरनाह के नव रतन बिराजै।
छूटी किरनै तासु की सित लाल समाजै ॥

गंगा धौं नद सोन सों मिलि कै उमही है ।
कैधौं सुजस प्रताप की तहँ ज्योति जगी है ॥२२॥

दोहा

सुधा भरे अधरन मिली, रँग तमोल रस रेख ।
मनौ लाल तोसक बिछी, रति की सेज सुबेख ॥२३॥

मनहरन

ब्याह के बरन बर बागो झलमल होत,
सूर को उदोत ज्यों लखत दीठि हहरै ।
पनरत अक अक पाति अनुराग कैसी,
ऐसी भाँति रति की अनूप रूप लहरै ॥
बाम अग भूषित तरल करवाल सोहै,
अन्य दमयती सी छबीली छबि छहरै ।
दूलहू बनो है प्यारो आनँद को मूल द्वारो,
देखती अतूल झुंडि झुडनि ह्वै थहरै ॥२४॥

गीत

तब दीह दीह बजे बने सब साज नौबति जोर हैं ।
नव चंग सग मृदंग मंगल दुदुभी ध्वनि घोर हैं ॥
बनि नाचती सुर अच्छरी जिन भाव मोहत सिद्ध हैं ।
द्विजराज गावत वेद देत असीस देव प्रसिद्ध हैं ॥२५॥
तब ज्योतिषी सँग लै पुरोहित और जे द्विजराज हैं ।
गुरु ज्ञान बृद्ध प्रसिद्ध सिद्ध बिधान जानत काज हैं ॥
सब सूत मागध बंदि चारन नेगि याँह अनत हैं ।
रचि चारु मोतिन चौक मडल फूल पत्र बसंत हैं ॥२६॥
जल पूरि हाटक कुंभ को धरि थापि गौरि गनेस को ।
दल दूरबा दधि मेलि कुंकुम बारि दीप सुदेव को ॥

तहँ लाल आसन की गदी मनि लाल मोतिन सों लदी ।
चहुँ ओर ते उमडो परै अनुराग आनँद की नदी ॥५७॥
निज अर्घ्य देत महर्षि हर्षित दूलहै तहँ लाइकै ।
करवाइ पूजन बाँधि ककन रीति वा कुल पाइ कै ॥
बनिकै बरात गयंद स्यदन बाजि बाहन साजिकै ।
फिरि छत्र चौर पताक सों चढ़िकै चले अति गाजिकै ॥५८॥
सुनि सोर को सिगरी पुरी नव नागरी अकुलाइकै ।
गृह काज छोड़ि तुरत दौरि लगीं गवाछन आइकै ॥
रव पूरि भूषन को रह्यो अरु भूरि कूकत मोर हैं ।
अलकै गुँदी मुक्ता गिरैं नभ की घटा जनु जोर हैं ॥५९॥

दोहा

अजन आँजत ते भई, नल दरसन को लोल ।
गई भूलि कर कपि कै, सोवल करे कपोल ॥६०॥

सवैया

पाँयन में उरझो रसना कर दाबि निबी इक दौरति ढीली ।
घेरि लई तहँ हसिन के अवतसनि आनिकै ताहि रसीली ॥
ठाढ़ी हँसै सखियाँ सब दूरि भरी रिस भूरि झकै गरबीली ।
भाज्यो चहै बँधुवा जिमि छूटि गह्यो रखवारेन दै पग कीली ॥६१॥

दोहा

मुख सरोज नव आरसी, हँसनि बैनि पीयूष ।
नयनन को देखत हरै, तलफ प्यास अरु भूख ॥६२॥
माला टूटवे ते चली, बिथुरत मुक्ता जाल ।
मनौ लाज मोचन करैं, याके गौन रसाल ॥६३॥
उचकै लाये टकटकी, छुवै धरनि नहि पाँइ ।
देवन की रमनी मनौ, उरित भई सति भाइ ॥६४॥

भूषन गिरत न जानहीं, देहि सखी पहिराइ ।
चकी बिलोकै रस छकी, रही टकटकी लाइ ॥६५॥

सवैया

कानन के परियत लौ नैन पसारि बिलोकती चाउ भरी है ।
आवत है सखि सोइ जुवा जेहि ऊपर मोहि रही सिगरी है ॥
बासव को न बर्‌यो दमयति कर्‌यो मन चातुरै चोप धरी है ।
बासव को बरनै कविता सब गावत या छबिकी लहरी हैं ॥६६॥

दोहा

नख ते सिख भूषित भयो, झमकत भूषन भार ।
चल नयननि के उड़ि लगे, मानौ नयन हजार ॥६७॥
दमयती तब अवतर्‌यो, पुहुप बान अवतार ।
सुन्दरता के देस को, भयो भूप सरदार ॥६८॥
देवन को परसन्न कै, निज चतुराई भाइ ।
लह्‌यो स्वाद पीयूष सुख, नल सगम को पाइ ॥६९॥

सोरठा

कहि कहि ऐसी भाँति, रीझि रहीं रस भीजि सब ।
भीर न नगर समाति, नारीमय ससार जनु ॥७०॥
छूटत बान कटाच्छ, कुटिल भृकुटि धनु सों बिकट ।
राते रतन गवाच्छ, काम भूप तरकस भये ॥७१॥

इति श्रीमत्प्रचडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ वरयात्रा नाम षोडशः सर्ग ।



दोहा

सब रँग रेसम कतरि के, तख़्ता फूल बनाइ ।
तेही तेही भाँति की, दई सुगध मिलाइ ।।६।।
तखतन ऊपर नाचती, चातुर पातुर पुज ।
टूटि परी बन ते मनौ, परी करै रस गुंज ।।७।।

छप्पय

छूटत कर सम सोम भौन रंग स्वेत सुहाये ।
गुँदे फूल मखतूल तुग तरुबर छबि छाये ।।
हरित लाल अरु पीत परम पल्लव लहराहीं ।
रचे बगीचा चारु हरे छहरै घन छाहीं ।।
जिमि जोरि कोटि तैंतीस सुर चलत उषाको कतु है ।
इमि सोहत नल दूलह बन्यो चहुँधा लसत बसतु है ।।८।।

दोहा

दमयती सों कछु बढ्यो, दमन नाम जो भाइ ।
अगवानी सँग लै मिल्यो, दूरि धरनि सिर नाइ ।।९।।

झूलना

गति मद मद बरात जात बिनोद बात बखानि ।
हथ फूल छूटि अनार चपक चारखी द्युति खानि ।।
द्युटिकै सितारेन सों हवाइन सों बरयो नभ पूरि ।
भय मानि पावक को भजे सब देवतागन दूरि ।।१०।।

लीला

राज पौरि समीप लौ पहुँची बरात बजाइ ।
हाथ चीर पताक चचल लेति ताहि बुलाइ ।।
बाँधि बदनवार पकज रभ के दल थभ ।
रतन हाटक के भरे घट हैं बिबाह अरभ ।।११।।

चौपाई

भीम धाम भूपति जे आये। कोटि कोटि जे ज्योति बुलाये।
उमही भीर न नेकु समात। जब द्वारे पर गई बरात ॥१२॥

दोहा

हाँथै हाथ खवास तब, लै उतारि नरनाथ।
चौक माँह ठाढ़ो कियो, देखत लोग सनाथ ॥१३॥
उठि उठि सब ठाढ़े भये, भीम भूप के संग।
चलि आगे लखि दूलहै, मन में बढ़त उमंग ॥१४॥
मिल्यो भीम भूपति बरै, धरी भाग सुभ सांधि।
ज्यों हरको हिमवान औ, हरि को चीर पयोधि ॥१५॥

तारक

तब प्रोहित गौरि गनेस पुजाये। द्विज बृन्दन को बहु दान दिवाये।
मनि मानिक लाल अमोल लगाये। नृप भीम न लै कपरा पहिराये ॥१६॥
जहँ खँभ हजारक हैं कदली के। बहु बस प्रसस लगे अति नीके।
मुक्ता मनि झालर लेत झुकायो। अहि की लतिका दल सों सब छायो ॥१७॥

दोहा

रची सर्वतोभद्र तहँ, मनि कपूर रज चौक।
मडित आँगन माँड्यो, जनु रबि छबि अवलोक ॥१८॥

स्रग्धरा

ता पीछे भीम राजा बिनययुत बरै माँडये मध्य आन्यो।
गावैं रानी सुबानी सब हिलि मिलि कै आरती कै बखान्यो ॥
बैठार्यो चारु चौकी कहत नहि बनै देखि वाकी निकाई।
बैठारो लै दमयती निकट नृपति के आइ गाई बधाई ॥१९॥

दोहा

गठि जोरी सखियाँ करैं, नल पटुका सों साँठि।
छुटत गाँठ हिय की अरी, परी बसन में गाँठि ॥२०॥

तोमर

नल जेंइयो मधुपर्क । मन देखि आवत तर्क ।
दमयति ओंठ समान । पहिले भयो रस पान ॥२१॥

सरसी

नल के कर सरोज के ऊपर दमयती कर राखि ।
पावक चंद सूर निसि वासर सुर गुरु द्विज दै साखि ॥
गावैं गीत सखी सब सुन्दरि बजत बाजने जूह ।
कन्यादान भीम नृप दीन्हो दीन्ही दासि समूह ॥२२॥

दोहा

नल को कर नीचे परयो, तिय कर ऊपर हेरि ।
सुधि करि करि बिपरीत की, हसैं सखी मुख फेरि ॥२३॥
सिव जो दीन्ही भीम को, एक नाम हित पाइ ।
चिंतामनि की माल सो, दई नलै पहिराइ ॥२४॥
जासों महिषासुर हयो, तीछन धार कराल ।
गिरिजा सों लहि भीम सो, नलै दई करवाल ॥२५॥
सत्रुन के रक्त पियै, यम जिह्वा के रूप ।
म्यान जराऊ में दुरी, दई छुरी सो भूप ॥२६॥
अगिन करयो उपहार रथ, दमयती हित लागि ।
भीम दयो नल को वहै, जल थल गति अनुरागि ॥२७॥
उच्चश्रवा महि इन्द्र को, जलधि पठायो जोइ ।
बरुन दियो हय भीम को, नलै दियो नृप सोइ ॥२८॥

सोरठा

इन्द्र ओर ते आइ, विसुकर्मा भीमै दयो ।
पीकदान सुख पाइ, नल को दीन्हो लालमय ॥२९॥
निज मयूख समुदाइ, पूरि रह्यो सब ओर सों ।
धोवत दास बनाय, मानौ भरयो तमोल रँग ॥३०॥

मय दानव रचि काढ़ि, दई भीम को नाम हित ।
रही हरित द्युति बाढ़ि, थारी पन्नग की दई ॥३१॥
जामें जेंवत भोग, होत न भय विष विषम को ।
निकट न आवत रोग, सरस अन्न वठै पचै ॥३२॥
दुरबासा के स्राप, ऐरावत छिति मे गिरयो ।
भीम राज परताप, सो सिंदुर नलको दयो ॥३३॥
भजि दिगत को जात, मेरे सन्मुख होत जे ।
हाथिन को यह बात, करन चलाचल सो कहै ॥३४॥
निज नृप कीरति दंड, धरत दसन द्वै स्वेत अति ।
अरि अपकीरति खड, मदकी धारनि सों धरै ॥३५॥

गीत

जितनो दयो जेहि भाँति दायज भीम भूपति हेत सों ।
गनि को सकै रथ बाजि बारन रतन भाजन चेत सों ॥
बहु दास दासि सुगध बासन भोग भाग समाज सों ।
सुरभी अनेकन ग्राम के गन धाम दे सुभकाज सों ॥३६॥

दोहा

बाम हुतो नल ब्याह में, पावक चित ललचाइ ।
ताकी करी प्रदच्छिना, दच्छिन करी बनाइ ॥३७॥

सवैया

पाथर की थिर रेख रहै जिमि त्यों तुम या पति के सँग हूजो ।
यों कहि प्रोहित राज धरयो सिल पै पगु लै दमयंति को दूजो ॥
पाथर तूल के तूल उड़ै करु लाइ छुवै हरि को न हितू जो ।
याकी मनो गति पै न चली हरि हारि गयो करि कै पग पूजो ॥३८॥

तारक

ध्रुव को अवलोकत भौंह चढ़ाई । अति सूच्छम रूप न देत दिखाई ।
ध्रुव है अनुराग सुहाग तिहारो । सखियों हँसि बैनि कह्यो अति प्यारो ॥३९॥

तोटक

दमयति जबै कर सों परसै । तब फूलन की समता सरसै ।
कर ते छुटि लाज जबै बिथुरे । मुकुतागन से सुख देत दुरे ॥४०॥
मुख पावक के पुनि होम दिये । तब तौ द्युतिवत समान किये ।
नल के सग भाँमर लेति लसै । दृग कोरनि ही अलि ओर हँसै ॥४१॥
घृत आहुति धूम लतानि करैं । लगि भाल मनो अलकैं छहरैं ।
छतिया मृग नाभि सुगंध रली । दृग अजन कान सरोज कली ॥४२॥
लखिकै सब दायज भीम दयो । जन को न रुमचित जो न भयो ।
दुलहा दुलही पुलकै मिलि कै । नहि जानि परै सब के रलि कै ॥३४॥

मृदुगति

यहि भाँति करि बिधि ब्याह । हरखे पुरोध उछाह ।
सब पढ़त बिप्र बनाइ । श्रुति बिबिध मगल गाइ ॥४४॥

दोहा

लै नारी भीतर गई, अद्भुत साजि समाज ।
दै असीस बाहर गये, सब ऋषीस द्विजराज ॥४५॥

हरिगीत

सब साजिकै कुल रीति बिधि बिधि दूलहै मुख चाहिकै ।
रनिवास सिगरी नागरी बहुरूप रासि सराहिकै ॥
तन मन बिसारहिं प्रान वारहि करहिं न्योछावरि घनी ।
मुख नवल दुलहिन को बिलोकहि कमलकी जहँ छबि घनी ॥४५॥
परिहास करहि अनेक हँसि हँसि दुहुनि मुख दै दै बिरी ।
चलि झमकि दामिनि सी दिपति चहुँ ओर ते कामिनि घिरी ॥
पुनि तीन रजनि बधाव सयुत सेज रुचि मिलिये तहाँ ।
नहि मिलन भूख घटी छुटी नहि लाज जन जागत तहाँ ॥४७॥

सोरठा

दमयती सयोग, सपनेहुँ नृप लहि छकै ।
सो साँचो करि भोग, मगन भयो सुख सिंधु मे ॥४८॥

प्रद्धटिका

इत भीम भूप जेवनारि साजि । जेहि देखि जात पीयूष लाजि ।
बरनेगि पठै बोली बरात । बनि चले हरख हिय नहि समात ॥४९॥
सब छत्र धारि नरपति कुमार । सजि बसन रतन भूषन हथ्यार ॥
संग लै खवास बाजन बजत । नव मडप तर पहुँचे तुरत ।
सनमानि भीम नृप पग पखारि । दिय यथा योग आसन बिचारि ॥५०॥
परसैं बिलास मय सुघरि नारि । परिहास करैं अरु देइँ गारि ।
कोउ माँगत सोइ सुनै न ढारि । तेहि दयो कोऊ को हँसत ढारि ॥५१॥
मम लोचन को तव दरस प्यास । इहि ओर नेक लखिकै बिलास ।
इक कह्यो बराती सुनि सुनारि । भजि गई नैन जल छींट मारि ॥५२॥

दोहा

इन मे से मेल्यो हियो, कह्यो बराती चेति ।
कहत तुच्छ गल मेलि गल, माल ऐंचि तिय लेति ॥५३॥

दोधक

एक परोस रही कमला सी । जेंवनहार करी तहँ हासी ।
कै छल को बिछुवा पग छूवायो । डारि भजी पटसोरु मचायो ॥५४॥
आसन जे ऋषि काज बनाये । पूँछ दुरे तिन माँह लगाये ।
गोंद समेत रँगे तहँ बैठे । ब्राह्मन बृन्द पढ़ै श्रुति जेठे ॥५५॥

दोहा

और ठौरि उठि बैठिये, महाराज द्विजराज ।
उठे बिप्र चपटे पटा, पीछे पूँछ समाज ॥५६॥

चर्चरी

भाँति भाँति अनेक सुन्दरि मोद सों परसैं खरी।
काम की करतूति मूरति ज्योति की बिलसैं बरी॥
जेंवते तब मद मद छतीस व्यजन षट्रसनी।
सख भेरि मृदग सग तँबूर भीरनि सों घनी ॥५७॥

सोरठा

बार बार नृप भीम, सबनि ओर कर जोरिकै।
बिनती करी असीम, जेंवत भूप सराहिकै ॥५८॥
रही थकित होइ मोहि, सरस परूसनहार तिय।
रहे बराती सोहि, मनौ दास नृप काम के ॥५९॥
हँसी मोरि मुख आन, नई लाज गद गद बचन।
सोई भयो जमान वाके नेह मिलाय को ॥६०॥

सवैया

चचलि नयननि की गति रोकति और कह्यो चहै साजति औरै।
जो मृगनैनि के भाव लखे मुसकात जुवा चित वा डिग दौरै॥
तोय परोसति हो मुख नै इकु चुंबन को ललचै बर जौरै।
ज्यों झपट्यो पगु त्यों रपट्यो चपट्यो तन भात पर्यो तेहि ठौरै ॥६१॥

तोटक

यक बीजनु डोलति ही अबला। कुच कोर कढै तिमि चन्द्रकला।
तेहि को लखि एक युवा थरकै। पिजरा खग डोरि बध्यो फरकै ॥६२॥
नव भाजन पानन के करि कै। छहरी सु हरी किरनै भरिकै।
जनु भाजन सों भरि राखत है। कर डारत साग न चाखत है ॥६३॥

सवैया

चाऊर खंडित नेक भये नहिं मंडित सुद्ध सुगंध समाते।
एक ते एक छुटै छहरैं छबि मोतिन की लहरी सरसाते॥

कोमल स्वाद सुधाहि मनो निज दीपति स्वेत हँसै सरमाते ।
बातन ही छबिजात अघात है जेंवत भूपति भात बफाते ॥६४॥

दोहा

सुरभि दूध सों निरमये, क्यों न सुरभि घृत लेहि ।
पायस परसि थरान मे, पूरि समुद से देहि ॥६५॥
सुधा स्वाद ते सौगुन्यो, खीर खाँड़ रस जानि ।
होम करत अभिरत तजत, भजत याहि सुर आनि ॥६६॥

लक्ष्मीधर

राइतो स्वाद कै मूँदि आँखैं हँसै । खात कै कै सिसी यों खटाई रसै ।
इंदु के बिम्ब सो है परोसे बरा । तोरि ते टूटि आवे रसीले गरा ॥६७॥

सोरठा

पहिले सीतल होत, पुनि हिय तल गरमी करै ।
साँचे चद उदोत, बरा सराहै बिरहि जन ॥६८॥

सवैया

एक परोसत ही पकवान भये कछु सीतल ही कछु ताते ।
केलि को अवसर बूझत ताहि जुवा इकु सैन किये मुसकाते ॥
सीतल ताते बिथोरि दिये इमि दूरिकरी दिन राति की बाते ।
साँझ बताइ दई है यही सुधरी अँगुरी अधरा रँग राते ॥६९॥

तारक

रचि आमिष के परकार नबीने । नव रंगित कै अधरा सम कीने ।
रस सों मुख चूमति ताहि बराती । अवलोकि परोसति नारि लजाती ॥७०॥
यहि भाँति नये परकार सवारे । जेहि देखत भूतल जेवन हारे ।
बिन आमिष आमिष सें पहिचानै । जिन आमिष ते न परै कछु जानै ॥७१॥
बहु भाँति अकालिक बस्तु बनाई । तिन हो तिन रंग सुगंधनि छाई ।
षटहू रस की रुचि को उपजावैं । चकि कै जन जेंवत जानि न पावैं ॥७२॥

मनहंस

यहि भाँति ते जे मन सजे परवीन है।
अतिसै सवाद सुगंध सों रसलीन है॥
तिनको कहाँ लग को सकै सब जेइँ कै।
गनती गने नहि पार पावत सेइ कै॥७३॥

दोहा

सोधि फिरायो बरफ मै, सुचि सुबासु की खानि।
झारिन सों नारिन बहुरि, आनि परूसे पानि॥७४॥

संयुत

यहि भाँति जेंवत भूप हैं। छबि कँठ लौ सुख रूप हैं।
वह बार बार सराहि कै। परिवेषिका मुख चाहिकै॥७५॥

दोहा

भैसिन के नीके रचे, नीके पय दधि चारु।
जम्यो मनौ पीयूषको, चंद्रबिम्ब सम सारु॥७६॥

चर्चरी

दूध मैं प्रतिबिम्ब सों परिवेषिका मुख देखि कै।
ताहि चूमत है युवा तेहि ओर उच्च कनेखि कै॥
थार में प्रतिबिम्ब नागरि हेरि एक जुवा रस्यो।
दाबि दै तेहि गोद मोदक दोइ त्यों उनहूँ हस्यो॥७७॥

चौपाई

नाहीं नाहिं बराती कहैं। ओट हाथ थारिन दैं रहैं॥
सब व्यंजन नाना परकारा। नारि परोसि देंइ निरधारा॥७८॥

गोपाल

देखि बिलास अघाने भूरि। भोजन भार रहे सब दूरि।
हाटक के घट भरे हजार। कर परछालन को तेहि बार॥७९॥

धोवत कर नख कर सरसात । चंद्रकला जनु अंबुज पात ।
सजि सजि सबै बराती लोग । खरे भये तब योगायोग ॥८०॥

दोहा

भोजन छरस प्रसिद्ध हैं, यह अद्भुत संचार ।
भोगत भूपति सात रस, भीम भवन सिगार ॥८१॥
भीम भूप बीरा दये, लौंग कपूर मिलाइ ।
क्रमुक खंड एला बिमल, मुक्ता चून बनाइ ॥८२॥

हरिगीतिका

तिनके खवासिन को दिये युग रतन जाति मँगाइ कै ।
इकु झूठ ता मँह सकल द्युति निधि साँचु छबि कुठिलाइकै ॥
तिन गह्यो झूठो नग छबीलो किरन गन परभाइ सों ।
सब हँसन लागे लोग तब नृप सकल दीन्हे चाइ सों ॥८३॥
इमि करत भोग अनेक बिधि बिधि रैनि औ दिन होत सों ।
पुनि चलत मृदु जनवास आवहि भीम भूप निकेत सों ॥
भरि रजनि देखत निरत रंग तरंग सुख सागर भरी ।
परिपूरि ब्याह उछाह निज गृह चलन की चित मति करी ॥८४॥
सुभ समय जानि बिदा भये पुनि बाजि बारन साजिकै ।
मिलि मातु करहि बिलाप रहि दमयंति नत मुख लाजिकै ॥
मुख चूमि लखि लखि लाइ उर दृग नीर की सरिता बढ़ी ।
मन मोद सों गहि गोद सखि सुख पालकी पर लै चली ॥८५॥

सोरठा

वह सोभा अभिराम, लखि न परै कितहूँ कहूँ ।
भयो भीम को धाम, ज्यों उपमो बिन छीरनिधि ॥८६॥

दोहा

पहुँचावन को भीम नृप, संग चले अति दूरि ।
नल फेरे परनाम कै, बरनत वा गुन भूरि ॥८७॥

तोटक

दमयंति मनै नल मोहि लयो। दुखमा इक को सब दूरि कियो।
मृदु बातन में मन मोहि गई। तनहूँ मनहूँ पति प्रेम मई ॥८८॥
पहुँची रस रंग बरात भरी। अभिराम जहाँ नल की नगरी।
ध्वज चीरन तोरन यो छलकैं। जनु छूटि रहीं अलकैं झलकैं ॥८९॥

मालिनी

सब सचिव सभंगे दूरि ही दौरि आये।
लचि लचि छिति छ्वै छ्वै हाथ माथे लगाये॥
सजहि तुरत भेंटैं लै खजाने लुटावैं।
घर घर सब नारी ब्याह के गीत गावैं ॥९०॥
सब नगर सिंगारो इन्द्र कैसो अखारो।
नल सँग दमयंती मंगलै लै सिधारो॥
कछु सचिव न बूझै देस की बात रूरी।
निज चरित बखानै स्वै कथा पाइ पूरी ॥९१॥
उठि उठि सब धाईं देखिवे को सुनारी।
लखि नल दमयंती लोक लाजै बिसारी॥
मगन मग बिथोरै लाज कैसो न दीसै।
जिवहु बिधि बरीसौ देहि नीको असीसै ॥९२॥
नरपति गृह आया मोद सो दान दीन्हे।
सकल सुर बिलोकैं पुष्प की बृष्टि कीन्हे॥
जननि मन अनन्दै आरती लै उतारी।
नत बदन दमयंती मोद सों गोद पारी ॥९३॥

दोहा

पाँइ परी दमयंति तब, सासु असीसै हेरि।
मनि गन न्योछावरि करहि, तेहि पर वारि घनेरि ॥९४॥

सोरठा

देखत चढ़े बिमान, चारौ सुर सरस्वति सहित ।
भये मुदित गुन मान, तब चढ़ि सुरपुर को चले ॥६४॥

इतिश्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ नलपुर प्रवेशो नाम सप्तदशस्सर्गः ।



अष्टादश सर्ग

कलि-समागम

सर्ग अठारह में कथा, देवगमन सुरलोक ।
मारग में कलिकाल सों, ह्वै है भेट अटोक ॥

सोरठा

अमर चारि गत लोल, करि निष्फल परिश्रम धरनि ।
ज्यों बारिधि कल्लोल, ज्यों आये त्यों ही गये ॥१॥

प्रमाणिका

दमयति पै कृपा घनी । न आपनी बिथा गनी ।
नलै हृदै सुचाइ कै । सुभक्ति मोद पाइ कै ॥२॥
रहे बिमान सोहि कै । दिनेस ज्योति मोहि कै ।
चहूँ चलैं ध्वजा धरी । नचैं सुगान अच्छरी ॥३॥

स्वागता

बात बेग साजे रथ जाहीं । मेघ ओघ धारे तहँ छाहीं ।
डीठि नेकु नहिं आवत जो है । सिद्धि एक अति भाजनु सो है ॥४॥
होत मेघ जब बासव संगी । इन्द्र चाप बिलसै बहुरंगी ।
धर्मराज कर दंड बिराजै । छत्र रूप रवि लागत छाजै ॥५॥

तोटक

चहुँ ओरन छुटि रहीं लपटैं । लगि वायु बबूलनि सों झपटैं ।
लखि आवत पावक नाच नचै । दमयंति बरी इनही निहचै ॥६॥
भ्रम होत हिये सुर लोगन के । मुसकात सुने भव भोगन के ।
यहि भाँति दिगीस चले मग में । इक सोर सुन्यो अति ही लग में ॥७॥

सुनि घोर अघोरिन के रुत को। चकि के दृग फेरि करे उतको।
यक साँवल फौज तहाँ झलको। जनु आवत धार चढ़ो मलको ॥८॥
जनु पातक की नगरी उमही। तम रासि मनौ इक ठौर सही।
नभ धुँधुरि मूरति आवति है। चहुँ देवन को समुहावतु है ॥९॥

तोमर

मनमथ्थ को भा गोलु। कलि कीन्हि जाहि हरोलु।
पहिले परयो बहु दौठि। तब दै रहे सुर पीठि ॥१०॥

दोहा

सूर अगम्यागमन में, भय न लाज परसंग।
दाता दूतिन के बड़े, राजा के भट संग ॥११॥

सोरठा

धरत लोक जित भाउ, मनौ बुद्ध अवतार यह।
ईश्वर तूल बनाउ, साजत सृष्टि सरीर बिन ॥१२॥

चौपाई

आवत और लख्यो सरदार। सबको डाटतु कँपत अपार।
अरुन बदन बहु गारी देत। क्रोध नाम ताको कहि लेत ॥१३॥
जाके संग सिपाही घोर। पीसत दंत करत मुख सोर।
भृकुटी कुटिल नयन करि राते। काटत ओंठ भूरि रिस माते ॥१४॥

सोरठा

जासों काम डेराइ, ताहि क्रोध बस में करै।
हर दुरबासा पाइ, देखि लेहु इनकी दसा ॥१५॥
करत विराग बनाइ, लाल करेहू देह को।
तमको देत बढ़ाइ, तऊ जुलित हियमें रहै ॥१६॥

गोपाल

बाये बदन अधंमुख गाथ। धनिकनि ओर पसारे हाथ।
हीन चेष्टा करे डिरान। लख्यो लोभ देवनि नियरान ॥१७॥

याचक ठग दंभी अरु सूम । धूत उपाधि मचाये धूम ।
निर्धन लै धनिकन के पास । बेंचत हैं ज्यों अपने दास ॥१८॥

सोरठा

रहत सकल तन माहि, ये रसना पर प्रीति अति ।
नाहिं गनत है नाहिं, तृष्णा रमनी को रमन ॥१९॥
मिलि मिलि रोवत दीन, सुनै न गुरु उपदेस को ।
सुत दारन सों लीन, मोह लखत सुर छोह सों ॥२०॥
जानत है नित मीच, तऊ न हरि में चित धरै ।
कुटिल बालधी नीच, ये चाकर चहुँ ओर हैं ॥२१॥

चद्रमाला

ब्रह्मचारी बनबास जती जिमि गृही आसरो आनै ।
ज्यों मनोज अरु क्रोध लोभ ये मोह अधीन बखानै ॥
जागत की जो नींद अंधता देखत मे जो गाई ।
सुनतहु में जो कही बधिरई उजियारे मलिनाई ॥२२॥
पहिचाने लखि चिन्ह पाछिले कामादिक निरवारे ।
बदन स्याम नख ते सिख लौ कुलि कलुष कचुकनि धारे ॥
देखत भये देव दूखित हिय सूखित बदन मलीने ।
करकस शब्द सुने काननि सों कहत पाप परबीने ॥२३॥

[कामादिक के बचन]

छप्पय

वेद धूत संवाद ताहि साँचो जो जानै ।
बाजीगर के बाग तोरि फल ते गहि आनै ॥
अग्नि सत्र तिवेंद भसम धारन आछाली ।
एक दंड तिदंड चर्म मृग जटा कपाली ॥
यह ठाटु ठाटि आजीविका करत धूत जन जगत मे ।
यहि बुद्धि न पौरुष होत कछु पथ चलावत भगत में ॥२४॥

सोरठा

द्वै कुल की लहि सुद्धि, हरखि करत संबन्ध सब ।
जानत नाहिं कुबुद्धि, पछिले कुल के दोष गुन ॥२५॥

तारक

जेहि भाँति करै तिय की रखवारी । नरकी नहिं ओट करै नहिं सारी ॥
उबरै नहि बात कलकमई है । जगदभिन की यह रीति नई है ॥२६॥
परदार रमे सम पाप न दूजो । तुम क्यों करि बासव पापन पूजो ॥
गुरु दारन के कलुषै तजि देहु । द्विजराज किह्यो गुरुदार सनेहु ॥२७॥
पुनि ब्यास बराबरि और न मान्यो । सुनिये तिनहूँ यह बैन बखान्यो ॥
जब कामिनि के तनु काम सतावै । नहि पातक होत जु वाहि रमावै ॥२८॥

दोहा

जैसी श्रद्धा सुकृत पर, क्यों न सुरति पर सोइ ।
वेद कहत सो काम करि, जहाँ अंत सुख होइ ॥२९॥

झूलना

बल सों करौ सब पाप तुमको वे न लागत फेरि ।
बल सों करै सब काम निफल कहत मनु मुनि टेरि ॥
श्रुति अर्थ सों अरु सुमृति सों बहु भेद अर्थन होत ।
बल बुद्धि बिचरन करत ता महँ सों तजो सुख सोत ॥३३॥
जेहि देह में हम बुद्धि है वह देह डारत दाहि ।
पर साखि जीव जुदो नहीं यह पाप लागत काहि ॥
यहि देह के कृत कर्म लागन और देह न पाइ ।
जब और जेंवत अन्न है तब और क्यों न अघाइ ॥३१॥

दोहा

एक आत्मा सबनि मे, लहत पाप सब ठौर ।
एक पाप तेरो मिले, कौन भारु तहँ और ॥३२॥

एक आत्मा सबन में, कह्यो पुन्य तें एक ।
क्यों करि सब के पुन्य बिन, ताकी पुन्य विवेक ॥३३॥
एक आत्मा सबनि में, जो साँची यह बात ।
पुन्य पाप एकै करै, फल सब में ह्वै जात ॥३४॥

भुजगप्रयात

करौ रे करौ काम कैसो सनेही । सबै देव मानै बनैगो करेही ।
कहैं लोग यों वेद है देवबानी । यहौ विष्णु के पुत्र वेदप्रमानी ॥३५॥

प्रद्धटिका

नहि जानु परत परलोक नेक । नहि आवत वा सों पत्र एक ।
मनु कहे धर्म अपने पुरान । ते सकत कौन करि के निदान ॥३६॥
कुरुराज सभा कवि व्यास देव । गुनि बरनेउ उनके उन अभेव ।
उनकी पसंद अनुसार पाइ । भाखे पुरान बसु दस बनाइ ॥३७॥
निज बधु बधू सग सुरति कीन । पुनि दासी सगति सों मलीन ।
तिनको प्रमान केहि भाँति जोग । जेहि भूले वैदिक सकल लोग ॥३८॥

दोहा

विप्रन कीन्हे ग्रन्थ सब, निज जीविका विनोद ।
वैलन के पायन परत, बढ़ी बुद्धि आमोद ॥३९॥
जाजक छोड़त सुरत सुख, तिन्है सराहत लोग ।
चाहत हैं वे स्वर्ग में, सुरनायका संयोग ॥४०॥

स्वागता

पाप पाइ खग औ मृग होहीं । बेद बोल सब साँच कहोहीं ।
लेहि आप जब भोगनि तेऊ । भूप रूप निज को कहिबेऊ ॥४१॥

चौपाई

मुक्ति सिला गौतम ऋषि भाखी । वेद ऋचा दै दै सब साखी ।
पाथर बुद्धि कहा बहु जानै । सुरति मुक्ति के सुखै न मानै ॥४२॥

सोरठा

इंद्रादिक की नारि, निज निज पतिव्रत को धरैं।
मुक्त न होहिं बिचार, रहैं काम की कैद में ॥४३॥

नीलसरूपक

कर्म करे फल होत सुभासुभ वेद कहै।
ईस्वर को व्यवहार अकारन कौन गहै॥
आपुस माँह विवादिन की मति एक नही।
दूषन दै अनुमान प्रमानन व्यास कही ॥४४॥
औरन के उपदेस न नेकु न कोप गहौ।
आप करै अति रोष तिन्हैं तुम सिद्ध कहौ॥
दान दिये दुख होत लिया नहिं प्रीति करै।
दान दिये बलि मूढ़ गया बधि भूमि तरै ॥४५॥
दौलति को ललचाइ सबै युगभाव करै।
नेक खुसामदि होत कोऊ जगदंड धरै॥
जो जन होत सुबुद्धि सोई सुरसों न डरै।
जो जिय जानत सुद्ध वाहि मग पाँउ धरै ॥४६॥

त्रिभगी

सुनि यह दुर्बानी पाप निसानी बासव मानी रोष कियो।
बोल्यो तिन सोंहैं बदन रिसौहैं टेढ़ी भौहैं बरत हियो॥
श्रुति के रखवारे त्रिभुवन प्यारे बज्र अधारे हम ठाढ़े।
तहँ को मति भगी बकतु कुढगी यमपुर रगी डर बाढ़े ॥४७॥

दोहा

जाति लोप चारी किये, जबै परिच्छा लेत।
देखि लेहि खल श्रुति बचन, साधु सुद्धि करि देत ॥४८॥
सबको अनल समान है, लेत परीछा काल।
साँचे को जल रूप है, नेक न करत बेहाल ॥४९॥

ईस्वर की इच्छा बिना, कर्म करे फल होत ।
ऋतुपति नारी योग सों, सदा न गर्भ उदोत ॥५०॥
प्रेत देह लहि पितर निज, चरित बतावत आइ ।
गया करावत आपनी, और लोक को पाइ ॥५१॥
भ्रम सों लै यमदूत इत, फेरि पठावत तासु ।
सुनै कथा परलोक की, क्यों न होत बिस्वासु ॥५२॥
जब तू जान बिदेस कोउ, तोहि मिलत तेहि रीति ।
आइ चरित तेरो कहै, कौन करै परतीति ॥५३॥

प्रद्धटिका

परज्वलित भयो पुनि ज्वलन देव । छुटि रही ज्वाल चहुँधा अभेव ।
सठ कहा बकतु है रे नृसस । छिनि माँह भस्म ह्वै है सबस ॥५४॥
जे करत पुत्र मख पुत्र हेत । तत्काल ईसफल पुत्र देत ।
जे देत सकल बलि देव भाग । अभिलाष भोग पावत सभाग ॥५५॥
यम राज उठ्यो कर दंड तानि । हठि कहत कौन सठ दुष्ट बानि ।
तुव कंठ ओठ को झुठ जानि । हों काटत तेरो मद मानि ॥५६॥
जब कर्यो चहत कन्या बिवाह । तब बूझत हैं सब सों सलाह ।
परलोक जान को कौन मूढ़ । नहि बूझै गुरु सों ज्ञान गूढ़ ॥५७॥
जे करत बहुत मत सों सनेह । ते सब बिरोध के भरे गेह ।
तेहि ते बिचारि अविरुद्ध थानु । मतवद प्रकासित सार मानु ॥५८॥
तब बरुन अरुन मुख उठ्यो बोलि । करुना बिहीन सुनि कान खोलि ।
परचंड पाप पाखंड मूल । यम पास दाख नहि होत सूल ॥५९॥

मोदक

ईस्वर को तुम जो नहि मानत । सालग्राम सिला पहिचानत ।
तामहँ कूरम चक्र बिराजत । को नर जाइ तहाँ तेहि साजत ॥६०॥
जो सत यज्ञन को करि पावत । सो सुर सहित सुइंदु कहावत ।
क्यों तुमसों पदवी नहि पावहु । वेदहि छोडि बृथा मग धावहु ॥६१॥

सोरठा

चारऊ को तिन माँह, करि प्रनाम आयो निकरि ।
ह्वै सन्मुख सुर नाह, बोल्यो अजलि जोरिकै ॥६२॥

दोहा

हम चाकर कलिराज के, वृथा धरत हौ दोष ।
ताकी मरजी को तके, करत रग औ रोष ॥६३॥
तौ लौ चारो देवता, देखत भौह उठाइ ।
आयो द्वापर सों सहित, रथ उपर कलिराइ ॥६४॥
ज्यों चॅडाल सों द्विज भजे, बिमुख भये दिग्पाल ।
तब बोल्यो कलिकाल हॅसि, ऊँचे घोष कराल ॥६५॥

[कलि बचन]

तोमर

सुख सों रहे सुरपाल । लहि अग्नि आनन्द माल ।
यमराज चित्त बिनोद । कहि पासिहस्त समोद ॥६६॥
दमयति को सुनि ब्याह । हमको बड़ी चित चाह ।
हम जात हैं तेहि हेत । सुनिये बिनोद निकेत ॥६७॥
सुनि तासु बैन दिगीस । हग ऐंचि झारत सीस ।
मुख आप माँह बिलोकि । क्रम सों उठे सब टोकि ॥६८॥
बिधि तोंहि जानत मार । करि द्रोह औ अपकार ।
बिधि को करयो श्रुति सेतु । तुम एक नाघन हेतु ॥६९॥

दोहा

वह तौ बीती बात है, हुते स्वयंबर ठौर ।
दमयती नल को बरयो, जानि राज सिर मौर ॥७०॥

चौपाई

सानुराग नागनि को छोड्यो । देवन ओर न लोचन ओड्यो ।
दमयती गुन रूप बिसाला । नल उर डारि दई जय माला ॥७१॥

सुनतै ऐसे बैन तुरत । कह्यो कोप अति ही युग अंत ।
जो निसचय कलि नाउँ कहाऊँ । देवन को कारज कर आऊँ ॥७२॥
राज स्वयंबर मे दमयंती । नल पाई ज्यों त्रिय बिलसंती ।
बड्यो अनादर भयो तुम्हारो । ये ही ते जिव जर्यो हमारो ॥७३॥
हमै देखि तुम रहे बराइ । हम आये तुम सों नियराइ ।
असमर्थन के इहै सुभाइ । राजहि देखत रहहि पराइ ॥७४॥
बड़े बंस तुम देव सभागे । सुंदर सूर महा अनुरागे ।
तिनको छोड़ि अनादर कीन्हों । नलै ब्याहि गुन गौरव दीन्हो ॥७५॥

दोहा

तुम चारो बैठे रहे, ब्याहे नल निरसंक ।
सीतभानु में ज्यों लगी, तुम में त्रमा कलंक ॥७६॥
तासों चल्यो न बल कछू, हमपै कहा रिसात ।
सुने अनादर आपने, मनमें क्यों न लजात ॥७७॥

दोधक

ये कलि के सुनि बैन उदासी । बोलि गिरा तबहीं गुनरासी ।
कीरति जाइ नलै इन दीन्हो । औ दमयति दई परबीनो ॥७८॥
बानिहि नैसिकु ज्वाब न दीनो । देवन ओर चल्यो मतिहीनो ।
बोलि कही बहुरौ कटु बानी । गर्व भरी अरु पापनि सानी ॥७९॥

[कलि वचन]

हौं न चहौं निजकै दमयंती । आवति मो मन मे केहि गंती ।
है नल पै करुना नहिं मेरी । इंद्र सुनौ निसचय चित मेरी ॥८०॥

दोहा

जो हौं जीवत हौ बली, छली छिद्र कछु पाइ ।
दमयंती औ भूमि को, नल ते देउँ छोड़ाइ ॥८१॥
द्वापर हूँ हुँकार सों, करी बड़ाई सोइ ।
कान मूदि ता में दये, वासव बैन समोइ ॥८२॥

दोहा

हम चारौ लज्जित बदन, सोंच लख्यो कलिराज ।
थोरी दीजतु बड़ेन को, होति बड़ी हिय लाज ॥८०॥
चारौ फल के दानि हम, तिनको मनु सकुचात ।
नल की भक्ति समान कै, हमपै दियो न जात ॥८४॥

सोरठा

कलि तोको नहि योग, करत कोप नल पै अतुल ।
लोक पाल सुभ भोग, निषध सिंधु को सुधाधर ॥८५॥
क्षमावान नलराज, तेरो कलि अवकास नहि ।
निश्चित धरम समाज, द्वापर हू को उदय कलि ॥८६॥

संयुत

दमयंति रानि बिनीत है । पति प्रेम की चित चीत है ।
तुम सारिखे तकि क्यों सकै । निज चित्त मे बलकै बकै ॥८७॥
युग सेष आपु विचारिये । नल ओर को न निहारिये ।
नहिं जाइयो तेहि की सभा । घटि जायगी यह तव प्रभा ॥८८॥

दोहा

देव कहै कलि पै कहै, कलि देवन पै सोइ ।
बचन बराबरि ही बढ़ी, बड़ी लड़ाई होइ ॥८९॥
निज निज पक्ष प्रमान के, सम पौरुष सरसात ।
स्वर्ग गये चढ़ि देवता, कलि नल पुर नियरात ॥९०॥

दोधक

वैदिक विप्र पढ़ैं श्रुति रागे । त्यों कलिके श्रुति फूटन लागे ।
घोष सुने क्रम की चरचा को । छूटि गयो पग को क्रमु वाको ॥९१॥

दोहा

नगर सहीतै नहिं सकै, सुनत संहितै दीन ।
होम सुगन्ध नसी नसा, आहुति धूम मलीन ॥९२॥

तारक

परसे जहँ बिप्रन के पग पानी ।
रपट्यो न सकै चलिकै अभिमानी ॥
तिल तर्पन में तिल देखि विथोरे ।
लखि कपत भाजि चल्यो मुख मोरे ॥१३॥
द्विज भालन मे तिलकावलि छाई ।
दरकी छतिया तरवारि अराई ॥
जन झूठ बखानत देखत रीझो ।
रमनी प्रति बैन सुने तब खीझो ॥१४॥

स्वागता

यज्ञ रूप बनसे करि लेखे । धर्म साध जन व्याध बिसेखे ।
ढूंढ़ि ढूंढ़ि हिय हो सै चाहै । बार बार झुकि कै ऊर दाहै ॥१५॥

दोहा

जो परार्क अन करतु तेहि, देखत जरतु बराक ।
मूरख के मुखहू सुनहि, कलिको एको आक ॥१६॥
गायत्री रबि धाम ते, बिप्रन लई बुलाइ ।
देखत नहि दुरतै बन्यो, तुरतै गयो बिलाइ ॥१७॥

चौपाई

ब्रह्मचारि बैषानस बने । जेंवत यती घरै घर घने ।
तिन्है देखि हिय में रिस गहै । चरन धरन को थानु न लहै ॥१८॥
सोमयाग सुरभी वृष होम । हिसा देखि चलो जिय जोम ।
सुनत ऋचा श्रुति भाज्यो दूरी । खर कुबुद्धि भरि कै रस भूरि ॥१९॥

सवैया

मौन अतीन को मो जिय जानतु मोहि सरापत देत हैं गारी ।
बदत देवन को जन जे जनु लात नखै सिर कै हनि मारी ॥

अंजलि देत ऋषीस्वर जे चहुँ ओर छुटी छिटकी निरधारी।
तातेइ तेलन कै कै मनो छिर कै जेहि गात जरै इक सारी ॥१००॥

प्रद्धटिका

कटि मुज रज्जुकर दण्ड देखि। इमि ब्रह्मचारि द्विज कुल अलेखि।
जनु बाँधत ओरी सौ बनाइ। अरु चाहत मारन दंड धाइ ॥१०१॥

दोहा

स्नात कथा तक से गनै, पातक से सब वेद।
प्यासो पावै अनल ज्यों, लहै न कुल औ भेद ॥१०२॥
मण्डल को छोड़यो चहै, खडि लसाइ निहारी।
देखि पवित्री करनि में, पवि त्रास निरधारि ॥१०३॥
दुर्जन को ढूंढ़त फिरै, लहै अजिन मुनिबास।
छपनक चाहै अछपन, दीछित बरनि बिलास ॥१०४॥

सोरठा

अच्छ बीज की माल, सब फेरत जन रैनि दिन।
करत जीव बेहाल, मानौ मरि अबहीं गयो ॥१०५॥

तोटक

सुनिवे कहँ देखन को नल के। चहुँ ओर फिरैं न कहूँ झलके।
सुचि बैरिन सों न कहूँ ठहरै। श्रुति को ध्वनि अबरहू थहरै ॥१२६॥

दोहा

जहाँ बीर हंता सबै, कोऊ बीर हत नाहि।
रोषयुक्त नहि जीव जहँ, जीवन मुक्त बसाहि ॥१०८॥

दोधक

जेवंत बिप्रन को हँसि देखै। आपुस माहँ मिलै सबिसेखै।
जानत सोम महा क्रतु भोगै। मूँदत आँखिन को गनि रोगै ॥१०८॥
कामुक बिप्र लख्यो सबही को। मोद भयो मम में अति नीको।
बाम सुदेव उपासक जान्यो। त्यों रिस कै बहुतै दुख मान्यो ॥१०९॥

दोहा

गोहिंसा देखत हँस्यो, जगी काम की आगि।
देखि याग गोमेध को, हाल चल्यो खलु भागि ॥११०॥

सवैया

बिप्रहि देखत ही हरख्यो जेहि नित्त निमित्तक कर्मनि त्यागे।
जानि गयो जजमान जबै तब दोष दै दै कर्‌यो रोष अभागे॥
अर्ज्वनिकी रमनी अरु ऋत्विज आप में गारिन सों अनुरागे।
हेरत ही हहराइ हँस्यो कहि वेद विदूषक गावन लागे ॥१११॥

प्रद्धटिका

कलि लख्यो तबै चलि राजभौन। डरि ससकतु नहि करि सकतु गौन॥
नलराज लखे दमयन्ति सग। जनु इन्द्र सची हरि रमा रग ॥११२॥
तिनको अछेह हेर्‌यो सनेह। उर उड्यो शांति अरु बरी देह॥
तिनके बिलास रस बैन चारु। सुनि भयो मरनको भेदु सारु ॥११३॥
कलि जानत अपने दोष भूरि। गुन रहे दुहूँ के देह पूरि॥
नहिं सक्यो नेकु तिन ओर हेरि। हरवाइ तहाँ ते चल्यो फेरि ॥११४॥
तहँ एक बगीचा रहि नगीच। तेहि माँह गयो कलि बुद्धि नीच॥
तहँ रहत तपोधनकेन बृन्द। कीन्हो अनन्द सों तेहि पसन्द ॥११५॥

दोहा

फल दल फूलन सहित तरु, जे पूजत निज देव।
तिनकी ओर न लखि सक्यो, सँक्यो जानि जियभेव ॥११६॥

दोधक

एक महा तरु हेरि बहेरो। सौध समीप रहै नल केरो॥
तापर तौ निज बास बिचारो। आपन लायक रूप निहारो ॥११७॥

दोहा

निज सिर पै कलि को दयो, जबै बिभीतक ठाम।
कल्पद्रुम छबिहू भयो, ताते कलिद्रुम नाम ॥११८॥

बैठि बिभीतक पै रह्यो, डरत लखै नलराज ।
ज्यों कौआ कारो बदन, दहे संक गहि बाज ॥११९॥

सवैया

छलसों नल को अवलोकहि चाहत काल ब्यतीत भयो अधिकायो ।
पुनि द्वापर दौरि फिरै पुहुमी पर वाही के कारज मे चित लायो ॥
वाही समै बिस्मय रस में करि काम सरासन कोपि चढ़्यो ।
संग बसत लिये हुलस्यो नलराज के सौंध समीप सिधायो ॥१२०॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
कलि-समागमनो नाम अष्टादशः सर्ग ।



एकोनविंश सर्ग

संभोग-वर्णन

दोहा

सर्ग उनीसे मे कथा, काम बिहार बिलास ।
केलि अंग अंगनि सहित, दीपति पुंज प्रकास ॥

सोरठा

दार सार नल पाइ, काम सिंधु तारन तरी ।
भरी बिलास बनाइ, रमत रहैं रस अमियमय ॥१॥
रमत रहै दिन रैनि, दमयती सग सर्व वित ।
विषै न लागत ऐनि, जा ज्ञानी पर ब्रह्ममय ॥२॥

लोला

राज मंत्रिन को दयो सब देस कोष समेत ।
आप लै दमयति को ऊर हेम सौध निकेत ॥३॥
भाँति भाँतिन सों रची सब सेव पूजित काम ।
वै रहैं मनि की प्रभा झर मेरु सों अभिराम ॥४॥
धूप सुद्ध सुगध साधित काम सर परकार ।
दीपिका झमकैं हजारन दूरि हो अँधियार ॥५॥
मनि सों बँधी सब भूमि में करपूर को छिरकाव ।
मृग नाभि केसरि सों लिपी सब रतन माल बनाव ॥६॥
कहुँ तीनि लोकन के विचित्रत चित्र राजत जोर ।
कहुँ रतन जाल गवाछ गुंजत भौर ठौरहि ठौर ॥७॥

नल अंक संगम सों सुगंधित सेज फूल सुरंग।
तेहि भूमि को सम तिलक सुन्दर है सिगार प्रसंग ॥८॥
तट निकट निहकुट सो कढे लहरी भरी सुखवास।
मिलि जात हैं रति रंग मे दमयति के सुखवास ॥९॥

गीत

जेहि में लिखे बिन जीव जीव सजीव से लखि कै परै।
सब भाँति भाँतिन की लगो मनि रूप रंगन सों भरै॥
जेहि देखि ग्रीव कँपाइ मोहत लोक को करतार है।
जनु रोग बाढ़त बात को तेहि ते भयो बिन सार है ॥१०॥

दोधक

भीतिन बीच बने ग्रह रूरे। गावत गीत तहाँ जन पूरे।
देखत ही बिस्मय उपजावै। तार बँधी पुतरीन नचावै ॥११॥
आवतहू जहँ रैनि अँधियारी। फैलि रही चहुँ ओर उज्यारी।
भीतिन मे मनि कोटिन जेटी। छूटि रहैं किरनै द्युति भेटी ॥१२॥
छूटत हैं जलयत्र फुहारे। नाचत मोर महा छबिवारे।
लौकत चीर ध्वजा रतनारे। सावन भादौ के घनवारे ॥१३॥

द्रुतविलम्बित

मदन तन्त्रन को कुलि कारिका। पढ़ैं पंजर मे सुक सारिका।
सुरत मे नल औ दमयंति के। रहहि ये सखियाँ जिमि अंतिके ॥१४॥

मनहरन

मंत्रनि सों प्रतिमा सजीव रति काम जू की,
लखिकै बिलास वेऊ सुरत करत है।
तिनके मनि तरैनि छूटत कपट ओट,
कोटि जाल रंध्रनि में ह्वै ह्वै पसरत हैं।
उपवन बोलैं पिक डोलैं मतवारे अलि,
नीचे परवीन बीन गान सतरत हैं।

मुख मुख सुख पागे करै बैन अनुरागे,
रसमे विवस तरै कानन परत हैं ॥१५॥

छप्पय

हाटक अंक विटंकहि लखि कबि चाटु सुहाये।
वत्स्यायन मुनि कहे कोक ऋषि जे कछु गाये॥
गौतम तिय सुरराज इन्दु गुरु रमनी लीला।
मत्स्योदरी चरित्र लिखे चित्रित सुभसीला॥
यहि भाँति भौन मनि भीति मे सब मन्मथ पौरुष लिखे।
बिहरत, बिनोद दोऊ करत सुरत रंग संगम सिखे॥१६॥

सोरठा

जग उज्ज्वल के हेतु, बेजयतु नीचो कियो।
जाकी कीरति स्वेत, कातिक पून्यो की स्वसा॥१७॥

दोहा

पार पहुँचि भवसिंधु के, भये युवति आधीन।
रचे चितेरे चित्र मे, ऐसे मुनि परबीन॥१८॥

दोधक

माति करै वर्षा ऋतु लासू। आवति मोरनि के दृग आँसू।
मोरनि की बनिता गहि लेही। केलि बिना उपजै सुत तेही॥१९॥

दोहा

याते नाचत मोर जहँ, मै ही जीत्यो मार।
हम जाके बाहन यहौ, ब्रह्मचारि सरदार॥२०॥

तारक

नल ओ दमयन्ति जहाँ छबि छाये। रति मन्मथ औरति से बनि आये॥
इनको अवलोकत ही वह जोरी। मन लागति है अतिही रुचि थोरी॥२१॥

हरिगीत

तेहि सौंध भूधर हेम के गृह माँहि रगनि सों रमै ।
नहि नागरी तिय करि सकै नहिं बनत बरनन कबित्त मै ॥
बहु परम पूरुष योषिता यह स्वामि बहु यह बस परी ।
बहु युवा यह सुकुमार बय सुख सुरत सों अतिही डरी ॥२२॥
जब दूत कारज को गयो नल हो तबै बतियाँ कही ।
सुधि करत सो निज ढीठ सीस नवाइकै अखियों रही ॥
जहँ लाख लोगनि सो समागम हठि तहाँ नल को वर्‌यो ।
तब सुमिरि मन निज चपलता कुललाज सों जियरा जर्‌यो ॥२३॥

सवैया

सेज पै जाइ जहाँ नल बैठत ता ढिग हेरि सकै न लजानी ।
बूढ़ि रही सरिता कुल कानि की स्रौन सुनै पिय की मृदु बानी ॥
केलि के मंदिर आवति नाहि बडी बिनती करि भीतर आनी ।
पौंढ़ परेहू न पौढ़ति है परि कै गहि पाटी रहै सु-रिसानी ॥२४॥

चौपाई

गौरी गुनवारी सुकुमारी । जे जे भाव करैं पिय प्यारी ॥
तिन भावनि कोप्यो जब चाहै । सौ बिनतीहू फेरि निगाहै ॥२५॥
ज्यों ज्यों करै रुखाई नारि । झुकै हाथ डारै झिझिकारि ॥
पिय हिय में त्यों त्यों नहि हानि । दूत समै निहचै पहिचानि ॥२६॥

तारक

पहिले बहु आलिन संग बुलाई । इक दोइ प्रतीति भये पर आई ॥
तेहि को छल सों नल अंत पठायो । निज प्यारिहि पाइ भयो मन भायो ॥२७॥
नव सौरभ फूलन की रचना पै । सिसकी भरि पोढ़त ही कुच कापै ॥
अब बाहु लता पिय ऐंचि लता सी । उर हार सिगार करी नवलासी ॥२८॥

सवैया

नै गई नारि गही पहिले पिय चुम्बति चोप लिलार रसीले ।
नेकु उचौत्यो कपोलनि को रस लेति पिये न अघात अमी ले ॥
सोहै प्रतीति हँसौहे भई पुनि पान करै अधरान रगीले ।
मानो सुधा उद्गार लई विहँसै दृग कोरनि छैल छबीले ॥२६॥

स्वागता

लाज जाहि नियराज भजावै । नयननि मे डर यों डरपावै ॥
बाल भाव जिमि मैन डरावै । दौरि दौरि वाके ढिग आवै ॥३०॥

सवैया

हार बिलोकन के मिसकै रस सार भरयो छतियाँन निहारै ।
ग्रीव के ऊपर छूवै फुदना त्यों ढुरी अँगुरी कुचकोर किनारै ॥
ज्यों तुम मोहि दई पहिराइ बही रचिहौ तिमि कंठ तिहारै ।
ह्वै हरुये कुच को सहरावत चावन सों पहिरावत हारै ॥३१॥
सोवत पेखि प्रिया कर कपत डोरी निबीकी गही खरकौहै ।
जानि जगी रिस रंग रगी भय भूरि पगी सुलगी थरकौहै ॥
घाँघरे झीन झपी झलकैं लखि जघन मै ललकै लरकौहै ।
जानि लई दुगुने पट झाँपि चढ़ी भ्रकुटी अधरा फरकौहै ॥३२॥

तोटक

विनही तिन भाँतिन प्रेम करै । जेहिके तिय के तन भीति टरै ॥
निज चापलता तिय चापलता । करि मैन बचाइ दई समता ॥३३॥

मनहरन

सखिन सों कसि कसि नीबी बँधावै ज्यों ज्यों,
　　त्यों त्यों मुसकाति आप आप मुख चाहि कै ।
उरज उतंग शृङ्ग मेरु पै उदित चन्द्र,
　　अरु नख अंक लाल मालनि सराहि कै ॥

कबहूँ पलक ढारि नैयन मुकलित करै,
कौहूँ करे बिकसित सुखसिंधु अवगाहि कै।
कोऊ कौंल खिले अधखिले बिलसत कोऊ,
पद्मिनि जीती यौं पदुमिनि उमाहि कै ॥२४॥
नल बिनु देखे काम बैठन न देत वाहि,
देखन न देत ऐसे लाज सोंकरे परी।
पीतम पियारो लख्यो रूप उजियारो नैन,
भरि न निहारो अद्भुत रचना करी ॥
रतन की भीतिन मे परत प्रतिबिम्ब त्योंही,
छतिया मनीन मे रगीन प्रतिमा अरी।
तिन तिन ओर तृन तोरति करति दीठि,
नीठि बिहरत पीठि दै रहै खरी खरी ॥३५॥

दोहा

ब्याकुल बासर बिरह सों, रैनि रही चित छाइ।
रैनि माँह बासर चहै, लीला सुरत लजाइ ॥३६॥

तोमर

मृगनयनि ! दे तजि भीति। करि प्रीति लेहि प्रतीति ॥
हमको सखी सम जानु। नल यों करै सनमानु ॥३७॥

सोरठा

तिय हिय मन्मथ आगि, लाज महोषधि सों दबी।
दुगुन उठी अब जागि, पिय सनेह रस मंत्रबच ॥३८॥

पृथ्वी

छुटाइ नल के करै कुच छिपाइ लीन्हे तहीं।
समेटि छतिया सरस बाहु दोऊ गही ॥
मनौ डरति है लाज सों निकट लाल को त्यागि कै।
बसै जु हिय मे सदा मिलति ताहि सों पागि कै ॥३९॥

चौपाई

चन्द्रबदनि तेरे पग लागौं । तोसों एक दान मैं मागौं ॥
तेरो अधर एक ही बार । पान करौं पाऊँ सुख सार ॥४०॥
ऐसो पोटि ओंठ रस लेत । हठ सों परसि मरदि नख देत ॥
बार बार वाके गुन गावै । बार बार तरवा सहरावै ॥४१॥

सवैया

रावरे आनन इंदु सुधा रस आसव सों छकि मत्त भयोहै ।
सेवक हैं जेहि लायक को वह काम करौ मनु मोल लयो है ॥
कोमल पल्लव से मृदु हाथनि चापतु जघनि को उनयो है ।
झारतु पाइनि नैननि सों लचि नाइनि के रचि रग रयो है ॥४२॥

चर्चरी

चुम्बनादिक में तजी तुम लाज तौ बिगर्‌यो कहा ।
त्यों तजौ अबहूँ बिलासिनि पाइ लागत हौ इहा ॥
चाटु बैन बनाइ सुन्दर केलि की रचना रची ।
बाम कौतुक रूप मै अभिलाष मर्दन की सची ॥४३॥
लाज तोंहि भली लगै पहिले समागम पाइकै ।
स्वप्न संगम सों बिलज्जित होहु जातु लजाइ कै ॥
देत जात उराहने नरनाह यों रस सों छकै ।
लाज छूटि गई नई दमयति की नल के तकै ॥४४॥

प्रद्धटिका

नागपास अरु बाहु बँध । पुनि हंस चरन स्वस्तिक सुगध ॥
वृक्षाधि रुढ जानौ सभाग । फिरि लतावेष्टित सानुराग ॥४५॥
इन आदि बन्ध कीन्हे अपार । पुनि सुरति रग कीने विचार ।
अभिलषित सखी लोचन सरोज । दिन देखि तोहि हम लहैं चोज ॥४६॥

सोरठा

करि ऐसे संकेत, भूप रमे दमयंति सँग ।
मैन बिहार निकेत, लसे दोउ रति मयन से ॥४७॥

हरिगीत

रसरग आलस सों भरी परभात जानत चौंकि कै ।
उठि चलत सुरत निकेत सों गहि बसन राखति रोकि कै ॥
भरि ललक चाखत अधर रस मुख सुरत सुख ललचाइ कै ।
छिति की सची सम लसति पद्मिनि भूप सुरपति लाइकै ॥४८॥

सोरठा

हँसी सखी अनुमानि, लहि बिलंब आगमन को ।
गई कोक मत जानि, भोरे रस पद्मिनि सुरत ॥४९॥

दोहा

निज निज निधुवन चिह्नयुत, लखी सखी परभात ।
आप आपनी चितै गति, नलनि नयन नै जात ॥५०॥

सवैया

दमयंती इकत सखीन के संग पगी रति रग कथा जहँ भाखै ।
तहँ देवन के बरसों छिपिकै नल काननि बैन पियूषनि चाखै ॥
पास खड़्यो सबिलास हँसै बरखै रसरूप जबै धरि राखै ।
राजहि देखि दबीं सखियाँ सब लाजनि नौल बहू सिर नाखै ॥५१॥

दोहा

अवलोकी कोकी डरी, साँझ बिरह भै पाइ ।
बिरह जनायो आगि लो, पिय हँसि लई बनाइ ॥५२॥

मनहरन

चुंबन करत मुख मोरत न मृगनैनी,
नारि न नवावै गलबाँहो बितरत ही ।

त्यों त्यों पिय हिय में पियूष बरखत रस,
रंग सरसत रहे पॉयन परत ही ॥
भुज लतिकानि सों छिपावै कुच कलिकानि,
बिनती करे ते लेति ऐंचि इतरत ही ।
केसर कपट ी बनी हो पट कंचुकी,
समिटि गई अंक पकरुह के धरत ही ॥२३॥

चंद्रमाला

परि परि पाँइ प्रानपति माँगत नख छत देति न नीके ।
बातन मिस करु ऐंचि पिया को नखछत दे निज हीके ॥
अँचल हिय भूषन बाहेर को पीतम सकत छुटायो ।
लाज बसन भूषन भीतर को सो न दूरि कै आयो ॥२४॥

तोमर

बलवान मन्मथ राज । हठि कै छुटावन लाज ॥
बिन चीर सोहत भूरि । महताब सी द्युति पूरि ॥२५॥

सरसी

हौं मागत रति दान दीन ह्वै नाहि करत तू नाहि ।
मै जानी तेरी रुचि मीठी सुरत रग रस माहि ॥
चाहत सुन्यो बचन बनिता के ऐसे करत उपाइ ।
नैसिक सिर कँपाइ सकुचानी उत्तर दयो बताइ ॥२६॥

तारक

पहिले पिय के कर औरन हेरे । बहुरो हरुये झिझकारति फेरे ॥
परिपूर्ण प्रतीति भई हिय माही । तब नेकु करै हँसि बैननु नाही ॥२७॥

सवैया

रूप अभूषन बेष सुगध नयेई नये करि रोज सुधारैं ।
रोज कबित्त नयेई नये पढैं राज नई बतियाँ बिस्तारैं ॥

एक सी जानि परै पिय को नहि देवन की बनिता अनुहारैं ।
बैस नई अरु हौस नई नित नेह नई छबि रोज सँवारैं ॥५८॥
भावन सो प्रगटै पिय पै निज नेह के सागर की सरसाई ।
बातन की मधुरी महिमा करि देत गहे गुन की गरुआई ॥
पाँइ पलोटति वै हरि के हरिलेत हियो सुचि सेवक ताई ।
मोल लये जनदास इते बस ह्वै प्रियप्रान करी मन भाई ॥५६॥
मान मनावति में नहि मानति बातनि जानत लाल रिसाने ।
नयन चलाइ हरे मुसक्याइ कै लीन्हे मनाइ बनाइ लुभाने ॥
कीन्हे हरे हठ सों परिरंभन चोप सों चुम्बन लेत अघाने ।
ऐसे छके छबि सों ललके नलके चख फेरि न यों ललचाने ॥६०॥

सोरठा

लपट गई अरभंग, ज्यों गिरिजा मिली गिरीस सों ।
कोक कला परसंग, अगरीति ज्यों तरु लता ॥६१॥

सवैया

कौन थलीन जलासय को नहिं कानन को नहि सैल सुहायो ।
लोकन को अरु देसन को नहि कामकला को प्रकार बनायो ॥
रागन को अरु बागन को अनुरागन को सुजहाँ जुरि आयो ।
पूजि अनंग पिया गहि संग जहाँ रस रंग न भूप मचायो ॥६२॥
ऐंचत चीर लची दुगुनी झुकि फूकि हरे दुतिदीप बुतायो ।
भूपति के सरपेंच प्रभा झर छूटि रही सब देत देखायो ॥
सोन तरोननि ते गहिकै तहँ अंबुज नील मिलाइ दुरायो ।
मानि मनोभव की अरचा रति रानि मनौ सिर फूल चढ़ायो ॥६३॥

चर्चरी

फूल ढाँकि दुराइ दीप प्रसन्न ज्यों मन में भई ।
दीप द्वै दुहूँ ओर और प्रकाश ह्वै दीपति छई ॥

एक अचल सों दुरावतहू हरै बिस्मय करै।
सुद्धि आवति अग्नि को तब रोष कै पति सों अरै ॥६४॥

सोरठा

वह्नि बड़ो सुख पाइ, बर दीन्हो नलराज को।
चाह रावरी पाइ, प्रगटौ बेगि बुझाऊँ पुनि ॥६५॥
प्रगट्यो तम चहुँ ओर, नल इच्छा को पाइकै।
गहि लीन्ही भरि कोर, मुदित भई अकवँरि भरी ॥६६॥

[दमयन्ती बचन]

मनहरन

चूमत कपोल हौ तिहारे ललकन भरि,
　　अलकन ही के भार सोंहे अलसात हौ।
करज कलित दुर उर सों ललित लाल,
　　मिलत तिहारे हार ओझिल रिसात हौ॥
सेवकिनि जानौ हौ तो कह्योई करौगी नेकु,
　　अब छोड़ि दीजै गहे अक अकुलात हौ।
करौगी सुरत चित चाह सौ तिहारी फेरि,
　　मैन की सों तुरत मिलौगी काल्हि राति हौं ॥६७॥

दोहा

दीपक छिन छिन बरि उठै, छिन छिन जाहि बुझाहि।
तम घन दामिनि रंग मे, करत केलि चित चाहि ॥६८॥

सोरठा

भौंहै लई चढ़ाइ, काम चढ़ायो चाव त्यों।
नयन मूँदि अलसाइ, छूटन लगे हुँकार सर ॥६९॥

दोहा

अधर डसत सीसी करै, कर झारै झुकि जाइ।
रति को मानो आप गुरु, निरत सिखावत गाइ ॥७०॥

मनहरन

सुरत सलिल कन जानत प्रिया के पीउ,
थंभन करत परिरंभन उपाइ कै।
मनि की भितीन में दिखायो प्रतिबिम्ब कह्यो,
कौन इत आयो, रही प्यारी भय भाइ कै।
आपनो सुरत रस मुकुत न होन देत,
सूर चन्दनादिन कबन्धन बनाइ कै।
योग की युगति औ सँजोग की भुगति रीति,
कौन की प्रतीति दूजो नायकन लाइ कै ।।८१।।

दोहा

एकहि सग दुहून के, उपज्यो स्वादु सुगंध।
विषम बान मय विषम रत, गुंजत अलिमद अन्ध ।।८२।।

हरिगीत

पुनि करत सम रत सुरत सुख रस छाकि चुंबन लेत हैं।
भुजमूल औ कुच नाभि सुन्दर रहसि आनँद देत हैं।
सब सिथिल तन मुकुलित बिलोचन पुलकि मुख ससिमें सिसी।
इमि निखिल निधुवन की कला पिय को हँसी तिय को खिसी ।।८३।।

सोरठा

सुरत मोद रस पाइ, सोहत कर दह दसन क्षत।
ज्यों सर्वंत करवाइ, लौंग मिर्च नीकी लगै ।।८४।।

सवैया

मंदहि मंद बयारि करे नल झीन जरी दुपटा मृदु छोरसों।
स्वेद के बुंद बिराजि रहे मुख इंदु नखत्रन के गन जोर सों।
भौंह चलाचल नाक सकोरि भरै सिसकी चितवै दृग कोर सों।
मोतिन के हरवा निरुवारतु प्यो तरवा सहरावतु ओर सों ।।८५।।

दोहा

प्यारी के तन स्वेद कन, पियत पीय के नैन ।
नैसुक प्यास बुझाति नहि, महिमा मानत मैन ॥८६॥
जपा पुहुप अलि पाति पति, अधरन कज्जल लीक ।
सकुचोली छिपयो चहै, चाहत हँसी अलीक ॥८७॥

सोरठा

आपु हँसी मुख मोरि, त्यों त्यों बूझत भूप हठि ।
मुकुर दयो कर जोरि, यहै दयो उत्तर तिन्है ॥८८॥

रथोद्धता

भाल भौंह पति के निहारिकै । रेख जावक लगी बिचारि कै ।
मोरिकै बदन कमल सों खिल्यो । चन्द्र सूर परभात सों मिल्यो ॥

द्रुतबिलम्बित

हुकुम को गहि मैन महीप को । दसन के छत ओठ समीप को ।
दुखत वेदन जाति नहीं कही । अजहूँ लौ यहि भाँति नहीं सही ॥८९॥
लखि उरोजन की नख रेख को । मदन किंसुक बान बिसेख को ।
हँसि उठ्यो नरनायक चाह कै । रिस भरी बिझुकै सरसाइ कै ॥९०॥
पहिरिये उर मोतिन हार को । अमृत सीकर बिन्दु बिहार को ।
करज के छत वेदन को हरै । हम यही सुख को बिनती करै ॥९१॥

सवैया

सीतल पौन करे छिन में छिन में तरवा सहरावन लागै ।
पीन पयोधर पै परबीन सजै झलकी अंगिया रस पागै ॥
स्वेद के बिन्दु रुमाल लै पोंछत गूदत केस खुले मुख आगे ।
दीन्ही खवाइ तबोल बिरी मुख बेष बनाइ दये सब बागे ॥९२॥

दोहा

अपराधी सर पंच यहु, तम में करत प्रकास ।
अब तेरे पायन परत, कृपा करन की आस ॥९३॥

ऐसे कोमल बचन कहि, सजन लग्यो सब साज ।
प्यारी को पोंयन लग्यो, है सब को सिरताज ॥१४॥

सवैया

मानिनि मानु मरू कै तज्यो मन भावन पावन वै सिर नायो ।
कै न सकै अँखियाँ समुहे रिस पाछिली सों चित कै सरमायो ॥
त्यों उमग्यो अति नेह नयो फरकी भुज औ हियरा ललचायो ।
लोकि कै आइ गई उरमें लगि मानहु प्यो परदेश ते आयो ॥१५॥

दोहा

बढ़त मनोरथ जात अति, घटति जात त्यों रैनि ।
हँसि बोल्यो तब बैन नल, सकुचि सुनै मृगनैनि ॥१६॥

[नल बचन]

छप्पय

देव दूत के रूप तोहि निरदै दुख कीन्हे ।
तीछन बचन बिकाइ तेइ मै पातक कीन्हे ॥
तिन सों चित्त लजात बात कहतै नहि आवै ।
तेरे चरनन मोंह चातुरी चाह बतावै ॥
अब ताको बदलो देत हौ जब लगि प्रान सरीर में ।
बिन मोल दास तेरो भयों माफ भयो तकसीर में ॥१७॥

सवैया

सो छनु जा महँ तोहि लखौं अरु राज गनौ अनुराग तिहारो ।
सोइ सुधारस पान हमै चख चुंबन जो परिरंभन वारो ॥
ईश्वर की किरपा वहई जब तैं तिरछे हँसि नेक निहारो ।
सागर सों सरिता परिरंभन चाहत हौं यहि भाँति बिहारो ॥१८॥

दोहा

कौन भाँति बरनै परैं तेरे धीर सुभाइ ।
तिन समान सुरपति तज्यो, मोको बरयो बचाइ ॥१९॥

चौपाई

एक द्योस चर्चा मै सुनी । तोसों सखी चतुर दूगुनी ।
जिन जिन सों जे जे ज्यों डरै । निज भय हेतु बड़ाई करैं ॥१००॥

[एक सखी बचन]

छुये जात जो सिमटि बिशेखि । मै मन डरौ लजाऊँ देखि ।

[दूसरी सखी बचन]

कच्छुप पल चापलता हेरि । मोको लेत तहीं भय घेरि ॥१०१॥

[तीसरी सखी बचन]

बहु रगी सरटा सिर घूमै । मोहि देखि लागै डरु झूमै ॥
निज निज भीति सबै कहि देत । तु ठकुरायनि डरत केहि हेत ॥१०२॥

[दमयंती बचन]

गोपाल

तीन लोक में जो भय होइ । मोहि सकै लखि नाहिन सोइ ।
नल का बिरह एक छिन रहै । मरन तूल मोको डरु वहै ॥१०३॥

[नल बचन]

दोहा

ताते सेवक के बचन, पर करिये परतीति ।
जीवन भरि तेरे निकट, रहौ अचल वहि रीति ॥१०४॥

छप्पय

बिरह बिपति में गरल हुते तब मोहि जिवाये ।
रैनि स्वप्न में दुहनि अक लै दुहनि मिलाये ॥
करत रहे रस रग अग की तपति बुझावै ।
जिय मोही अवलबि रोज मेरे गुन गावैं ॥
भरि रजनि नाम मेरो नहीं लेत दोऊ हूँ मैन में ।
इहि रोष पाइ मृगनयनि सुनि नींद न आवति नैन में ॥१०५॥

सोरठा

बचन रसीले जागि, कहति जाति भूपति रसिक ।
सोइ गई उर लागि, रानी रति आलस भरी ॥१०६॥

सवैया

ओठन ओठ मिलाय लिये छतियाँ छतियाँ लगि एक करी है ।
ऊरुनि ऊरुनि सों रसिकै छबि पुंज प्रभा सब कुंज भरी है ॥
भेटन जानि परै तिल तूल अतूल लई सुख लूटि खरी है ।
काम ही की रति ही कि मनौ सुख सेज पै एक लिखी पुतरी है ॥१०७॥

दोहा

मिलि मिलि चलत दुहूनि के, सुभ नासिका सुवास ।
एकै प्रान दुहून को, कहे देत परकास ॥१०८॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ संभोग-वर्णन नाम एकोनविंशतितमः सर्ग ।



विंश सर्ग

सूर्य्योदय-वर्णन

दोहा

सर्ग बीसयें में कथा, सूर उदै को रग।
बैतालिक मुख बरनिबो, नल जागन परसंग॥

सोरठा

भूप जागिवे काज, बोले बन्दी बैन मृदु।
बीत्यो रैनि समाज, सोवत प्यारी अक लै॥१॥

[बन्दीजन बचन]

प्रद्धटिका

जै जै जनेस जै महाराज। लखिये प्रभात सोभा समाज।
जहि प्रथम सकुन दमयति रुप। मगल पुनीत प्रिय तनु अनूप॥२॥

गीत

यहु जात पास नितंबिनो दिस को चल्यो सित भानु है।
छबि लाजि ऐंचि भयो निरकुस छैल ज्यों हिमवानु है॥
नव मित्र सगम आस सों सबिलास कोकिल नील सों।
मुसकात नैन सरोज गावति बासवी दिसि सील सों॥३॥

हरगीत

मुंदि जात खुलि खुलि सकल तारे दीठि झिलमिल होत ही।
चहुँ ओर केसरि सी खिली दिननाह किरन उदोत ही॥
भरि रजनि जीत लयो तमोगुन भोर दारिद यों लख्यो।
नहिं अमृत दीधिति में रही इक छबि छुटा चख सों चख्यो॥४॥

जग माँह तिमिर तरंग तुंग प्रपंच पंक समान है।
अति स्याम छबि मधुकर निकर जनु करत रबि रुचि पान है॥
तिन अकुरनि सिर ओसबिंदुनि की बिराजति माल है।
जनु सुघर सूचिन भिदति मुकतनि को अनूपम जाल है॥५॥

प्रद्धटिका

रबि किरनि ऋचाचै प्रनव रूप। बिधि नखत लोपि बिंदुनि अनूप।
तहँ रचति आनि सुर साधि खेतु। गहि इदु बिब सो असु देत॥६॥

मनहरन

दुरि चरमाचल में चदु छिपि छिपि जातु,
मूदति है नैन कुमुदनि मुरझाइ कै।
कागन की काकली कलित बन बाग रही,
छाया सम तम को पटल छुटा छाइ कै॥
माया मय जाया रघुपति की हरी ही जिमि,
तिमिर चिकुर ऐंचि रावन उपाइ कै।
अरुन बदन सूर करन पसारे देखौ,
हरत सरवरी विहीन पति पाइ कै॥७॥

प्रद्धटिका

सुर मिथुन केलि सैय्या अकास। उडु गलित हार मुकुता बिलास।
भरि रह्यो स्वेत करतूल तूल। गलसोइ रूप बिधु भयो फूल॥८॥
रबि किरनि कही दससत प्रमान। तेइ चारि वेद साखा बखान।
तेहि उदै पाइ महि देव भूरि। परभात वेद ध्वनि करत पूरि॥९॥
आयो सिकार दिन नाहु भूप। धरि छूटत सरगन किरनि रूप।
ते हनत काग सम अँधकार। मिलि करत काग ताते पुकार॥१०॥
सस मारन डर ससि भजत जात। उड़ि तारा पारावत विभात।
सुर सुरति हार टूटे अपार। ते ढुरके मुक्ता नखत सार॥११॥

रवि किरन बुहारी सों बुहारि। करि पुहुप मही में दिये डारि।
....॥

दोहा

प्रथम अतिथि रबि जानि नभ, तिमिर दूरवा सग।
ओस सलिल आखत नखत, देत अर्घ सरबंग॥१२॥
क्यों न जियावै असुरगुरु, तम असुरै परभात।
संध्या वृत्त मृतजीवनी, विद्या कही न जात॥१३॥
चोंचु चूमि चटुके लिपटु पच्छ हलाइ फुलाइ।
मिलत कोक रमनी रमन, लीला कोक उपाइ॥१४॥

सोरठा

पढ़ै कोक जो और, लहै सुरति परबीनता।
आपु कोक सिरमौर, केलि कला के सार निधि॥१५॥

सवैया

तारा सभा अरु रैनि बहू इन को नहिं योग हती यह ऐसी।
देखत ही अपने पति को यहि भाँति विपत्ति कहूँ छिपि वैसी॥
चन्द्रँहू की छतियाँ अति साँवल पाहन ते घन पीन अनैसी।
क्यों नवटूक भई छिन में बिछुरी वह प्रान प्रिया जब ऐसी॥१६॥

सरसी

नवत लाज होमति अनुरागी अरुन किरन सिखि माँह।
ब्याह लई सध्या सरोज दग बिगसत ही दिननाह॥
गावत गीत मिलिद सुघर ध्वनि झरत पुहुप चहुँ ओर।
श्रुति सुक पढ़त बैठि साखा द्विज अरु नाचत हैं मोर॥१७॥

हरिगीत

सुनिये तपोमय राज ऋषि महराज श्रीनलराज जू।
करि वेद बिधि सध्या प्रनति अरु राज के सुभ साज जू॥

इत इन्द्र की दिसि गर्भ सयुत चहत जनस्यो बालु है।
उत छुटत कंठ कपोतहू कृत बदन राजतु लालु है ॥१८॥
महराज रानि दमयँति तैं नलराज को हियारा हर्‍यो।
नहि मनतु दूषन वेद विधि के लोप को यो बसु पर्‍यो ॥
तू परम पंडित आपु है नहि दुरित हेतु करै सही।
अपवाद लोगन में चलै जेहि काम की चरचा नहीं ॥१९॥

मालिनी

तट तरु खग जागे, राव के रंग पागे।
जगत अधखुले से, कमलिनी नयन लागे ॥
पियत मधुप माते, ओठ की सूध मानौ।
पुहुप रस अमी से, गाइ सिंगार गानौ ॥२०॥

मनहरन

केसरि कुसुम सम फूलि फैलि रही छबि,
रवि की तरुन छबि झमकत अरुनाई है।
बीच बीच दौरत जलज मधुपान पुंज,
गुंजत मधुप मानौ गुंजा द्युति पाई है ॥
साँवल अहार जो करत पीत मात तौ ही,
सुलकेसरीन मैं होत स्यामताई है ॥
तम को पियत सूर तासों उतपति पाइ,
यमुना समन मैं सरस मलिनाई है ॥२१॥

प्रद्धटिका

पितु अस्त समय अनुराग कीन्हि। जेहि अमर लोक पति बरत लीन्हि।
तजि अधर भुवन चलि गई साँझ। सोइ दीपनि आई अनल माँझ ॥२२॥

करि कमल मूरछा तिमिर दूरि । सुरवैद सूरकर अमिय मूरि ।
कल्हार मूँदि अपमिरतु देत । तहँ समन पिता यह जानि हेत ॥२३॥

दोहा

झलझलात रबि मनि बिमल, रबि किरननि को पाइ ।
निज पति की सम्पति लखे, कौन काँति सरसाइ ॥२४॥
चंदु कमलिनी को रहै, रबि के बिरह सताइ ।
हँसी कमलिनी देखि दिन, बिसिनी बीरह बलाइ ॥२५॥
मालति की लतिका हँसै, झरत पुहुप कन्न हाँस ।
कोक लोक की देखि कै, दिन को केलि बिलास ॥२६॥

छप्पय

मलै सानसों खस्यो चलत अतिमद सुहायो ।
सीतल भयो सरीर सजन अलि सोर मचायो ॥
सरसी जात पराग धूरि धूरा लै धूर्‌यो ।
मान सरोवर सलिल बिंदु कन लै मुख पूर्‌यो ॥
यहि भाँति पौन परभात को आवत सकै बखानि को ।
परसेदु केलि को हरत हठि जैसे पौनु पखानि को ॥२७॥

चंद्रमाला

बासर भयो दिवाकर की रति सो सूरय करछुर धारै ।
मुंडतु तिमिर ज्योति कवरी निसि चोरनि को जु निकारै ॥
डारि दये वै केस सँवारे अवनी तल में जैसे ।
छाया मिस तरु तरु के तरहरि प्रगट देखिये वैसे ॥२८॥

दोहा

सुयस रावरो संख सम, जाको द्विजपति भाइ ।
जो याको करछेदु लखि, धर्‌यो कलंकु बनाइ ॥२९॥

सोरठा

सूरय कर सों भेदि, भयो अरा सों अरध विधु ।
डारै कमलनि छेदि, अरकोकनि के बिरह को ॥३०॥

दोहा

कमलाकर को पाहरु, कुमुद सदल दृग खोलि ।
जगि निसि सोयो दिन उदै अलि कलरव गल बोलि ॥३१॥
प्रथम पुरुष मध्यम पुरुष, देत पृच्छांसि सिहाइ ।
तुही तुही परगट करै, प्रति उत्तर को पाइ ॥३२॥

द्वितीय त्रिभंगी

अमल कमल दल, बिमल सकल थल,
बिलसित नल मारग लागे, खग आगे ही उठि जागे ।
मधुर मधुर ध्वनि, निगम गुनत मुनि,
मिलि तिय कोक सभागे, सुख पागे ही अनुरागे ॥
अरुन करनि कर, कनक सुरज हर,
गगन सुअंगन झारे, भुअ डारे फूल सितारे ।
जय जय तमहर जय जय द्युतिधर,
लखि उदयाचल वारे निसि न्यारे पाप पधारे ॥३३॥

मोदक

बंदि बने परभात बखानत । जागि दोऊ उर आनँद आनत ।
दान दये नल जू कुल भूषन । रानि उतारि दयो निज भूषन ॥३४॥
नंदिन पैंधत बंदिन के गन । जात सराहत चोप महामन ।
मानिक लाल किये जनु लोचन । चाहत याचक दारिद मोचन ॥३५॥

गीत

सुरबाहिनी अभिषेक को विधि वेद संध्यहि ध्याइ कै ।
करिकै कृतारथ बंदि नयननि सैन बदन भाइ कै ॥

रथ वात वेग बनाव सुन्दर दाइजे महँ जो लह्यो ।
चढ़ि सोध ते निकर्‍यो सुधाधर मेरु को मारग गह्यो ॥३६॥

इति श्रीमत्प्रचंडदोर्दंडप्रतापमार्त्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ सूर्य्योदय-वर्णन नाम विंशतितमः सर्गः ।



एकविंश सर्ग

नल-विलास

दोहा

सर्ग इकीसे में कथा, दमयति को मान।
उत्तर प्रतिउत्तर बचन, नल करिहैं सनमान ॥

सोरठा

सोधसिखर मनि धाम, आयो राजा न्हाइकै।
रथ ऊपर बिसराम, बात वेगि नभ ते उतरि ॥१॥
दमयती बहिराई, उठी देखि आयो नृपति।
उद्वत ससि नियराय, सिंधु प्रतीची बीच ज्यों ॥२॥

चौपाई

दमयती अति आदर करयो। भूपति देखि मोद मन भरयो।
मंदाकिनि पंकज छबि जानी। हाथ पाइँ दृग बदन निसानी ॥३॥

सवैया

आनि दयो पिय हाटक पंकज प्रानप्रिया कर सों गहि लीन्हों।
पंकजनैनि प्रकासि रही कमला सम लै कर कौंल नवीनो ॥
थोरि दियो बहुतै करि मानत पीतम के हित को चितचीनो।
चाटक सों अभिलाख भरी सत लाखनि मोल बराटक कीनो ॥४॥

दोहा

लखि प्रसन्न ठकुरायनी, बिरहनि सों अनुमानि।
प्रान पियारो चाइ सों तब बोल्यो मृदु बानि ॥५॥

[नल बचन]

दोधक

मज्जन देव नदी हम कीन्हो । संध्यहि अजलि ता महँ दीन्हो ।
सेस रही करिबे बिधि प्यारो । जो न वहै रिस की उर क्यारी ॥६॥
लोचन ऐंचो रही अरिसौहैं । तानि करी भृकुटी सरिसौहैं ।
नैमिकु पीय बियोग न भावै । जानि यहै नहि बोल सुनावै ॥७॥

दोहा

भूपति ढिग ते नेक टरि, गई सखी के पास ।
कुमुदनि तजि कमलनि मिली, ज्यों कमला सबिलास ॥८॥
करि किरिया परभात की, सखो रोंकि निज पानि ।
पाछे सों दमयति के, मूदिं लिये दग आनि ॥९॥
हँसन लगीं सहचरि सबै, देखिहि नयन दुराइ ।
मानौ मापति लोयननि, कर परसति फैलाइ ॥१०॥

तोटक

जिय जानत हैं यह तो सखियाँ । एक ऐंचि छुड़ावत हैं अखियाँ ।
परसे सुख सो नल जानि लई । रहि नारि मनावति मौन मई ॥११॥

[नल बचन]

तारक

मृगलोचनि ! योग नहीं तुम को है ।
निज दासहिं ओर लखो सरिसोहै ॥
जेहि की किरपा तुमको हम पायो ।
तपसो तुमको नहि क्यों मन भायो ॥१२॥
भरि रैनि करी हम सेवकताई ।
नहि न्हाइ करी बिनती मन भाई ॥
यहि ते अपराध भई रिस तेरे ।
अब बंदति है पद पंकज तेरे ॥१३॥

पियके कर पाँयन ओर निहारे।
दमयति सो दूरिहि ते भिझकारे॥
सर छोड़ि कटाछन के चल पैनें।
डरपाइ दयो करि नयन तनैने॥१४॥
हिय भेदि कटाछन सों बस ह्वै के।
नल बोलि उठ्यो तियके पग छ्वै के॥
तुम्र दौरति हैं अँखियाँ हरिनी सो।
श्रुति कूपन के भय सों उलटी सी॥१५॥
रिसहूँ मिस हौ तुम मो उर प्यारी।
सियरावति कौलन सूर उज्यारी॥
नव मोतिन की समता द्युतिवारे।
सुखदायक आखर बैन तिहारे॥१६॥

सोरठा

तेरी बानि पियूष, कढ़ी छीरनिधि ते मिलित।
हरति आव रिस भूख, दुग्ध बिन्दु मुसक्यात नित॥१७॥

दोहा

उदयाचल पूरन ससी, उदित चंद्रिका साथ।
बैठ्यो नल पर्य्यंक पै, गहे प्रिया को हाथ॥१८॥

लक्ष्मीधर

अंग में अंग वाके समोवै हँसै। दूरिकै के वियोगै बढ़ावै रसै।
गोद लै बारही बार चूमै मुखै। भानु ज्यों कौल त्यों चित्त पावै सुखै॥१९॥
बोलि लीन्ही कला नाम प्यारी सखी। आप सोंहैं खरी कै कृपा सों लखी।
रूप औ बैस में अप्सरी यच्छनी। नर्म की केलि लीला करी साच्छिनी॥२०॥

सोरठा

सुनहि कले! मृगनैनि, रोष भरी तेरी सखी।
रँगी खेलि रँग ऐनि, नहि करुना हम पै करै॥२१॥

तोटक

रसके परिरंभन दै रजनी । पति मोल लयो हम तौ सजनी ।
नित ही तुम सों यह बात कहै । सब झूठ भई न सदा निबहै ॥२२॥
नल छोड़ि न और बसै मन में । रुचि पूरि रही तेहि के तनमें ।
यहिके हिय को परतीति नई । नव योवन सों विपरीत भई ॥२३॥

मौक्तिक दाम

नयो मुख कमल बिलोचन लाल । लखै इत को करि दीठि कराल ।
लख्यो तब मोहि करयो जब दूत । यही सूधि भूल गई इक सून ॥२४॥
अलीन सुनावति बैन पुनीत । हमै लखि ठानति मौन बिनीत ।
सखीन बुलावती नाम पुकारि । न लेति न लेति हमैं निरधारि ॥२५॥
उरोज रहे उर मंडित पीन । कठोर भई छतियाँ दै-हीन ।
गयो रुकि चित्त रह्यो नहि ठौर । धरै हमको कित लै सिरमौर ॥२६॥

सोरठा

देत उराहन भूप, नरम केलि लीला नग्म ।
बोली बैन अनूप, कला कलरधर की कला ॥२७॥

[कला सखी बचन]

सवैया

साँच बिचारत हो पुहुमीपति ऐसे दुहून की प्रीति नई है ।
पाछिली प्रीति बड़ी हमसों यहि ते हम हो महँ रगरई है ॥
मैन के तंत्रनि मंत्रनिके मत जानत हो मति मोदमई है ।
नौल बहू रति को पति तीछन ज्यों तरवारि कि धार भई है ॥२८॥

प्रद्धटिका

मा सत्य बचन तुम सुर समान । तेहि भाँति चतुर रानी सुजान ।
धरि मन्मथ कैसो रूप खेत । तुम पूरि रहे हिय के निकेत ॥२९॥
तुम माँह चित्त चिहुट्यो निदान । नहिं ऐंचत आवै कढ़त प्रान ।
यह राज घूरि ताते रिसाति । दग मोरि छोर सों लखति जाति ॥३०॥

मनहंस

जब ते लखे तुम मैन चचल कोर सों ।
पुतरीन मों मिलिकै बसे तुम ओर सों ॥
मम बैन पै परतीति जो नहि होति है ।
लखिये विलोचन आइ आपुन ज्योति है ॥३१॥

दोहा

निज कुच कुंकुम रावरे, हिय में देति लगाइ ।
कहे देत अनुराग निज, है तोमें यहि भाइ ॥३२॥

तोटक

जब ते तुम आनि बसे मन मो । परिपूरि रहे सबही तनमो ।
कुच दो हिय मो न समाइ सकै । छतियों मग बाहेर को लखकै ॥३३॥
यति भाँति कला कल बैन कहे । दृग भूपति के मुसक्याइ रहे ।
रमनी पर बूझतु है निजु कै । चिबुकै गहि आनन उन्नतु कै ॥३४॥
पियके करसों मुख मोहन है । युत पकज सों ससि सोहत है ।
बहुरौ नरनाह कह्यो हँसिकै । सखियाँ हरखी सुनतै रसिकै ॥३५॥

[नल बचन]

यहि के मुखको ससि मित्रभयो । अरु बासर ताहि निकारि दयो ।
लखि कौलन में समता सिगरी । तिन में कमला कुल आनि भरी ॥३६॥

दोहा

अधर दसत रस रंग में, मो पै योग न रोष ।
कीर बिंबफल छत करत, ताहि देत कहुँ दोष ॥३७॥
पद अंकुश कुच कुम्भ को, लषमी लई चुराइ ।
तिन्है पीडिकै भूप हो, साजो क्यों न सजाइ ॥३८॥

संयुत

मृदु कद ओढनि को दसै । अपराध मो मुखमों बसै ।
सिर को कहा बलि पापुहै । पग छूवै सकै न सो तापु है ॥३९॥

यहि बूझि तै करुना भरी । तकसीर को हम सों परी ।
जेहि ते न बोलत चाइ सों । बर भौंह ऐंठति भाइ सों ॥४०॥

सोरठा

कान अपनो लाइ, दमयंति के बदन ढिग ।
छलसों सुमुख लगाइ, दमयंति के कान सों ॥४१॥
तब बोली मुसक्याइ, कला मनोज कलावती ।
तिरछे नैन चलाइ, दमयती सों सरिस होइ ॥४२॥

[कला बचन]

लीला

मैन मत्रन की कला हम ही पढ़ाईं सोधि ।
भाँति भाँतिन सों सिखाइ दई तबै बुधि बोधि ॥४३॥
ते सबै दमयन्ति तैं हिय ते दई बिसराइ ।
तैं करयो विपरीति दपतिभाव यों उलटाइ ॥४४॥
बैन यों सुनि के कला के मौन देति हुँकार ।
ऐंचि कौलु दयो तहो सखि सों झकी बहुबार ॥४५॥

[सखी बचन नल प्रति]

सोरठा

महाराज नलराज, मैं बिनती बहुतै करी ।
भई अधिक इतराज, दई कौल को ऐंचि कै ॥४६॥

लीला

मोहि बूझत तैं गन्यो नल कौन चिह्न न पाइ ।
रूप कै नल को चल्यो छल गेहु है सुरराइ ॥
स्वर नदी जलजात लै सुरलोक ते इत आइ ।
मोहि चाहतु है छल्यो करि नेह के सब भाइ ॥४७॥
हो गयो जब काम मोहित ह्वै अहल्या तीर ।
स्वाँग कुकुट को करयो तब बुद्धि बचक बीर ॥

यों भयो दमयति को भ्रम इंद्र तुम को जानि।
साँचु हौ नल देहु तो परछन्न चिह्न बखानि ॥४८॥

शशिवदना

यहि कहि बानी। चुपकि सयानी॥
नरपति बोल्यो। अमिरतु घोल्यो ॥४९॥

[नल बचन]

सोरठा

प्रेम पियारी रानि, निज मन मे किन सुधि करै।
मै बरनों पहिचानि, अपनी तेरी आगिली ॥५०॥

सवैया

लाज भरी उर सों थहरी जब वा निसि केलिकला बिस्तारी।
आधिक ही रस रग समै हम तोहि दयो तजि कै मनुहारी॥
नेकु वियोग लह्या न परै जब मानु करै कबहूँ रुचिवारी।
सो सुधि भूलि गई निज कै वह देखत ही तसबीर हमारी ॥५१॥

दोहा

सद नख छुत्त तो कुचन के उपटे मो उर आइ।
सुधि करि मै हँसि के कह्यो, दीन्हे सखिन बनाइ ॥५२॥

सवैया

खेल मे ही सखियान के सग तहाँ हम ये कछु रोष किह्यो।
योचक ह्वै सब के ढिग हौ रपट्यो मिसु कै तुअ पाइ परयो॥
वा दिन हौ जब आइ गयो रति लालच सों ललचातु खरयो।
तैं परिहास सज्यो सजनी मुख चूमि भुजा गहि अक भरयो ॥५३॥

दोहा

अधरनि मे अधरनि मिलै, दीन्ही बिरी खवाइ।
मति भूलै मानिनि! जु हो, जानति हौ परि पाइ ॥५४॥

सवैया

लोचन फेरि करयो बदलो निसि खेत करोट रहे मिलि सौंहे ।
नेकु वियोग सह्यो न गयो गुरु लोग रिसाइ चढ़ावत भौंहे ॥
माँगत मोहि बिरी कर सों कर लागत भाजि गई अलगौंहे ।
सो इक बार सबै बिसरी जब सों इक बार करी हम सौंहें ॥२५॥

चौपाई

प्रथम सुरत में ही कुम्हलाइ । बार बार रति सही न जाय ॥
मै तब तोंहि उराहन दयो । सो बलि भूलि भलोपन लयो ॥२६॥
झूठ बचन मे रस सों रुसी । चली सखी न संग को रुसी ।
मोहिं देखि आगे रस पगी । सुमिर वहै तृन तोरन लगी ॥२७॥

सोरठा

चिबुक साँवरो बिन्दु, प्रतिबिम्बित मुख हार में ।
मनौ नखत में इन्दु, सुधि करि प्यारी सुरति स्रम ॥२८॥

सरसी

सुधि करि सरद कोकनद लोचनि बिलसित बिपिन बिहार ।
चल दल को दलु टूटि परयो महि लागत पवन झुकार ॥२९॥

सोरठा

ऐसी भाँति बखानि, सकल भेद भूपति कहे ।
दमयति सकुचानि, मूँदि रही सखि के स्रवन ॥३०॥

दोहा

नयन कमल की गति हतै, जानि कान की बानि ।
राज रानि पीड़ति तिन्है, गहे कोकनद पानि ॥३१॥

हरिगीत

यहि लखत केलि बिलास तिय के हाँस सों पिय मुख लसै ।
जनु सरग नवल प्रवाल के दल दुग्ध की लहरी रसै ॥

नहि रहसि भेदन सों विदित सखियों सबै बिहँसैं खरी ।
जनु पुहुप वर्षे हर्ष हिय महि अवतरो नभ सों परी ॥६२॥

सोरठा

नल मुख हाँस उदोत, अली हँसी सोहन लगी ।
प्रगट सुधाधर होत, कुमुद पाँति जैसे खिलै ॥६३॥
पहिचान्यो सुर हाँस, सखी पत्त निज पाइकै ।
अबला लै बलपास, कला विज्ञ बोली कला ॥६४॥

[कला सखी बचन]

सोरठा

अहे रानि ! गुनखानि, नेक आइ इत हस गति ।
पिय मुख मधु रस सानि, सुनि सुंदरि ! सुन्दर बचन ॥६५॥

सवैया

पीछे खरी बहराइ सुनै पियकी बतियाँ छतियाँ सुखदेनी ।
भूपति के सिरपेंच मनीन भई प्रतिबिंब सरोरुहनैनी ॥
जानि गई जिय भाव कला चित चावभरी चितवै करि सैनी ।
आँखिन के बिन साखिन हूँ लहि हेत करै अनुमा मतिपैनी ॥६६॥

प्रद्धटिका

मम स्रवन अभूषन मनि कठोर । तुअ हाथन में सखि गड़त कोर ।
निज पट्टरानि कर ऐंचि लेहि । मैं करत आप सों अर्ज येहि ॥६७॥
नलराज कह्यो सुनि रानि रानि । निफल अयास तजि स्रवन पानि ।
तब तुरत कलाकर दिये झारि । दमयति गई तजि सानुपार ॥६८॥
तब कला सखी चलि गई डोलि । दुरि नेहमजरी लई बोलि ।
सुनि दोउन के सखि रहस बैन । जेहि भाँति भये भरि रैन सैन ॥६९॥

दोहा

मैं तोसों बरनन करयो, अपनी जानी बात ।
तै हूँ कहि जो कछु लही, सखी रही अलसात ॥७०॥

मौक्तिकदाम

कही उनहू अनजान बात । भये तब दंपति कंपित गात ।
कह्यो तब भूपति बोलि कलाहि । लई पुनि नेह लताहि सराहि ॥७१॥

[नल बचन]

कहौ तुम झूठ सिख्यो केहि ठाम । दुहून सिखी मति मोहन काम ।

[नेहमञ्जरी सखी बचन]

कहा बिनही ठिक देत कलंक । सखी नहिं झूठ कहैं यक अंक ॥७२॥
प्रिया मिलि आपु ठगौ सब आलि । न योग हमै तुमसों झूठ चालि ।
कहै लगि कानन कानन बैन । हँसै करि अद्भुत सो चित चैन ॥७३॥

[कला सखी बचन]

दमयति हमै जनि लावहि दोख। करै बिन काज कहा बलि रोख ।
कहैं हम बात छिपाइ निदान । सुनै जेहि मोंह द्वितीय न कान ॥७४॥

[नल बचन]

लखी मृगलोचनि आलि तुम्हार । सबै छल साहस की अनुहारि ।
करै इनको जनि चित बिस्वास । सुनै सखियों कुहकैं कल हाँस ॥७५॥

दोहा

हँसगवनि ! निज भवन में, आवन इन्हैं न देहि ।
दुर बिनीत कत मीत है, चरचि चित्त चित लेहि ॥७६॥

चुलिआल

दमयंती सिर नाइकै सैन करी सकुचाइ सुलच्छन ।
जानि गयो भूपाल सब भेद रह्यो मुसक्याइ ततच्छन ॥७७॥

मालाधर

बरुन बरसों तहीं कर समेटि छींटै दई ।
बसन सब भीजि कै लखत आश्चर्यैं भई ॥
भिजतु नमि दीठि को द्युति उरोज देखो परै ।
दीपति जनु दामिनि युगल तोय सों अबरै ॥७८॥

इन्दु

जावतु जगतु बसन को अबरु नामु ।
नखत सलिल कन सुदर नित बिसरामु ।।७९।।

श्लोक छन्द

देखि देह दसा दोऊ लाज सों बहुतै भरी ।
आइ भीतर ते तहीं दौरि बाहर को टरी ।।८०।।
देखि के निकसी दोऊ ओर जे सखियाँ हुती ।
ते सबै तुरतै दुरीं बाहरी ह्वै इक सुती ।।८१।।

प्रद्धटिका

दमयन्ती करी करसैन आइ । तब लई दुवो सखियाँ बोलाइ ।।
वै बोलीं बाहर ते पुकारि । किन देहु इन्है अजहूँ निकारि ।।८२।।

दोहा

भूप दरीची बीच ह्वै, बोल्यो आनन खोलि ।
बाहर ही सब सहचरी, करी दीठि दग डोलि ।।८३।।

[नल बचन]

त्रिभगी

जे जे हम बातैं रस रस सातैं करी सुहातैं रजनि जगे ।
ते इन सुनि लीन्ही अब सुधि कीन्ही कहि दीन्ही हिय प्रेम पगे ।
इनकी रतिपति की और सुरति की गति निज निज नैननि हम देखी ॥
तेहि पै कै ढीठैं भई बसीठैं छल ईठैं यह मति लेखी ।।८४।।

सोरठा

जिन के चरित पुनीत, कीरति सों उज्ज्वल दिपै ।
दूख न देत अभीत, मृषाभखी मैले करत ।।८५।।

[सखी बचन]

हम न करैं कछु दोष, करैं न चरचा रावरी ।
जा लगि आनत रोष, ये हम जाती बाहरी ।।८६।।

तोमर

लजि कै रही दमयन्ति । पिय पेखि ताहि इकंति ।
मुख चूमि लै उर लाइ । नव नेह सों समुझाइ ॥८७॥
गहि पीन उच्च उरोज । कर नीवि ऐंचत चोज ।
नख अंक सोहत लाल । सिव सीस किंसुक माल ॥८८॥

[नल बचन]

दोहा

कुच नितंब ऊरु बिमल, मिलत तिहारो बास ।
उज्जवल गुन मैं सुभ दसा, ताको लहत प्रकास ॥८९॥
सहि न सकै मन्मथ व्यथा, तनु कोमल चल नैनि ।
हहा पाँइ तेरो परौं, तन मन वारौं ऐनि ॥९०॥

सोरठा

पति की हठ गति जानि, झमकि उठी पर्य्यंक ते ।
नेवर झनक सुहानि, चली अली की ओर को ॥९१॥
कुच नितंब के भार, पग आगे नहिं परि सकै ।
पाछे बिथुरत बार, टूटी कटि लचकी परै ॥९२॥

तोटक

बल पै चलि ताहि गह्यो न गयो । लहि सात्विकि थंभ समान भयो ॥
दमयंति लजाइ सखी गन मे । नहिं जाइ रहै न ससै मन में ॥९३॥

गीत

तब बंदि सुंदर द्वार पै नलराज सों बिनती करी ।
दिन मध्य आवत जानि कै गुन माल भावत सों भरी ॥

[बंदिबधू बचन]

जै जीव श्री नल भूमिवासव मध्य बासर है भयो ।
जल न्हाय के छितियान चाहत गऊ पूजन को ठयो ॥९४॥

जल स्वेत सुद्ध सुगंध सुन्दर केस पूजनि रावरे।
छहरात होत मनौ मिले यमुना तरंगनि साँवरे॥
जगसीस पै दिननाह तापतु आपको परिताप जू।
सिव पूजि दान विधान सयुत आनिये उरजापु जू॥१५॥
सुनि बैन बंदिन के तहाँ नल भूमि नायक चाइ सों।
जेहि ओर प्रानप्रिया गई तेहि ओर हेरत भाइ सों॥
गिरिराज जापति जापको हित मानि आनँद सों भर्यो।
निज राज भौन गयो चहै पर्य्यंक तै उठि कै खर्यो॥१६॥

इतिश्रीमत्प्रचंडदोर्दंड प्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब
अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ
नल-विलासो नाम एकविंशतितमस्सर्ग.।



द्वाविंश सर्ग

वासरकृत्य-वर्णन

दोहा

सर्ग बीसद्वै में कथा, बरनन बासर कृत्य ।
पूजन हरिहर देव को, बंदन परिजन भृत्य ॥

सोरठा

उदयत नल महिइंद, खंड सातयें सौंध पै ।
जोरति करनि नरिंद, सौंचे कर दाता भये ॥१॥

सवैया

चीन के चीर नवीनननि सों गिलमै गुलजार हजार बिछाई ।
पै नल के तरवा तल के सम ह्वै न सकै कुलि कोमलताई ॥
झुंड जुरे सिगरे नरनायक मंहि प्रनाम करैं बहुधाई ।
सीस अभूषन माल मिली सुगली जनु कौल कलीन सों छाई ॥२॥

मनहरन

निज निज देसनि के रतन बिसेष पेस,
करत नरेस भेट दूरि सिरनाइ कै ।
बोलत पुकार चोबदार हेमछरीवार,
बारन तुरंग रथ राजत बनाइ कै ।
काहू ओर सबै कहँ बिहसत नयन,
काहू सों कहत बैन मृदुल सुहाइ कै ।
दौरि दौरि सजत असीस तसलीम लेई,
धन्य ह्वै धरा में पावैं भोग भाग पाइ कै ॥३॥

दोहा

निज निज लायक थान थित, नृप चितवत तेहि ओर।
पूजन सारद चंद ज्यों, ऊरध नयन चकोर ॥४॥
करि कर लोचन भौंह की, सैन भेंट धरनीस।
लेत एक सों और को, वहै करत बकसीस ॥५॥

चौपाई

तिनसों भूप कुसल हँसि बूझी। देस रीति पुनि प्रेम अरुझी।
राग रंग रन चरचा खरी। भैमीपति तिन सों ते करी ॥६॥
ते अति मुदित भये नरनाह। थिति आपनी गनी जग माह।
बार बार चरनन सिर धारैं। करैं अरज निज भवन सिधारैं ॥७॥
नल तिनके पूजे अभिलाख। झलकति दई खिलति सतलाख।
हरखि गये ते भूप अवास। नृप मज्जन को सज्यो बिलास ॥८॥

तोमर

चहुँ ओर ते नव नारि। घट पूरि हाटक वारि।
छुटि फैलि जात सुबास। अलि पुंज गुंज बिलास ॥९॥
मृगमेद केसरि सानि। उबटै नृपै मृदु पानि।
दधि और तेल सुगंध। सिर मीजि केस निबंध ॥१०॥

सोरठा

भूभृत बन तप कीन्ह, ताहि न्हवावत सरस सुचि।
जलधर घट भरि लीन्ह, तीरथ जल लहरी बिमल ॥११॥

पद्धटिका

रचि स्वर्ण रतन चौकी अनूप। ता उपर राजत न्हात भूप।
बहु पढ़त राग बिनती बनाइ। कर जोरि चित्त थिर माथ नाइ ॥१२॥

सवैया

हे सुरवाहिनि ! दाहिनि दीननि तव पगलीन जो दास कहावै।
द्वार देवे तिहि के सिव के सब बासव तौ निज जान न पावै ॥

जान पुरी पुरुषोत्तम की बिलसात तहाँ सुकहा कहि आवै ।
गूँदै सची सँग के हरवा तरवा यमलोकन को दिखरावै ॥१३॥

कवित्त

और को कपूत कूर कायर कलंक युत,
जाकी प्रीति रीति पर दोष चरचा की सों ।
काल दंड दानको गुमान जु बुलायो ताहि
ताके किंकरनि आनि गह्यो सिर ताकी सों ॥
गग की तरग सों कहूँ ते कोऊ अग मिल्यो,
देव अगननि सों उठायो लै चलाकी सों ।
सुरपुर जाइ बैठ्यो बोलै सतराइ देखौ,
पायन दबावै दुलहिन मघ वा की सों ॥१४॥

प्रद्धटिका

कर नरम तऊ बिधि करम जानि । तब हरित पवित्रा धरत पानि ।
जनु प्रिया बिरह तन अनल झार । तेहि की अपार ये धूमधार ॥१५॥

हरिगीत

जब करन आचमनीय को जल गग को कर सौ लयो ।
तहँ चुलक निर्मल में झलक नभ लोक प्रतिबिंबित भयो ॥१६॥
जनु सकल भूतल के पदारथ दान मे नल हैं दयो ।
.... ॥

सोरठा

दमयंतिहि अलगाइ, निजपति पायो भूमि तिय ।
अग अंग लपटाइ, गई भस्म मिस यज्ञकी ॥१७॥
साधत प्रानायाम, कटि लौं ठाढ़े सलिल में ।
मनौ बरुन के धाम, कमल मुँदे द्वै ससि खुल्यो ॥१८॥
अभ्र बिसद द्युति तार, धोती पहिरी मार छबि ।
दस दिसि बसन उदार, हरकी करि जनु ईरखा ॥१९॥

सयुत

दमयंति के ढिग को चलै। चित की लही गति चंचलै।
उरु उत्तरो परिधान सों। नृप ताहि रोकत ज्ञान सों ॥२०॥
घटवारि के कुच पीन हैं। सिर दर्भ केस नवीन हैं।
सब अंग सीत करै तिया। नल को भजै जल की त्रिया ॥२१॥

उपेन्द्रवज्रा

करे उपस्थान दिनेसजू के। अखंड धारा जल अर्घहू के।
जपै महामन्त्रन देव गाये। सरोज श्रीखंड मिले चढ़ाये ॥२२॥

दोहा

फटिक माल कर में लसै, झलझलात छबि जासु।
बीज बरन बस भगतिरस, जनु कर करत निवासु ॥२३॥

लीला

पानि पंकज पौर में जब देव तर्पन युक्ति।
पितर तर्पन तिल मिलति तिल हाथ में पुनरुक्ति ॥
धाममें निज त्यों लसै प्रभु अभुपति सुख धाम।
चीरसागर में रमै जनु देव बासव नाम ॥२४॥

दोहा

न्हाइ बिमल धोती पहिरि, छहरि चाँदनी चँदु।
पूजा मंदिर में गयो, आसन लयो अमंदु ॥२५॥

द्वितीय झूलना

दंडी ब्रती ऋषिराज राजत चारु आसन साजि।
जहँ दिव्य धूप सुगंध बँधित भौर गुंजत राजि ॥
चहुँ ओर फूलन सों भरीं फल झूरि बंदनवारि।
नसि अंधकार गयो हजारन दीप राखत बारि ॥२६॥
मुकुतान के बिछुरे मनौ निजदेह पावक दाहि।
धरि धार केसरि सों सिसी भरि रूप रूप सराहि ॥

मनि साँवरे चकरे कटोरनि माँह चन्दन पंक।
जनु राहु के मुख में पर्यो घुरिकै संसक संसक ॥२७॥
कस्तूरिका चय सों भरे मय रजत सुदर थार।
छिति इंदु मण्डल अवतरे उर कृष्णसार अपार ॥
नवमालती कुल माल पर्वत फूल राजत ढेर।
गिरिदेव देव निवास को तेहि तूल है बहु फेर ॥२८॥

चौपाई

भाँति भाँति नैवेद्य बनाये। उज्जवल सुचि चीरन सों छाये।
भरी भूमि तिल परै न हेरि। उत्तम कामिनि लाज घनेरि ॥२६॥
प्रथम भूमिपति पूजत भानु। जाको वेद करै गुनगानु।
भक्ति भान देखत संपन्न। सानुरक्ति रवि भये प्रसन्न ॥३०॥
माल करी रचि चदन लाल। तासों जपतु भानु मनु जाल।
मानौ चहत अधिक अरुनाई। करै तासु कर सेवकताई ॥३१॥

दोहा

कनक कुसुम सों पूजि सिव, सोहत अति अभिराम।
सायक दयो चढ़ाइ जनु, मानि हारि हिय काम ॥३२॥

मनहंस

नव नाग केसरि फूल देव चढ़ाइ कै।
भव भाल होत कपाल भूषन भाइ कै ॥
पुनि नील नीरज कठ माल मिलाइ कै।
तब ह्वै गये सिव नीलकठ बनाइ कै ॥३३॥

दोहा

कलुष हरन करिहैं कृपा, मर्दन मयन अनूप।
सुभ सौरभ आगे रची, भूप कामसर धूप ॥३४॥

सवैया

दमयंति तियें बिछुरो न परै न पियें कल नेक परै छतिया में।
सिव सीस कलानिधि सों सकुचै निहचै न रहै गति औ मति या में ॥
मिसु कै उर ध्यान धरो हरको धरको हियरा फरको अति यामें।
तब मूँदि रह्यो अखियाँ पुहुमीपति पूरि रह्यो बतिया बतिया में ॥३५॥

सोरठा

पर्‍यो दंडवत पाँइ, मनौ मदन आयो सरन।
दीने बान चढ़ाइ, कमल कोरि सिव चरन पै ॥३६॥

पद्धटिका

नृप जपन लग्यो सत रुद्र जाप। जेहि हीन होत जगती बिलाप।
कर लसत अच्छ अवली बिसाल। नव पल्लव मे जनु भौर माल ॥३७॥

तारक

पुरुषोत्तम को पुनि पूजन कीन्हो। पढ़ि पूरुष सूकत सयम लीन्हो।
जपि द्वादस अच्छर मंत्र नवीनो। हरि द्वादस मूरति को चित्त चीनो ॥३८॥

लक्ष्मीधर

मल्लिका फूल की दीह माला गुही। आसनस्थान में छापि दीन्ही जुदी ॥
भक्ति के भाव सों विष्णुजू सों रस्यो। नाग राजा मनौ आइ छाँई बस्यो ॥३९॥

प्रमाणिका

सरोजनिल जोरिकै। हरा गरे निहोरिकै।
चढ़ाई भूप जो दयो। श्रिया कटाच्छ सो भयो ॥४०॥

गीत

सब दिव्य सुद्ध सुगंध लेपित बारि दीप कपूर सों।
नव स्वर्ण केतक पुंडरीक चढ़ाइ देत अदूर सों ॥
करि अन्न पक्क पियूष पोषित स्वाद देत निवेद है।
बहु भाँति भूपति धूपसों जेहि देखि नासत खेद है ॥४१॥

मौक्तिकदाम

अमोल मनीन रचे बहु दाम । सबै अँग अँग किये अभिराम ।
लसै हरिजू थिर आसन स्वेत । मनौ पयसागर माँह निकेत ॥४२॥
कर्यो परनाम गयो लचि माथ । गही पुष्पाञ्जलि श्री नृप हाथ ।
धरी सिरपै सुख सोभ उमंग । महेश्वर मौलि बिराजत गंग ॥४३॥

मनमोहन

जलनिधि सुता हिय में बसति । हरि की सुरति तेहि में लसति ।
तेहि उच्च थल सरस्वति रहति । अनुराग कंठहि में बहति ॥४४॥

तोटक

तेहि ते धन पूजन योग नहीं । समुझाइ दियो बुध लोगनहीं ।
मुकुतावलि सीस रुदावलिकै । हरिकी बिनती बिनयी चलिकै ॥४५॥

[नल बचन]

लीला

रावरी महिमा न आवति बैन औ मन माहि ।
जो कछू कहि नाम टेरतु योग जानतु नाहि ॥
हौ करौ परलाप या परि पाँप पंकजनैन ।
सो छमा करिये कृपानिधि जानिये जड़ बैन ॥४६॥

सोरठा

हौं जड़ जीव अज्ञान, चहतु बड़ाई रावरी ।
जैसे भासत भान, तम ताको प्रगटन चहै ॥४७॥

चर्चरी

जो न आवत बैन में मनमें न लागत ध्यान सों ।
तौ हमै सुख लाभ होत बिचारि देखत ज्ञान सों ॥
मेघ ज्यों नियरात है नहि कोटि चातक टेर सों ।
देखि जात जुड़ात लोचन प्यासनास सबेरसों ॥४८॥

सवैया

मीन स्वरूप धरयो छल को छलको लगि सागर पूछतरारे।
छीरतरंगनि सों मिलि कै सुरगग भई अवदान निहारे॥
मंडित कै छिति मंडल को निज पीठि अखंड धरी निरधारे।
मंदर के किन चक्र बिराजत साजत कच्छप रूप बिचारे॥४९॥

मनहरन

चारौ खुर खूँदि खूँदि खनि कै अवनि तल,
जलधि बनाये चारि अतुल अपार हैं।
एक डाढ आई दै उठाई महि कौल रूप,
ससि की कला पै ससि समता बिचार है॥
दानव गहन सिंह अरध मनुज तनु,
विकट कुटिल सदा निपट करार है।
अंकुस नखन ऐंचि हरिन कस्यिपु हने,
अन्त डारि ऐसो तोरि छारि लीन्ही निरधार है॥५०॥

सवैया

आवत ही पुरके धुरते सुमिले बहु बालक घेरि लियो।
बावन जानि महा मन कौतुक चेरिन भीतर टेरि लियो॥
बलिराज बधू तुलसी कन दान को चून जबै कर फेरि लियो।
पावत ही पग तीनि के भूमिहि तीनहु लोकहि नापि लियो॥५१॥
जिन बाहुन सों उपजे जग छत्रिय लोकन की रचना जब कीनी।
तिनहीं सबते तिन तूल हने निरमूल उखारि सबै छिति छीनी॥
पसुल भामिनि भूरिन की नव खंड करी द्विज देव अधीनी।
अर्जुन के भुज दंडनि खंडित कीरति राम रिसीस्वर लीनी॥५२॥

मनहरन

लीनो अवतार अज तनुज ते महाराज,
दुखन तुम्है न खर दूषन के अरि हौं।

ज्ञान हौ न चहौ मोहु याऊ कहै यासों लखौ,
रावन चमू ज्यों सब ओर रहे भरिहौ ॥
सुयस की रासि तीनौ भवन प्रकासिये,
निकासि दीनो सीता लोकबादनि सों डरहौ ।
विश्रवा सों भई सूपनेखा करी ताहि रूप,
पितर समान ताके काननि कतरिहौं ॥२३॥
दारिद हरति मेरे वारिद से बसुदानि,
चारौ भुजदंड मार्तंड तेज चटके ।
अलप कलप तरु जरसों उखारयो निज,
ईर्षा सों पागे अनुरागे दीन रटके ॥
जीत के निधान उपधान सियरानी जू के,
बानी जू के बिमल बिहारक निकटके ।
जय अभिराम तन छबि कोटि काम वारौ,
भादौं केरे श्याम घन यादव कपट के ॥२४॥
करन सकति रन बिफल करन काज,
अर्जुन रथ साजि सारथी सुहाये हौ ।
पारथ कृतारथ कै भारथ जिताये जोर,
सूर सुत सूर को हराये बेद गाये हौ ॥
बाम बिहँसत नयन दाहिनी दुखित ऐन,
ऐसो अद्भुत गति सुमति बताये हौ ।
करत हौ सेस बास जगत असेस बास,
दैत्यन को त्रास देत देवन को भाये हौ ॥२५॥
धरत हौ धरनि धरम हेत धनि धनि,
धीरज धुरधर सहसफनवारे हौ ।
माधुरी पियत मधु साधु रीति साधत कै,
वाधित करत भव बाधनि उधारे हौ ॥

मूसल सों कुसल सजत तीनौ लोकन की,
सहल सहल यमुना के मद गारे हौ।
प्रबल प्रचारे दैत्य, अबल उबारे देत,
रोहिनी के प्यारे नीके नन्द के दुलारे हौ ॥२६॥

दोहा

2 एक रूप द्वै भेद बिनु, तीन कोटि नहि चार।
गावत पंच अधीश षट, हता वाण सार ॥२७॥

छप्पय

सुयस रूप तुम विष्णु जन्म जानत सों लीन्हो।
विष्णुज सा द्विज देव जगत में गौरव दीन्हो॥
सकल मलेछन कालहेतु करवाल भयंकर।
रुधिरकुंड महिमुड क्रुद्ध हरषे हिय सकर॥
इमि दुख दसा हरि धरनि की हरि दस विधि अवतार धरि।
कलि की सुरूप सुर भूप प्रभु, चित मल की गति पार करि ॥२८॥

स्वागता

राम भानु सुत सों हित मान्यो। इन्द्रपूत तुरतै हति आन्यो।
कृष्ण इन्द्र सुत के रखवारे। भान सुवन के खंडनवारे ॥२९॥
ज्यों त्रिबिक्रम भये तुम रुरे। तीनि लोक पदपंकज पूरे।
तीनि बार ताक्यो चित चीन्हा। जाम्बवन्त परदच्छिन कीन्हो ॥३०॥

छप्पय

लसत एक कर संख संखनिधि को नित दायक।
जलज सहसदल कहत बास जलजा के लायक॥
चक्र सराहत सक्र वक्र सिसुपाल विहंडन।
गदा अगद संसार दुरत गद दैयत खंडन॥
उर दिपत ललित बनमाल छबि मनौ बलित रुकिमनि भई।
नवनील जलद तनु साँवरो सदा रहौ हिय आनई ॥३१॥

बसत चरन तल गग जलज कर हिय चिंतामनि।
सागर सोवत तुम्हे मिले मानौ परिचय गनि॥
धर्म बीज कर सलिल सरित लच्मी उर राजै।
कामदेव फल फल्यो देत तुम मुक्ति समाजै॥
पुनि तीनि लोक तुव उदर में लखत मारकंडेय मुनि।
निज रूप और एकु हरि कै अति अद्भुत गति चित्त चुनि॥६२॥

सोरठा

नाम रावरो लेत, लीलाहू में नरकहू।
नरक भीति नहिं देत, वे इनकै भवसों भजै॥६३॥
नाम तिहारो राम, परम पतितपावन बिमल।
वहै एक अभिराम, लयो तीनि अवतार धरि॥६४॥

दोहा

भानु नयन सो तम हरौ, देखि दास की प्रीति।
बिधु लोचन सों लीजिये, तीनि ताप तन जीति॥६५॥

हरिगीत

मम चित्त है अति अल्प तो गुनरासि क्यों गहिकै सकै।
जिमि कनक मेरुहि पाइ निर्धन पोट हाटक की तकै॥
नहि करत हौ बिधि बेद कछु सब भाँति खेदन छोभसों।
मन चहत औ किरपा तिहारी निलज ह्वै अब पाप सों॥६६॥

सोरठा

प्रगट भये हरि आय, भक्ति भाव पूजा लई।
दै असीस सुख पाइ, तुरत गये निज धाम को॥६७॥

दोहा

देव पितर के काज सजि, बदि अती ऋषिराज।
द्विजन अनेकन दान दै, चल्यो निकेत समाज॥६८॥

सो जन परिजन साथ लै, भान ओज आकार ।
भोजन मंदिर में गयो, यांजन को बिस्तार ॥६९॥

मनहरन

एक ओर किन्नर भरत मत हित गान,
पंचम भरत तान करत तरेपि कै।
ठौर ठौर जगर मगर मनि दीपनि सों,
अगर सुबास है अगर धूप पेखि कै ॥
केसरि कपूर चूर चन्दन मिलाइ चारु,
चोवा लै चतुर चौका चाँदनी सों लेपि कै।
भोजन मलूल भारे भाजन जराउ तहाँ,
राजत धरा हैं छपाकर छबि छेपि कै ॥७०॥

सवैया

कोऊ सलोने कोऊ मधुरे तुरसाइन के सुरसाइन राचे ।
लेत सुबास छकैं नर किन्नर रंग भरे रसना बस नाचे ॥
कंचन थारन मे परसे सरसे रुचि सों पकवान अजाचे ।
सीतल नीर समेवत जेंवत भूप अमीर अमीरस सोंचे ॥७१॥

स्वागता

भूरि भूप मिलि भोजन कीन्हे । पानि धोइ सचि पानन दीन्हे ।
सेज भौन आयो रंग भीनो । रास रंग को कौतुक कीन्हो ॥७२॥

बसंततिलका

न्हाई सु पूजि सुर भीमसुता सयानी ।
पाछेहि भोजन किये नलराजरानी ॥
आई समीप पति के अति लाज कीनी ।
गावै नचैं अमर अप्सरिया नवीनी ॥७३॥
चंचुप्रभादलित बिंबफलानुरागी ।
पन्ना मई हरित पच्छन ज्योति जागी ॥

प्रद्धटिका

दमयति कपट कचुकि तिहारि । रतिराज राजधानी बिचारि ।
तुव नयन मीनध्वज दै सुधारि । तहँ भौहैं बाँधी बँदनवारि ॥८०॥

गीत

रावरी परप्रीति को लखि कौल रागनि सों रग्यो ।
मिलि बारुनी दिसि बाम सों सब रैनि चाहत है जग्यो ॥
सखियों सबै टरि जाहि बाहर चाइ जाहिर चातुरी ।
नखदत सों रन रँग जीतत मैन के उर आतुरी ॥८१॥
यहि भाँति केलि बिलास को सकु चोज सों तिरिया पढ़ी ।
मुसक्याइ नैनन ही अली इक एक ह्वै बाहर कढ़ी ॥
पिक कूँकि कूँकि तुहीं तुहीं करि आपु उक्ति बिलासकै ।
नृप ओर औ सुक ओर हेरति कमललोचन लालकै ॥८२॥

चचरी

बावली इक केलि सौध समीप दीपति सों रची ।
रतन हाटक बेलि बूटनि सों सिढी सब ही सची ॥
नय गये न अकास हेरत त्रास बासर के मुदे ।
कोक सोक समै भये बरजोर जोरन सों जुदे ॥८३॥

दोहा

बिछुरि रहत नहिं सहत सकि, तकि तिन की यहि रीति ।
रानी कुम्हलानी बदन, पिय सों कह्यो सप्रीति ॥८४॥

[रानी बचन]

मोदक

पंकजलोचन आव यहाँ लग । देखहु ये अब हीं बिछुरे खग ।
भेद्त हैं दुख सों जनमातुर । कौन इन्हैं लखि होत न आतुर ॥८५॥

दोहा

काल सहावै जो दसा, सोई सहै निदान।
युगल विहंगम जगत के, उदाहरन अनुमान ॥८६॥

कवित्त

सान के समान भानु मंडल बनायो कर,
चिनगी झरत सब ह्वीं सो भयो लालु है।
ऐंचत अरुन दाम भामरि परत जात,
तेज को तरल दंड मंडित बिसालु है॥
भेदन बहुत रथ चरन युगल खग,
करत अविधि विधि कुपित करालु है।
विरह कृसानु धूम मलिन महा सुकरयों,
बाढ़ि धरिबे को सांझ काल करवालु है ॥८७॥

दोहा

ससिबदनी मुख सों कढ़े, आसव बचन पियूख।
छैलु पियतु स्रवननि छक्यो, रस की रही न भूख ॥८७॥

[राजा बचन]

सोरठा

यह इनकी सति भाइ, तैं जैसी देखी दसा।
क्यों न सुमुखि बिलखाइ, करुना की तस्वीर तू ॥८६॥

सवैया

कै बिछुरे रमनी मन भावन चावन सों चित चाहत जीत्यो।
चापलता भकुटी कुटिलै करि रावरो ये सहसों बल चीत्यों॥
नावक की नलिका सम नासिका स्वासनि को सुभ सौरभ सीत्यो।
पौन के अच्छय बाननि सों रन रंग अनंग रहै नहि रीत्यो ॥६०॥

दोहा

तेरे सुबरन सों रह्यो, नहि सुबरन को नाम।
रूपराज राजत भयो, लाजत तनु अभिराम ॥११॥

छप्पय

मधुराई की लता खोदि के खेत लगावै।
बर्षे घन पीयूष अल्प पल्लव सरसावै ॥
दाख घोरि कै दूध सींचि कै अधिक बढ़ावै।
चद कला के फूल फूलि बहुतै मन भावै ॥
तहँ फलै कहूँ जब परम फल, मुक्ति मुक्ति जासों कहत।
तब अधर मधुर ये रावरे, छबिवारी उपमा लहत ॥१२॥

सवैया

भारती आइ बसी मुख में अरविन्दमई रसना तव कीनी।
ताही की बीन बजावन की उपजी यह रावरी बानि प्रवीनी ॥
ताही कि रंग बिहार कि बैठक ओंठन की रुचि है रँग भीनी।
ता हिय की मुक्तावलि है बलि ता रसना बलि मे उत दीनी ॥१३॥

मनहरन

मनमथ तीरथ तिहारी सुरसरि बानि,
ताही को पुलिन खाँड मिसरी बखानी है।
सलिल पियूख पूर पूरन रहत चोज,
चातुरी छिपत जलचर सरसानी है ॥
सोहत कनारे रतनारे रद छद दोऊ,
भौरनि सों कमल सुबास लै कै सानी है।
याही ते समूह सजि सेवत सकल द्विज,
जप को परम मन्त्र तप की निसानी है ॥१४॥
ऊरध अधर जपापुहुप की माल ताहि,
करत सरासन असम सर रावरो।

साँवल चिबुक बिंदु गुठो कै पनच कै कै,
रदन सरन आयो सरन उतावारो ।
बचन तिहारो साँचे निहचै धनुष धरै
वेद चातुरीन साजि सीखै चित चावरो ।
कोकिल मराल मोर सारिका कपोत भौर,
बिदित बघेरी थीव उदित उछावरो ॥१५॥

छप्पय

सो गँवारु सों चतुर पाति नहि बैठन पावै ।
काम बान की धार नेक तेहि ओर न धावै ॥
अधर कहैं मधु नाहि कहै तनु स्वरनु न मानै ।
बदन कहै नहिं इन्दु नाम कहि सुधा न जानै ॥
गजगौनि कोक युग सोक सों मति उदास मन को करै ।
हौ जातु जोहि अजलि बिनै राखौ रोकि दिवाकरै ॥१६॥

दोहा

सरसीरुह लोचन तुहूँ, सखियन के ढिग जाहि ।
हौं बाहर को जातु हौं, संध्या विधि निरबाहि ॥१७॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दंडप्रतापमार्तंड भूमंडलाखंडल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहितगुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ वासरकृत्य वर्णन नाम द्वाविंशतितमः सर्ग ।



त्रयोविंश सर्ग

चन्द्रोदय-वर्णन

दोहा

कथा सर्ग तेईस में, ससि को उदय बखान।
बरनन भूपति तिय करति, परिपूरन परमान॥

सोरठा

नृप सध्या बिधि बदि, राग बारुनी अधर रुचि।
मंदिर गयो अनन्दि, खड सॉतयें सौध पर॥१॥

चौपाई

सेज चाँदनी सी छबि छाई। बैठि तहाँ नल प्रिया बोलाई।
बैठारी तापै सनमानी। संध्या दई बिसेस बखानी॥२॥

[राजा बचन]

लीला

नयन सों करिये कृतारथ पासि की दिसि रानी।
धोइ जावक रंग सों सब अंग कुंकुम सानि॥
तुंग सैल अकास ते रबि सुङ्गसों ढुरकात।
चूर गौरिक साँझ ह्वै परिपूर धूर उड़ात॥३॥

द्रुतविलंबित

चरम भूधर भी लनि सों पल्यो। अरुनचूड दिवाकर है भल्यो।
सिर उठाय करै रव साँझ को। अरुन साजत पच्छिम माँझ को॥४॥

भुजगप्रयात

प्रतीहारिनी सी करै साँझ बासा । गहे सूर सोभामई हाथ आसा ।
निकारे दिनै देति है रोष कीन्हे । प्रवेसै भलीभाँति सों राति चीन्हे ॥५॥

मनहरन

महानट नचत निरखिकै सभानुराग,
साँझ कु-नटी सी पार्वती रूप चाहिकै ।
लसत अकास तन बिमल नखत गन,
रंग भरि अंगहार सजत सराहिकै ॥
हनत किरात कालु कलित कराल वेष,
दिवस दुरद पदुमक अवगाहिकै ।
ताहि की रुधिर धार करत पसारा साँझ,
तारागन रहे कुंभ मुक्ता निवाहिकै ॥६॥

सोरठा

रहे साँझ सों फूल, दसहू दिसिनि बिभाग सब ।
मानौ लाल दुकूल, गहे ब्याह को दिगबसन ॥७॥

सवैया

साँझ सराफ अकास भयो रबि हाटक को गुटिका छबि छायो ।
पच्छिम सैल कसौटी कर्यो तेहि माँह भली बिधि सों कसि लायो ॥
बचन को निहचै करि ता कहँ तोलन काज अमोल उठायो ।
तैहीं दये छिटकाइ बटा जनु तारन को गन देत दिखायो ॥८॥

सोरठा

पकि दाड़िम रबि बिम्ब, हरी साँझ याकी तुचा ।
काल चाबि बिधि निब, उगिलत तारा अस्थिगन ॥९॥

दोहा

साँझ समय ताँडव करन, चंडीपति गति लोल ।
नभ अखंड मंडित लसै, फटिक चटान अमोल ॥१०॥

प्रद्धटिका

निज बरनन के सुनतै लजाइ। जनु साँझ गई तुरतै बराइ।
नभ नखत दत तम रह्यो छाइ। तब कह्यो प्रिया सों निषधराइ ॥११॥
जब राम बान सधान कीन। उछर्यो उदन्व भय सों अधीन।
तब फैलि सख मुक्ता अपार। सो नाकलोक में चमत्कार ॥१२॥

दोहा

सुरसरि कूल कुलाय कुल, काक बिरह अकुलाइ।
आँसुन को धारा तजो, नभ तारा समुदाइ ॥१३॥
मदाकिनि के जतु जल, झलकत नभ तल पाइ।
झख कुलीर गोधा मकर, मिथुन मोद सरसाइ ॥१४॥

[रानी बचन]

सवैया

फूल्यो अकास दिखावति है यह योगिनि सी जिय यामिनि जागी।
मार मेरेहु जिवावति है अरु कौलन के हग बंधन पागी ॥
मोहन अजनि दै कुहकै कुहकै पिक मन्त्रनि सों अनुरागी।
सखन छत्रनि छत्र धरे पल नीलसरोरुह नैनन लागी ॥१५॥

[राजा बचन]

सोरठा

तम मिस सों इत चेतु, सची सौति दिसि ते बढ़ी।
टूटत बासर सेतु, ऐरावत को मदन को ॥१६॥

दोहा

राम सेतु रोमावली, दिसिपति बाहन रूप।
धावत तम देखत भजे, रवि के बाजि अनूप ॥१७॥

चद्रमाला

कर सहस्र में लै उठाइ रवि ऊरध नभ करि राख्यो।
योहि ते नियराइ गयो तम रवि अथवत मन माख्यो ॥

उलट्यो गगन कराहु कर्‍यो बिधि इन दीपक अधबार्‍यो।
अधकार छल सों छिति उपर फैल्यो कज्जल भार्‍यो ॥१८॥

[रानी बचन]

मनमोहन

मृगमेद तन तम में दिपति। दुरि नील अंबर में छिपति।
अभिसारिका गति सों चलति। यहि रैनि त्यों तुमको छलति ॥१९॥

चौपाई

जग लोचन गो नाम कहावै। सूर किरनि पुनि गोप दुपावै।
मिलै लई हरिकै रवि साँझ। अंधकार छायो जग माँझ॥२०॥

[राजा बचन]

दोहा

तम के तत्त्व बिचार में, बैसैसिक मत सार।
तेहि उलुक दरसन कहत, लहतु साँचु अधिकार ॥२१॥
चलत चोर चाकर चतुर, बोलत बिरद उलूक।
आवत लखि तम राज को, भाजि भये द्विज मूक ॥२२॥
बासर दोख बिचार को, पठई तम नरनाथ।
दूती सी लागी फिरै, छाया सब के साथ ॥२३॥

आभीर

भूप तमोगुन गान। रोख कर्‍यो सित भान।
आइ उदय तहँ कीन। त्यों नल बरनन लीन ॥२४॥

सवैया

मेरु सिखानि कनातिन सों छिपि चन्द्र नयो छल कै छबि छायो।
चंचु चकोरनि के चुलकानि भरै निज रूप सुधानि समायो॥
नील निचोल उतारि चली सजि भाँति भली तिय कै मनभायो।
चाँदनि से तन चीर अभूषन हीरन चित्रपटीर (लगायो ॥२५॥

चर्चरी

रावरे मुख सामुहे ससि आरसी परमान है।
नीलकंज बिसाल लोचन सग द्वै गुनवान है॥
आपने लघुभाइ बासववाहनै मिलि के रह्यो।
सीस पूरन पूरि सिंदुर रूप सिंधुर को गह्यो॥२६॥

सोरठा

मढ़ी किरनि सब ओर, बिधु साँचो बिधना किह्यो।
ताह रूप अति गौर, भरिभरि काढ़त बदन सुभ॥२७॥

तोमर

सुरराज की दिसि रानि। तनु लाल अंबर तानि।
मुखचंद चारु उदोत। जन सज्जवासक होत॥२८॥

हरिगीत

अभिराम सीतै लखत लाजत लखति हिय मति बंक सों।
तब कान नाक बिहीन लच्छमन कीन स्याम ससंक सों॥
सुपनखा मुखकी लही सुखमा ससी यह जानिये।
सब श्रवत रुधिर सो लाल अंबर बलित गति मनु मानिये॥२९॥

[रानी बचन]

सरसी

चन्द रजत को हेमकूट कै साँझ छली छल कोन।
दयो रैनि के कर बदलो करि आपुन दिनमनि लीन॥
बासव सुत चकई गहि फेंकी टूटि अरुन छबि डोरि।
गिरत जात मुख सों वह चचल छुटत छपाकर छोरि॥३०॥

[राजा बचन]

शालू

जे अछिर नखत नित खिखत तिमिर,
तति सुयस सरस निसि कलम धरे।

कै व्योम असित सित मसित कुसिक गन,
लसित सिलिपिवर समथ परे ॥
ते लोपि जरद रँग बिबुध सिसिर कर,
पढ़त असम सर मत पसरे।
दै मेटि रमनि मन पिय जन दिसि रिस,
भुक्ति मुक्ति करि युगति तरे ॥३१॥

[रानी बचन]

सवैया

पूर पयोधि बढ़ावन को ससि लै अपनी मनि सों जलमैलै।
काकन की बनिता बिलपैं दृग आँसुन के परवाह सकैलै ॥
रैनि कलिंदसुता लहरी तम सूखत ही छहरी छबि लैलें।
ताही की रेतन की सिकता सन देत अनदनि चाँदनि फैलै ॥३२॥

सोरठा

एक कुमुद कुल हाँस, करत सोच सब सेत जगु।
दिन ये होत उदास, इतो न ससि उज्जवल करै ॥३३॥

लीला

ईस सीस जटानि में बसि कै ससी तप कीन।
एक सो सुउद्दोत होत न नीच मीच अधीन ॥
पान पाइ पियूष जीवत राहु की सिरमाल।
देखि कै भव भाल पै भय सों बढ़ै न बिसाल ॥३४॥

तारक

निज काँति चकोरन को अँचवाई। अपनी कलिका सिव सीस चढ़ाई ॥
सब देवन दिव्य सुधा भुगताई। ससि सोच सुरद्रुम को लघु भाई ॥३५॥

छप्पय

मृगमद अंकित इन्दु गरलगत अंकित संकर।
सुधा धवल तनु इंदु भसमयुत संभु भयंकर ॥

नखत अभूषन इन्दु अस्थि भूषन सिव सोहै।
गायो द्विजपति इन्दु, उग्र पसुपति मन मोहै॥
निज भाल मल्लि कलिका कर्‌यो जटा बल्लि में मिलित ससि।
महि लहत कला हरसों रही, रहत तहीं ससार हसि॥३६॥

दोहा

काम अस्थि लै अधजरे, स्वेत स्याम ससि कीन।
वहै जानि भूषित कर्‌यो, सिर पै सम्भु प्रवीन॥३७॥

चौपाई

मृग आमिष रुचि सों ससि तोरै। दौरि सिंहिका सुअन सजोरै।
साधुन को पाछां जे गहैं। निज तनु दै ताकां निरबहैं॥३८॥

[राजा बचन]

तोमर

सुर कै सुधा रस पान। किय चन्दु तुच्छ निदान।
पुरिखान की परसस्ति। लिय सिन्धु सोखि अगस्ति॥३९॥

दोधक

जोन्ह कला निधि की पटरानी। सागर की बढ़ती सनमानी।
मीत चकोरन की मन भाई। पै कुमुदै हित कौमुदि गाई॥४०॥

स्वागता

हानि वृद्धि अपने पितु तूलै। क्यों न चन्द्र सरसै अनुकूलै।
सीतल आप पिये ससि पानी। हीतल की सब ताप बुझानी॥४१॥

सोरठा

है आदरस स्वरूप, दरसन देत न दरस को।
अत्रि नेत्र अनुरुप, ससि त्रिनेत्र सिर पै चढ़यो॥४२॥
करत सकल सुर भोग, सुधा किरन मनि रूप लखि।
वा मैं हिंसा योग, या मे मलिन कलकु है॥४३॥

मनहंस

रथ ते छुट्यो मृग प्यास सों ललचाइ कै।
जलहीन अबर में रह्यो अकुलाई कै।।
तब दौरि के निसिनाह के उर में लग्यो।
रसपान पोखि पियूष पंकिल में पग्यो ॥४४॥

[रानी बचन]

मोदक

बालक चद न रंकु बिराजत। होत युवा छतियाँ छबि छाजत।
मानहु भामिनि ओषधि को गन। है पठ्यो कहि नेह सदेसन ॥४५॥

नाराच

महेस बान सों डिरात ऐन तार जानि कै।
रह्यो निसीस आसरो महेस प्यार मानि कै।।
संसार है जहाँ तहाँ ससी कहै सबै भले।
मृगी कहै न ताहि क्यों पदप्रयोग बावले ॥४६॥

हरिगीत

परिपूरन पियूष के रस सार सों थकि कै रह्यो।
चन्द बिम्ब रसाल फल जिमि काल चाखन को गह्यो।।
राहु के मुखयंत्र में धरि पेरि कै रस लै लियो।
नभ छुटत पीन छता भयो जनु देखते मन मसि लियो ॥४७॥

प्रमाणिका

ससी सखा अनग को। न योगु जानि अंग को।
कपूर काम मित्र है। जरे बढ़ातु बित्तु है ॥४८॥

तारक

अथवा यहि भाँति सुहाति मिलाई। सिव के दृग में तनु मैन जराई।।
बिधुहू हिय माँह सनेह बिचार्यो। हरि के दृग सूरय में तनु जार्यो ॥४९॥

[राजा बचन]

मोदक

चन्द भयो पर पूरुष लोचन । अंबुज जाहि कहैं दुख मोचन ।
साँवल अंक मिलिन्द मनोहर । है पुतरी सुथरी अति सुन्दर ॥२०॥

सोरठा

बिधु औ गरुड़ उदार, द्विजपति दोऊ पच्छधर ।
हरिनायक आधार, नयन क्रिया इनसों उचित ॥२१॥

द्रुतविलंबित

सिसिर में लखि पंकज छार को । गनत पावक रूप तुषार को ।
उठत धूम तहाँ अति साँवलो । ससक अंक कहै ससि में भलो ॥२२॥

[रानी बचन]

सवैया

स्वेद प्रबाहन की सरिता सब ओर बहैं बढ़ुतै सरसानी ।
काननि कोटि अकोटि कुलाचल भार भरी धरनी अकुलानी ॥
सूच्छम छाँह सरूप भई चित चाह नई निहचै नियरानी ।
सीतल आप पिये ससि में परही तलऔ तब ताप बुझानी ॥२३॥

समानिका

अंक में ससा बसै । कौन चन्द को हँसै ।
बाप के सरीर में । बाजि औ करीर में ॥२४॥

कमला

असि तरु सित रजनी । ससि मह युग रमनी ।
तिनहि मिलतु मनुकै । असित सुकुल तनुकै ॥२५॥

मनहरन

दिनको अथोत समै बूड़त तरनि रहि,
तम की बिपति नदी नैनान लौं आइकै ।

पूरब के पुण्य परसाद ते उडुप पायो,
भयो मन सुमन सुनद पार पाइकै ॥
ओषधिपति को न सुरसकै निरुज करै,
क्षय होत द्विज न बचावै मंत्र भाइकै ।
समुद न सुत को समुद करै रतननि,
सुधा जतननि को न सींचत बनाइकै ॥२६॥

बिवा

ससिकर पीयूष नाही । हरि मिरतु नो जराही ।
निसि निसि चकोर पीवै । युगयुगहू क्यों न जीवै ॥२७॥

मालिनी

सरस बचन भैमी पीव सों बोलि नीके ।
नयन विकसि आये मोद सों प्रान पी के ॥
धनि धनि पिकबैनी आज की उक्ति तेरी ।
चिबुक गहि उठाई चूमि लीन्ही घनेरी ॥२८॥

[दमयंती बचन]

निज मुख नहि सोहै आपनी जो बड़ाई ।
बदन ससि तिहारो मैं तहीं कीर्ति गाई ॥

[नल बचन]

ससिबदनि ! न जानै आपने दिव्य रूपै ।
बरनहु अब हौंहौं तो मुखै दिव्य भूपै ॥२९॥

संयुत

तुअ गीत सों बस ह्वै रह्यो । मुख रावरो निहचै गह्यो ।
यहि लोभ ते मृगनेकहूँ । महिचन्द्र छोड़ि टरै न कहूँ ॥३०॥

सवैया

चन्द्र सुधारस पान करै तम पानन की घन छाँह कयोहै ।
बासर को न चल्यो परै तापर ताप रहै तन घाम कयोहै ॥

बैठो कहै अधरा मगसों पगसों परसै न सनेह नयोहै।
बोलु चलाकु उचारत सों तेहि ते निसि में चलि दूर गयोहै ॥६१॥

निलस्वरूपक

देखि परै न बनाइ छुटाइ। अबर मौंह चढ़ी मलिनाइ।
धोवत ताहि सुधा जल लैलै। यों रजनी रज की हति मैलै ॥६२॥

चित्रपद

मेघन की मलिनाइ। सारद मास छुड़ाइ।
सारद हूँ ससि भेंट्यो। जात कलक न मेंट्यो ॥६३॥

सरसी

एकादस रुद्रन के सिर इक इक कला बाँटि ससि दीन।
कला पाँच सौ पंचवान ! सर पैनी गाँसी कीन ॥
कूटि कूटि तारागन लाखन और चन्द जब होइ।
अकलंकित तब बदन रावरे करै बराबरि सोइ ॥६४॥
बदन सरद अकम सस-धरता अधर पियूष समान।
चाहि रह्यो बासव सब छल करि बलकरि रह्यो न पान ॥
गगन भयो यह उदित सीत कर मुदित भयो चित चाहि।
सुधा देव जूठान गनि घिन सों पियत न ताहि सराहि ॥६५॥

सोरठा

औषधीस को पाइ, निरुज भयो बिहरत गिरिस।
कालकूट कोखाइ, अग लगावै गरल धर ॥६६॥

मनहरन

द्विजपति देव गुरुदार सों सनेह कर्‌यो,
नयनन की तारा सम तारा रूप रानीहै।
अद्भुत गति देखि याकी गजराज गति,
पतित न भयो यह साँचो बेद बानीहै ॥

आतम प्रकास को युगति ज्योति जानति जे,
तिनमें लगति नाहि मुकुति निसानीहै ।
जैसे प्रतिबिम्ब सब ठौरनि में परत है,
मैले उजरेकी कछु भाँति ना पिचानीहै ॥६७॥

चौपाई

सुधा बोलि तिल जल सुत देहीं । हर्षित होत पितर ते लेहीं ।
सुधारूप तिल साँवल अक । ससि में देख परै निरसक ॥६८॥
केलि सौधकुल्याजल माहीं । ससि मडल की झलकत छाहीं ।
हँस जानि हँसनि नियराति । पाँख झारि झपटत पियराति ॥६९॥

द्रुतविलम्बित

कुमुदनी हरिनी बन में रहै । पुहुपलोचन लोलि जु ताल है ।
लखति ऊपर को रस रीति सों । हरिन को बिधु मे पति प्रीति सों ॥७०॥
अलप पक पियूष मिसों रली । मदन की सरसी बिधु मडली ।
अमर मीन सुधा जल पान सों । करत ताहि ध्वजा सन्मान सों ॥७१॥

चर्चरी

ससि सब्द जागृति जोन्ह राजत तार अस्विन सों लसै ।
लीक जो नभ मध्य सों फनिहार की छबि सों बसै ॥
अष्ट मूरति संभु की इक साँच देखि अकास है ।
अंक फूलि उमा रही ससि में बहै परकासहै ॥७२॥

स्वागता

स्वेत गोल रबि चन्द्र बनायो । कामराज सिर छत्र सुहायो ।
जो कहुँ रजनी में छबि छीनो । छत्र भग निस्चय तम दीनो ॥७३॥

सवैया

तीनिहु लोकन जीति दसानन नेकहु जाहि न जीतन पायो ।
रावरे आनन एक बहै निसिनायक नेसुक हेरि हरायो ॥

सोई लगी ससि के मुख कारिख औ तेहि सारिख कौन बतायो ।
कोऊ कहौ छिति छाँह छई मृग अंक ससक कहूँ ठहरायो ॥७४॥

बंधु

राम करे सब छत्रिय छीने । छत्रिय राम करे मद हीने ।
त्यों ससि पंकज को निसि जारै । तो मुख पंकज सों नित हारै ॥७५॥

दोहा

सागर ते मुनि नयन ते, उद्भव द्विज यहि नाम ।
बिधु साँचो अब अवतर्‌यो, सब सोभा बिसराम ॥७६॥

चंद्रमाला

तार बिहार भूमिमय हिममय चंद्र मंडली कीनी ।
लसत जहाँ मृगनाभि वास सो हैं सब द्युति भर दीनी ॥
स्वर्ग लोक मे तिलक भयो बिधि इन सुकृत न सरसाई ।
जिन जिन सुनी गुनी साँची तिन जिन मतहू बनि आई ॥७७॥

मनहरन

हर पतनी सों भयो सिंह के स्वरूप ससि,
　　सस औ हरिन को उदर माह आन्यो है ।
तेरे मुख पद्महूँ सों मन में डरत कहूँ,
　　एक सों जगत में न काहू भय मान्यो है ॥
गगन बिपिन में बिहार निसि निसि करै,
　　तम गज घटानि घटावत बखान्यो है ।
केसर करनि झहरावत निपट याको,
　　सिंहिका तनूज दूजो प्रति भट जान्यो है ॥७८॥

छप्पय

लोचन कमल चढ़ाइ कमल आसन नित पूजै ।
तो मुख कमल बनाइ बास कमला को दूजै ॥

बचन न बरनो जाति जासु रुचि रासि सुहाई।
लसत कला चगुनी कौन गावै सुघराई॥
तहँ कहत कौन समता महत चहत चन्द चित्त चावरो।
सिव सीस जटा तटिनी निकट बनबासी बक बावरो॥७९॥

[नहमजरी सखी बचन]

सोरठा

यह सखि! सोई चन्द, बिरह पाइ जेहि हौं दही।
मन मोहत मतिमन्द, तौहो लह्यो कलङ्क जग॥८०॥

[दमयन्ती बचन]

मनहरन

साँझ हौं अटा पै अन जानत गई ही मोहि,
देखति ही दौरि चारौ ओर उमड़त सी।
हौ तो डरपाइ भाजि भौन मे लुकाई सोऊ,
पीछे लागी आई चहराई घुमड़त सी॥
जगर मगर घर बाहर बिबर करि,
सोरनि चकोरनि की सुड झुमड़त सो।
कैसिन कसैरी बिरहिनि बैरी बोरिबे को,
चाँदनी बहेरी येरी घेरे घुमड़त सा॥८१॥

लीला

बासव दिसि में भये ससि पुंडरीक प्रमान।
लै कला अवदात निर्मल आरसी अभिराम।
इदु सिधुर दान संगत चंचरीक रसाल।
हैं लगे उर माह वे उडि अंक अंक तमाल॥८२॥

छप्पय

ससि को षोडस अंस कला कहि वेद बखानै।
घटत बढ़त ते नित्त असित सित पच्छ प्रमानै॥

परिवा सों इक एक कला पद्रह तिथि तेई ।
पूरनमासी होति पूरि आवैं सब तेई ॥
वह एक कला सो रही लै उखारि हर सीस धरि ।
बहु दुखत रही बहु त्रास लौ गयो ठौर वह स्याम परि ॥८३॥

मनहरन

रावरे बदन छबि सदन की समता सों चाहै,
करयो ससि निज नयन अनियारे हैं ।
मानि के मिताई करी भाई पचकोरन सों,
जोन्ह अँचवाई जाको देव पचिहारे हैं ।
अंक सों मयंक कहूँ रंक को न जान देत,
नील कमल निधर करै उजियारे हैं ।
भ्रमि भ्रमिहारयो होत भोर तनु गारयो चोर,
सागर में पारयो मन ही में मान मारे है ॥८४॥
सकल लुनाई की लहरि सों छहरि छबि,
बदन तिहारयो बिधि रच्यो चितलाइ के ।
बासव को पोंछि मैल मिलत अंगोछनि सों,
चिकिनो छपाकरु छपा पटरानी पाइ के ।
होउनि सँवारि सुरसरि वारि धोवै हाथ,
तिनमें लगत कौंति कनन बनाइ कै ।
कमला के बास कमलागे और कीरी द्युति,
उपजत वेई कुल कमल चलाइकै ॥८५॥

सवैया

आसवसार सुधाधर मंडल है मद कोमल वा छबि छायो ।
देव बधू तेहि पीवत छीव छकै सब जीव करै चित लायो ॥
छूटत सौरभ सोभ सने तेहि लोपत तारेन बीच बसायो ।
प्यालो लगी मनि नीलम को उर अंक कलंक नरक बतायो ॥८६॥

सोरठा

ससि के गुन गहि लीन, तिन सों मुख तेरो रच्यो ।
दोषा करु बिधि कीन, बिधि चातुर चित बिबिध विधि ॥८७॥

मदनमाला

गगन लगत रबि रथ है खुरचय ।
तहँ बिल परत भरत जल अमिय मय ॥
मिलत सिसिर कर सरस सबुद बुद ।
जलज नयनि नभ नखत करत मुद ॥८८॥

सोरठा

बिधु पापर के रूप, तिल कलंक उड पुहुप युत ।
है नैवेद्य अनूप, करिये काम उपासना ॥८९॥

छुप्पय

लगत दसन सुर भानु झीन झाँझरि सम सोहै ।
झरत अमृत सब ओर झलक झालर मन मोहै ॥
मुक्ता नखत अपार हार उपकंठ बिराजै ।
सुरत हनीकर नवल लाल पल्लव छबि छाजै ॥
रति मयन भूप के ब्याह में रूपरासि अभिषेक रस ।
बिधु भरत भाँवरी सीस जनु सहसधार मगल कलस ॥९०॥

इति श्रीमत्प्रचण्डदोर्दण्डप्रतापमार्तण्ड भूमण्डलाखण्डल श्रीखाँसाहब अलीअकबरखाँप्रोत्साहित गुमानमिश्रविरचिते काव्यकलानिधौ चन्द्रोदय-वर्णनं नाम त्रयोविंशःसर्गः ।



टिप्पणी

प्रस्तावना

छन्द १ सरस अलि—रसीले भौंरे। मद—हाथी के मस्तक का रस। रंग रचि—आनन्द से। करन चल—हिलते हुये कान। चिन्तामणि—एक प्रकार का मणि जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि वह इच्छित फलदायक है। हेम—स्वर्ण। बज्जत—बज्जते हैं। लोल गति—चंचल गति से। नव तडव—नया ताण्डव, ताण्डव की नकल; ताण्डव शिव जी का नृत्य है। प्रणति—प्रणाम। तात—पुत्र; यहाँ गणेशजी से तात्पर्य है। मतंग—हाथी। मतग-आनन गजानन, गणेश जी। इस छन्द में कवि शिव जी के ताण्डव नृत्य की नकल करते हुये गणेश जी की वंदना करता है।

छन्द २ भूमि को तिलक—अत्यन्त सुन्दर भूमि। घालिबे को—नष्ट करने को। बाने—पताके। विलसतु हैं—फहराते हैं। चारिहु वरण; चारों वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। सुवरण साज—सुन्दर साज, स्वर्णघटित आभूषण आदि। सुवरण बानी—मंगलमय अक्षरों से युक्त वाणी, शुद्ध वाणी। सुधा—अमृत। सींव—सीमा। अमरावती—इन्द्रपुरी। हँसतु है—तिरस्कृत करती है। धरम को धाम—धर्मात्मा। महमदी—खेरी ज़िले में एक नगर जहाँ कवि के सरक्षक अलीअकबर खाँ रहते थे।

छन्द ३ खलनि—(१) दुष्ट, (२) ऊखल, ओखली। कर—(१) लगान,(२) हाथ। खाली—केवल, सिर्फ़। ग्राह—(१) पकड़ (२) दाँव। तरवारैं—तरवार में ही। बन्धमुष्टि—(१) जकड़ी हुई मुठिया (२) हथकड़ी। सेवै—सेवा में। कोषनि (१) म्यान (२) जेल। वेलिन—लताओं में ही फूट। फलै—फलता है। केलिन—रति केलि में ही। केस ग्रह—बाल पकड़ कर

खींचना। ताजन—(१) कोड़ा। (२) कोड़े से पिटना। बाजिन—घोड़े को ही। अगम गामी—अगम्य स्थानों में जाने वाला। भीतैं—(१) भय। (२) भित्ति, दीवाल। प्रकासु—तेज, यश। इस छन्द मे परिसख्या अलकार है। इसे ध्यान में रख कर पढ़ने से अर्थ स्पष्ट हो जायगा।

छन्द ५ प्रथु...भगीरथ—प्राचीन भारतीय नरेशों के नाम। सोधि—निश्चय करके, खोज कर। रवि तेज—सूर्य के समान तेज। सुयश-ससि—चन्द्रमा के समान शीतल और आनन्द दायी सुयश। चातुरता मनि खानि—चातुर्यरूपी मणि की खान। नागर—सभ्य नागरिक। सुर तरु—कल्प तरु। सुसरसु—सदृश। दुवन—दुर्जन, शत्रुओं। भीषम—भयानक।

छन्द ६ बदन—मुँह। सदन—घर। सिरी—श्री, लक्ष्मी। मदन कान्ति—कामदेव की कान्ति। यहि भाइ—इसी तरह की।

छन्द ७ दुजन—द्विजन, (१) ब्राह्मण, (२) दाँत। विरधापनोई करे—बुढ़ापा ही करता है। गुण—(१) सुन्दर खूबियाँ या कलाएँ। (२) सूत्र, तागा। निरगुन—(१) गुणहीन (२) सत, रज और तम गुणों से रहित। अलक—केश, बाल। पारैं—दो टूक करना, पटिया पारना। भंग—(१) टेढ़ापन (२) टूटना। राजौ—राज करो। वारहीं—निछावर हैं। इस छन्द मे परिसंख्या अलंकार है।

छन्द ८ विहंग—पक्षी। बलाह के—पताके के समान बकपंक्ति। झबे—झावे। फीलनि—हाथियों के।

छन्द ९ दिग्गज—दिशाओं को सँभालने वाले हाथी। आभा—ज्योति। राह—रास्ता, मार्ग। परान की—भागने की। धुकानु—एक बाजा। फणीश—फणीस, शेषनाग। पाके पान—पके पान।

छन्द १० मतंग—हाथी। विकट—डरावने। दल—सेना। मुबारक बखत—अच्छे शुभ समय। खुर थारनि—खुरों के आघात से। हय—घोड़े। धुंधर—धुंध, धूल, खेह। नखत—नक्षत्र, तारा। धुधरि ...नखत सों—घोड़े के कूदने से उठी हुई गर्द के कारण आकाश मे सूर्य तारे के समान दिखाई देता है। सुरभि—देवता लोग। कहार—पालकी ले जानेवाले। पादशाह—बादशाह।

छन्द ११ यहि भाव—इसके समान। पेसकस—पेशकस, अगवानी।

छन्द १२ सील सुधा—शील रूपी सुधा। बलि—बहादुर। भासमान-भव्य, देखने योग्य। आड़े—रोका। गाड़े—गड्ढे जिसमें हाथी फँसाये जाते हैं।

छन्द १३ मारतंड मडल—सूर्य मंडल। खदै—खोद देते हैं। कहलि—कोलाहल। पुरहूत—इन्द्र। हहलि—हहरि, भयभीत होकर। भननात—भनभनाते हैं, चारों ओर गूँजते हैं। झननात—झनकता है। झूल—हाथियों को ओढ़ाने का कीमती कामदार वस्त्र। लसैं—शोभित हैं।

छन्द १४ गुण चीर निधि—गुणों के चीर सागर। वीची—वीचि, लहर। धर्म रुचि मेरु—धर्म में मेरु पर्वत के समान अचल रुचि रखने वाले। तेजस-सूरं—सूर्य के समान तेजस्वी। दान लघूकृत कर्णं—दान में कर्ण को तुच्छ कर दिया। बहु गाथं—बहुत सी गाथाओं में। पर-नृप-मडल—शत्रु राजाओं का समूह।

छन्द १५ समरमागत्य—समर + आगत्य—युद्धक्षेत्र में आकर। कृतवति—किया। भवस्य—शिव के। भुवि—ससार में। कति कति—कितने। बिभर्ति—धारण करते हैं। युगले—दोनों। करमूले—कलाई में। शूलफले—त्रिशूल के फल

पर । सुरु गुरु—बृहस्पति । अभिलषति—चाहते हैं, कामना करते हैं ।

छन्द १६ बिक्रम—पराक्रम । बिकट—भयकर । अटल…गंजन = समर में अटल रहने वाले; भयकर वीरों के समूह को नाश करने वाले। आजानु बाहु—घुटनों तक लम्बी बाँह वाले ।

छन्द १७ चारु—सुन्दर । गणक—ज्योतिषी ।

छन्द १८ अनुसारि—अनुसार ।

छन्द १९ सयुन प्रकृति पुराण—सम्बत १८२४ । सुरुगुरु—बृहस्पति । सित सप्तमी—शुक्लपक्ष की सप्तमी । किहेउ—किया ।

प्रथम सर्ग : नलावतार

छन्द १ सोमबस—चन्द्रवश । पुहुमि—पृथ्वी । तेजधर—तेजस्वी ।

छन्द २ श्रेय-निवास—कल्याण का निवास ।

छन्द ३ सित-सागर—क्षीरसागर । कमला—लक्ष्मी ।

छन्द ४ पद्म सुनील—नील कमल । कुबेरथली—कुबेर की राजधानी, अलकापुरी ।

छन्द ५ मीन ..मकर—(१) राशियों के नाम हैं । (२) मछली, केकड़ा और मगर । सुग्रह—शुभ ग्रह । सोभ—शोभा ।

छन्द ६ लहरी—लहरें, नदी । साँप डसी—साँप से डँसी होने के कारण काँपती हुई । लोल—सुन्दर । बिषु—विष, जल । रस वैद्य—रस देने वाले वैद्य ।

छन्द ७ सैल—पर्वत । मही दुति—पृथ्वी की शोभा । बंस—बाँस । हर—शिव । हेममई—स्वर्णमयी; सोने की बनी । अरघा—एक प्रकार का नौकाकार पात्र जिसमें शिवजी की मूर्ति रखी जाती है ।

छन्द ८ गजराज—हाथी । वंजुल—एक लता ।

छन्द १० पराग—पुष्प रज। कोसनि—पुष्पकोष।

छन्द ११ सुरभी—गाय। केसरि—केसरी, सिंह।

छन्द १२ जटित—जड़े हुए। फटिकमय—स्फटिक का बना हुआ। प्राकार—चहार दीवारी। सरिवरि—समता। नरवर-पुर—राजधानी। कर—का अथवा की।

छन्द १३ गचि कै—एकत्र करके। सचि कै—सच में; यथार्थ में। सहस नैन—(१) इन्द्र, (२) हजार आँखें। सहसानन—शेष नाग।

छन्द १४ अवली—पंक्तियाँ। सौध—प्रासाद, ऊँचे मकान। दिवि—स्वर्ग। जल लहरी—जल की धारा, आकाश गंगा।

छन्द १५ जुग सत्य—सतयुग। लसै—शोभित है। बासव—इन्द्र।

छन्द १६ मनि ...होतु है—मणि और सोने के कलसों के प्रकाश से रात भी दिन के समान हो जाती है। ओक—आकाश। सूर-लोक—सूर्य लोक। फाटिक—स्फटिक।

छन्द १७ कुबेर नगरी—अलकापुरी। सुढार—सुन्दर।

छन्द १८ सुनि......कान—कोलाहल में कानों को सुनाई नहीं पड़ता। छोर—अन्त। अथोर—अधिक, विस्तृत।

छन्द १९ तेहि भेव—उसी तरह। ध्यावत—ध्यान करते हैं।

छन्द २० रूरे—सुन्दर।

छन्द २१ सिद्धि को मुख—सिद्धियों का द्वार। गेह—ग्रह; आवास।

छन्द २२ जाल रंध्र—जंगला। रुचि ऐन—सुरुचि का घर। राज सिरी—राजश्री, लक्ष्मी।

छन्द २३ गवाखन—गवाक्षन, खिड़की, जंगला। रोसनदान—रोशनदान। पनारन—पनाले। तुचा—त्वचा, चमड़ा। राजसिरी—राज्यश्री।

छन्द २४ सोन सिखर—स्वर्ण शिखर । कनकाचल—हेमाचल, स्वर्ण गिरि ।

छन्द २५ मुड़वारी—मुंडेरी । जावक—अलता ।

छन्द २७ करिदन्त—हाथी दाँत के आकार का टेक वा मुख । उनई है—घिरी है, उठी है ।

छन्द २८ उपकार सयाने—उपकार करने में चतुर ।

छन्द २९ सिद्‌रोन—एक प्रकार का सुन्दर कपड़ा ।

छन्द ३० जराइ के—जरी के, स्वर्ण-खचित । नीठ—कठिनता से । अपार भूमि द्वार—बड़े आगन वाला । सूर आरसी—सूरज के लिए दर्पण के समान ।

छन्द ३१ व्योम—आकाश । पतार—पाताल । रचे .. .पतार के—आकाश, पृथ्वी और पाताल के बहुत स सुन्दर चित्र बने थे । चित्र सारिका—चित्रसारी । अगार—आगार, स्थान ।

छन्द ३३ रावर—श्रीमान, महाराज ।

छन्द ३४ बिसद—लम्बे चौड़े, स्वच्छ । बितान— चँदवा । सुधाधर—चंद्रमा । बिब—किरण । सित—सफेद । गृहद्युति—घरों की आभा ।

छन्द ३५ दुग्गन—किला, दुंग । गाहै—ग्रहण करें । गाढ़े—बड़े, मस्त । डारैं महि सारे डारैं— पृथ्वी पर डालें या शखायें फेंक देते हैं । तरुन-तरुन—(१) प्रत्येक वृक्ष का । संगर गाढ़े—रण में सुभट । विंध—विन्ध्याचल । घनौ—बादल ।

छन्द ३६ ठलैत—(लठैत)—पैदल, फौज ।

छन्द ३७ मेष—मेढा । बृष—बैल । महिष—भैंसा । अरुझत—लड़ते है । नटत—नटवे करतब दिखाते हैं । गनक—ज्योतिषी । बिरत—विरक्त ।

छन्द ३८ दिवालय—दीवाल। गीरवानु—गीर्वाण, पर्वत। आसमान परिवार—माना पवत आसमान तज भूमि पर आ गये हैं।

छन्द ४० होमन ही—होम मे ही। कुटिल गति—टेढ़ी चाल। अवरेखियत—देखते हैं। कोक—चक्रवाक। द्विजराज विरोध—(१) ब्राह्मण विरोध, (२) पक्षियों का विरोध। कोक—कमल द्विजराज—चन्द्रमा, ब्राह्मण।

छन्द ४१ गुरु—(१) गुड (२) गुरु। पाप-रचित—(१) पाप-रचित, पाप युक्त (२) पापर-चित—पापड़ खाने वाले।

छन्द ४२ चल......परयो—चकाचौंध करने वाले अपने प्रतिबिंब को देखकर आकाश से मानों चन्द्रमा टूट पड़ा।

छन्द ४३ सुधा लहरो—सुधा की लहर। पर नार—(१) पराई स्त्री (२) परनाला। बहुभीत—(१) बहुत सी दीवालें, (२) बहुत डर कर।

छन्द ४४ तोरन—बन्दन बार। जोन्हाई—ज्योत्स्ना। धुजपट—ध्वजा का वस्त्र। प्रफुल्लित—खिला हुआ। सुसूर—सूर्य।

छन्द ४५ नीलमणि भवन—नीलमणि स बने भवन।

छन्द ४६ रामानुराग—रामा + अनुराग—महिलाओं से अनुराग रखने वाला, राम अनुराग—राम से प्रेम रखनेवाला। मित्र—दोस्त; सूर्य्य। मित्र मुदित—सूर्य्य के कारण प्रसन्न, कमल, मित्रों को प्रसन्न करने वाला, मित्रों क कारण प्रसन्न रहने वाला।

छन्द ४७ विहडन—नाश करने वाले। पुन्य श्लोक, पुण्यश्लोक। परम प्रतापी—यशस्वी, हरि—विष्णु। करता—विधाता।

द्वितीय सर्ग : हंस-ग्रहण

हेम-मराल—स्वर्ण हस।

छन्द १ विबुध—देवता। संत.. सुजस—जिसका सुयश स्व

छत्र की भाँति मंडल मे छाया है। इस छंद का उत्तरार्ध यों पढना ठीक होगा—

साजे सुवर्णमय दंड सितातपत्री।
जारे प्रताप बलि कीरति सों धरित्री॥

छन्द २ रसभरी—रसीली। निदरे—निरादर करती है। सितातपत्री—स्वेत छत्र। धरित्री—पृथ्वी।

छन्द ३ छिन—क्षण। चिन्तये—चिन्ता करने पर। अघ ओघ—पाप समूह। सेविनी—सेविका। आनिहै—लावेगी, यहाँ करेगी से तात्पर्य है। पवित्र चरित्र—पवित्र चरित्र वाली। जीभ—यहाँ वाणी, कवित्व से तात्पर्य है। जीभ......है—मेरी जिह्वा के अवगुन को वही दूर करेगी। बानी—सरस्वती।

छन्द ४ अस—अश। दिगीस—दिगीश; दिशाओं के मालिक। रूप न थोरे—अत्यन्त रूपवान। देखावन काज—दिखलाने के लिए। तिसरो... मई है—शास्त्र ज्ञान ही उसका यथार्थ द्वितीय नेत्र था।

छन्द ५ चालतु है—नष्ट करती है। कुल—सम्पूर्ण। तिलोचन—शिव।

छन्द ६ धरा—पृथ्वी। थापेउ—स्थापित किया। चारिउ बरन—चारों वर्ण, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। बिलसै—आनन्द करता है। छिगुनी—कानी अँगुली। छिति—पृथ्वी।

छन्द ७ धुँधुर—गर्द। सिखी—अग्नि। आसुग—वाण। अमैनिक—बुरा।

छन्द ८ ईति—खेती को नुकसान पहुँचाने वाले उपद्रव। अति... नैन—शत्रु की स्त्रियों के नेत्र अत्यन्त वर्षा करना क्षण भरके लिए भी बन्द नहीं करते अर्थात् शत्रु की स्त्रियाँ बहुत रोती हैं।

छन्द ९ सगर धरा—समर भूमि। जस पटनि—यशरूपी वस्त्र। करि—

बनाकर। करवाल—तलवार। वेम—ढरकी, जिससे जुलाहे कपड़ा बुनते हैं। कोरि—कोरी, जुलाहा। चीरन—वस्त्र।

छन्द १० धर्म विरोध—धर्म की प्रतिकूलता। उनयो है—प्रगट है। प्रतीप—प्रतिकूल आचार।

छन्द ११ नल छाजतु है—नल का तेज विराजमान है। सूर्य और चाँद व्यर्थ ही उदित है। सूर्य तेजस्विता और चाँद से शीतलत्व और सुखदायित्व की तुलना की गई है। छेकन—रोकने को। परिवेष—घेरा, मण्डल।

छन्द १३ कवियान—कवियों को दान देने में। जुलफैं—बाल। अपजस—अपयश।

छन्द १४ बुध—ग्रह; विद्वान, पंडित। बन्दन कै—वन्दना करके। ओज—प्रताप यश।

छन्द १५ अम्बुजात—कमल। भूखै—शोभा देती है।

छन्द १७ करवाल—तलवार। जोर जोवन सों भरी—पूर्ण युवा। अभिसारिका—अपने प्रिय से मिलने के लिए संकेत स्थान में जाने वाली स्त्री। जग जीय—जगजीव, राजा। स्त्रिय—श्री। छतधार.. करवाल.. ..पॉ परी—यौवन से भरी लक्ष्मी तलवार रूपी दूतिका के वश होकर अभिसारिका की भाँति आकर राजा के चरणों में परी।

छन्द १८ सुमित्रोपेत—सुमन्त्रियों के साथ ; सुमन्त्र के साथ दशरथ।

छन्द १९ अवधिवासी—बसनेवाले। सेतु बन्ध—झूला जो उत्तराखण्ड में हिमालय पर्वत के खड्डों पर बना है। प्रमद—वायु। गंधमादन—एक पर्वत।

छन्द २० विपच्छ—पक्ष हीन। विमुख।

छन्द २१ दुर्गानि—(१) दुर्ग (२) किला (३) दुर्गा देवी। ईस—(१) ईषु; बाण (२) ईश्वर।

छन्द २२ कानन—वन, कान । मधु—मकरन्द, पुष्प रस ।

छन्द २३ हस्त—(१) हाथ, हस्त नक्षत्र । श्रवन—(१) कान (२) श्रवण-नक्षत्र । दान—(१) हाथी के मस्तक स चूने वाला रस (२) दान देना । करिन—हाथी । ग्रसनि—ग्रहण करता है ।

छन्द २४ वरसा बासर—वर्षा ऋतु । अम्बर—वस्त्र, आकाश ।

छन्द २६ लव—बहुत थोड़ा अश । पल्लवन हीं—पल्लव में ही है ।

छन्द २७ असेष—सम्पूर्ण । दूषन-अभाव—दोष रहित ।

छन्द २८ अरिगल—अर्गला; कपाट के बद करने का साधन । गोपुर—किले की मीनार । बच्छथल—वक्षस्थल ।

छन्द २९ हिमकर—चन्द्रमा । कॅवलन—कमलों । रतनारे—लाल । ओप—तेज । श्रुतिभूषण—कान का भूषण, कुण्डल । ऊकुति--उक्ति । मुकुर—आरसी, ऐना ।

छन्द ३१ अनिमिष नैम—कहते हैं कि देवताओं के नेत्र पलक रहित होते हैं ।

छन्द ३२ उरगी .. करैं—स्नेह भरी सर्पिणी जो आँखों से देख ता सकती हैं किन्तु आँखों से सुन नहीं सकती । इसलिए आँखों की निन्दा करती हैं ।

छन्द ३३ सारत—करती है ।

छन्द ३६ भीम के तनया—भीम की लड़की, दमयन्ती ।

छन्द ३७ भीम भीम अनुहारी—विदर्भ नरेश भीम के समान विक्रमशाली था ।

छन्द ३९ तात सदन—पिता के कक्ष में । बन्दि—भाट, चारण । घने—बहुत । तनु......बने—शरीर मे रोमाच हो जाता था और वह कदम्ब जैसा कंटकित हो।जाता था ।

छन्द ४१ रंग को भौन—केलिगृह । नल—पानी की नल । दृग . मुक्ताजल के—नेत्रों में आँसू के मोती छा रहे ।

छन्द ४२ जुव—जो । नहि भावत—और दूसरे अच्छे नहीं लगते ।

छन्द ४४ वीरि—कसम । नरवर—श्रेष्ठ नर, नल ।

छन्द ४८ परवीनन—चतुर, प्रवीण । सासन साँट—स्वास रूपी कोड़ा ।

छन्द ४९ मुक्तावालि—मोतियों की माला । गुण—(१) गुण (२) सूत्र, तागा । बुध—पण्डित ।

छन्द ५० पाइ अवसर—मौका पाकर । बाम—विरुद्ध । करि आपु—अपना रूप उसका सा बना कर ।

छन्द ५३ हित की—प्रेम की । खरके—खटकै, दुख दे ।

छन्द ५४ गोवत—गोपत, छिपाता है । जोवत—ढूँढता है । कानन—वन । ससीकर—चन्द्रमा ।

छन्द ६० विफल—निष्फल । अनिरुद्ध—कृष्ण का पोता । यह कामदेव का अवतार था । जब शिव जी ने कामदेव को भस्म किया था तब शिवने रति के विलाप करने पर उसको वर दिया था कि अनिरुद्ध के रूप मे तेरा पति उत्पन्न होगा ।

छन्द ६२ कामरूप— काम के समान रूप वाले । निकेत—घर, महल । कनेखि—कनखी ।

छन्द ६३ तरुनि हास—स्त्रियों की हँसी । साहित्य मे हँसी का रूप । श्वेत माना गया है ।

छन्द ६४ चपल—चचल । मदुर—अश्व, घोड़े । थिर—स्थिर, एक जगह । डीठि—निगाह, नजर ।

छन्द ६६ गूँदै—रौंद डालते हैं । रथ—रथ ।

छन्द ६९ गीरवान पति—गीर्वाणपति, पर्वत, दिग्गज । अर्व—अरबी घोड़े । महताब—चाँद । अम्बर—आकाश । बाग लेत—घोड़े की बाग जिसको उनके मुँह में लगाकर चलाते हैं । छाह छुइ पावई—परछाहीं भी न छू पावे ।

छन्द ७२ कर—किरण । पाँव न लागे—पृथ्वी पर पाँव नहीं लगता ।

इतनी चपल गति है कि घोड़े का भूमि पर पैर रखना दिखाई ही नहीं पड़ता ।

छन्द ७३ दल सयुत—दल के साथ, सेना के साथ । परिहास—मजाक, विनोद ।

छन्द ७४ जरी जीन—स्वर्ण खचित जीन । जीन—घोड़े के पीठ पर रखने का साज । बात—वायु, हवा ।

छन्द ७५ दौर. . ..सानि—हमारे दौड़ने के लिए पृथ्वी बहुत ही छोटी है यह जान कर मानो पैर से खूँद कर और धूल को सान कर समुद्र को स्थल करना चाहते हैं ।

छन्द ७६ दिगन्त—दिशाओं तक । लासु—लास्य, नृत्य ।

छन्द ८१ वन पाल—उद्यान रक्षक । बिनई—विनय किया, बतलाया । सोभ—शोभा ।

छन्द ८२ फैले पत्र (१) फैले हुए पत्ते । (२) बिखरे हुए पन्ने । मही पति —राजा । नवदल—(१) नये पत्ते (२) नई सेना ।

छन्द ८३ पराग—पुष्प रज । ऋतुराजा—वसन्त । होरी—होली । कल—सुन्दर । कोकिल कुल—कोयल समूह । परवीन—प्रवीण, चतुर, यह भँवर का विशेषण है ।

छन्द ८५ केतकि—केतकी, पुष्प विशेष । केतकि के कुल—केतकी का समूह । फूल सो—फूल संयुक्त । मने करे—मना करते हैं । सो—केतकी । अपकीरति—अपयश ।

छन्द ८६ दुखो—दूखित हुआ । केतकि देखत—केतकी को देखते ही । रोजु—प्रतिदिन । करै—बनाता है । मनोज—काम देव । करै......मनोजु—तुमको काम देव अपना बाण बनाता है ।

छन्द ८७ महेस—शिव । यहो—इसी से । निदरै—निरादर करते हैं । आरा सम—आरे के समान ।

छन्द ८८ कुसुम सर—कामदेव । मधु......बनाइ—मधु के कारण

हाथ गीले होने से धनुष खींचते नहीं बनता इस कारण कामदेव पराग लपेट कर फूल के बाण से मुझे बीध रहा है।

छन्द ९३ कलिकानि—कलियाँ। उमही—उमड़ी। तूल—बराबर। करी—बनाया।

छन्द ९५ साख बौरे—बौरी हुई डाल। बोरे—मत्त।

छन्द ९६ पिक दुज—कोयल रूपी ब्राह्मण। दुज—(१) पक्षी (२) ब्राह्मण। राते—लाल।

छन्द ९८ धूम केतु—धूम्र केतु। इसका उदय अशुभ समझा जाता है। बीस बीस—बीस विस्वा, निश्चयपूर्वक। यह एक महावरा है। अहित—अशुभ।

छन्द १०१ वार नारि—वेश्या। फल बेल—बेल के फल।

छन्द १०२ गन गुच्छन के—गुच्छन के समूह। मोहन वान—मोह लेने वाला बाण, वश मे करने वाला बाण। बसी करके—वश में करके। नृप मैन—महाराज कामदेव। अक्षय—नाश न होने वाला। निषग—तरकस। बिडारन—नाशक। पाँडर—पार्डर, वृक्ष विशेष।

छन्द १०३ कोरक—कली। कलाधर—चन्द्रमा। गिली—निगली हुई।

छन्द १०४ सित—श्वेत। तुषार—पाला। स्रम सीमर—पसीना। कुसुम स्रम सीकर—पुष्प रूपी पसीना। पुहुमी पति—पृथ्वी पति, राजा नल।

छन्द १०७ साखि—शाखी, वृक्ष। तूल—सदृश।

छन्द १०८ विभ्रम—तरगित। वीचिन—लहरों। तट लागि—किनारों तक। रंग—साज सामान। चोप—उत्साह। भाग के भाजन—भाग्य शाली। चहुँकोदनि—चारों तरफ।

छन्द १०९ मैन अहेरे—काम देव के शिकार के लिए। नफीरिन—शहनाई बजाने वाली।

छन्द ११० कनक—धतूरा। कुसुम-रमत—फूलों में रमते हैं। करनाल—तोप।

छन्द १११ गुलकेस—एक फूल। तुरीन—घोड़े। जीन झवा—जीनका लटकन। रौसन—क्यारी। गुललाला—एक फूल।

छन्द ११२ आमिल—अफसर। नाफरमा—अवज्ञा करने वाले। फरमान—हुकुम।

छन्द ११६ विसधर दंड—कमल की जड़ और नाल। वासव—इन्द्र। दुरद—हाथी। रदनावलि—दन्त पंक्ति।

छन्द ११७ तुरग तट—किनारे पर खड़ा घोड़ा। ताजन—कोड़ा।

छन्द ११८ पुण्डरीक—श्वेत कमल। कलंक—मृगलांछन, चाँद का काला धब्बा। मलिंद—भौरा।

छन्द ११६ चक्र कर—चक्राकार। मधुकर—भौरा। विसधर—(१) कमल, (२) शेषनाग। सवरन—सवर्ण; एक से रंग वाला। हर के भाइ—विष्णु के सदृश।

छन्द १२४ प्रति फलित—प्रतिविंबित। इक आँक—एक समान। मैनाक—एक पर्वत जिसके पक्ष इंद्र ने काटे थे।

छन्द १२७ चक्र...धरे—हाथ में चक्र और कमल का चिन्ह धारण करता है। नीलकंठ—शिव।

छन्द १३७ भहराइ—भयभीत हो कर। भजें—भगे। ता—उस। सर—तालाब। बहु सोरनि साजत—बहुत शोर करते हैं।

छन्द १४० छुद—चमड़ा, खाल।

छन्द १४२ बूझो—समझते हो। अरूझो—करो। अरुझना का प्रयोग लड़ाई करने के अर्थ में होता है।

छन्द १४३ वृत्ति—जीविका। सम चित धरैं—समान समझते हैं। पुहमीहि—पृथ्वी को।

छन्द १४६　जननी—माता। जीरन—बूढ़ी। चिकुला—बच्चे। जनमे—उत्पन्न हुए। घरटा—गृहणी।

छन्द १४७　आरिहैं—ठुनकेंगे, हठ करेंगे। मृनाल—कमल नाल। ससवाइ—शंकित होकर

तृतीय सर्ग : हंस-गमन

छन्द ४　समाधान—सावधान, होशियार।

छन्द ५　सैवल—शैवाल। छमता—क्षमा। रुद्र, अच्छ, मधुकर, भौरें—केश का उपमान है। निधान—घर। इस छन्द में रुद्र अच्छ, और मधुकर उपमान वाक्य कह कर इनके उपमेय का बोध कराया गया है। इसलिए रूपकातिशयोक्ति अलकार को ध्यान में रख कर पढ़ने से अर्थ के अच्छी तरह समझने मे सुविधा होगी।

छन्द १०　अनैसे—जरा भी नहीं, अशुभ।

छन्द १६　आकर—खानि। सौध—घर।

छन्द २२　सत मारग—सत्मार्ग, उत्तम पथ, धर्मादिक शुभ आचरण।

छन्द २५　घोष—शब्द, ध्वनि। रटै —रटें। यह द्वैत दर्शन का वह मत है जिसमे जीव और परमेश्वर अलग-अलग दो माने जाते हैं। निर्वेद—ग्लानि; यह शान्त रस का स्थाई भाव है।

छन्द २६　बछानि—बाघ के बच्चे को। सुरभी—गाय। प्रतिपांखे—पालती है। राग (१) आसक्ति (२) ललाई। विग्रह—(१) झगड़ा (२) शरीर। नयननि... धोखे—वहाँ किसी को राग नहीं है। राग के नाम पर कायल की आँख मे लालिमा है। वहाँ किसी मे विग्रह लड़ाई भी नहीं है। शरीर के धोखे में विग्रह शब्द का प्रयोग है।

छन्द २७ यम—योग के आठ अंगों में से एक। संग्रह...काम है—केवल भौरे मधुसंग्रह करते हैं।

छन्द २८ गूदति—पिरोते हैं। अच्छनि रुद्राक्ष। निवारिन—तिन्नी। यह एक प्रकार का अन्न है जो बिना बोये जाते अपने आप उत्पन्न होता है। इसकी गिनती फलाहार में होती है।

छन्द ३१ श्रुति—(१) कान, (२) वेद। नाघत—(१) उलन्घन करते हैं (२) कानों तक जाते हैं। श्रुति...नैन—वेदों का उलङ्घन कोई नहीं करता। केवल स्त्रियों की आँख कानों (श्रुति) तक जाने वाली है। चिकुरै—बाल।

छन्द ३३ बलकल—वृक्ष की छाल। कोसनि—खजाने। केवरो—सुवसन, सुदर वस्त्र—मुकुतौ मोक्ष, मोती। दण्ड—लाठी, डंडा (२) कर, महसूल। विगहत—ग्रहण करते हैं।

छन्द ३६ तेज पुंज—तेज समूह। तडितान—विजली। असमश्रु—दाढ़ी।

छन्द ३८ घनसार—कपूर। मृगमेद—कस्तूरी। त्रयताप—तीन ताप। दैहिक, दैविक, भौतिक तीन ताप हैं।

छन्द ४१ इडा, पिंगला, सुषमणा—ये तीन नाड़ियाँ हैं जिनके साधने का अभ्यास योगी लोग करते हैं। नारिन—नाड़ियों। पूरक रेचक-कुम्भक—ये प्राणायाम के तीन भेद हैं।

छन्द ४२ मयूख—किरण। पियूख—अमृत। उपवीत—जनेऊ। कंध लम्बित बाम है—बायें कन्धे से लटका है। रोकिबे को—वश में करने को। दाम—रस्सी।

छन्द ४४ जोन्ह—चाँदनी। कैधों—अथवा। असु—किरण।

छन्द ६५ मरोरनि—ऐंचना। चुनीन कनी—चुन्नी की कनी, मणि की कनिका। इस छन्द का प्रथम चरण इस प्रकार पढ़िए :—

"ता में कहाँ तिरछी दृग कोर औ भौंह मरोरनि की चतुराई।"

छन्द ६८ सिरी—शोभा । मित्र—सूर्य ।

छन्द ८० शची—इन्द्राणी । रंभ—रम्भा, अप्सरा । लच्छि—लक्ष्मी ।

छन्द ६२ वाचा—वाणी से । अवतर्‌यो—पैदा हुए, जनमे । हरि—विष्णु, सूर्य । हंस—सूर्य ।

छन्द १२० शुक्ति—सीप । अम्बुज—कमल । मुनि—अगस्त्यमुनि ।

छन्द १२१ अगार—गृह । पगार—परकोटा । स्रवती—चूती है । इदु—चद्रमा । रमणी—स्त्री । ऋतु आन पारै—पाले ।

चतुर्थ सर्ग : हंस-समागम

छन्द १३ कमल आसन—सरस्वती । वाहन—सवारी । हाटक कंज—स्वर्ण कंज ।

छन्द २४ कंडू—खुजली । पतिव्रत धरनि—पतिव्रत धारण करने वाली ।

छन्द ३७ विद्रुम—(१) मूँगा, (२) लाल कोमल पत्तियाँ । अधरान—ओठों को । प्राणनि वारि—प्राणों को निछावर करके ।

छन्द ३८ वाकी—उसकी, नल की । पैधतु है—पहनती है । मृदु वागै—कोमल वस्त्र । वागै—वाग, उद्यान ।

छन्द ३६ रची ही हुती—बनाया ही था, उत्पन्न ही किया था । कैरविनी—कोई, जल में होने वाला एक पुष्प विशेष । यह रात में चाँदनी में खिलता है।

छन्द ४१ गूँदत—गूँधता है । दर्भ—कुश । मालती—चमेली—यहाँ दमयन्ती से अभिप्राय है ।

छन्द ४८ सियरावति—शीतल करती है । चन्द्र पियूष—चन्द्रमा का अमृत । मयूखन—किरणों से । जो मनोरथ (लज्जा के कारण) जी से नहीं निकल सकता वह शब्दों में नहीं कहा जा सकता ।

छन्द ५० श्रुति आखर—वेद के अक्षर।

छन्द ५२ तिरजंक—तिरछी। विलासिनी—स्त्रियाँ। छलकै—उमड़े।

छन्द ५६ नाग—हाथी। अनग—कामदेव। चपि कै—दबकर।

छन्द ५७ तो हिय की थिरता निहचै बिन—तुम्हारे हृदय की स्थिरता निश्चय किये बिना।

छन्द ५८ बानि—आदत, लत। कै—अथवा। चलि कै—आगे चल कर।

छन्द ७१ आरतन—दुखी। गुण सींव—यह सम्बोधन कारक मे है।

छन्द ८६ हर समर—शिव और स्मर (काम)।

छन्द ८५ न परै वह चीनो—वह पहचान में नहीं आता। खवासनि—दासियों से।

छन्द ६१ यम-अनुजा—यमुना। कुंजर—हाथी।

छन्द ६२ दशा दस—दसवीं दसा। वियोग की दस दशाएँ होती हैं। उनकी अन्तिम दशा। चक्षुराग प्रथमं चित्तासंग्रस्ततोथ संकल्पः। निद्राछेदस्तनुताविषयविषयनिवृत्तनाशः। उन्मादो मूर्छाभूतिरित्याताः स्मरदशा दशैवेस्युः।

छन्द ६५ कर कौल—कर कमल, हाथ रूपी कमल (परिणाम अलंकार)। अँचैहै—पान करेगा। नेसुक—तनिक।

छन्द ६८ फिरि बिधि साजे—फिर ब्रह्मा ने बनाया। परमाणु—परम सूक्ष्म तत्व। परमाणुओंके सयोग से सृष्टि की उत्पत्ति आधुनिक विज्ञान सम्मत भी है।

छन्द ६६ मवासी—किला, गढ़। हरा के—हार के। झबा—लटकन। छमा—पृथ्वी।

छन्द १०० कण्ठ सिरी—कंठश्री, एक आभूषण। गिलोला—गुलेल की गोली। पनच—प्रत्यंचा, धनुष की रस्सी।

छन्द १०१ समर—युद्ध। समर—कामदेव। चिकुरनि—बाल। भाल

में धनुष—भृकुटी से तात्पर्य है । मकर पत्र—मीन केतु, कामदेव की पताका । पत्रनसाला—पत्तों की कुटी ।

छन्द १०२ अतिचल चाली—अत्यन्त चंचल चालवाली । पग खोज गहे—चरण चिन्हों को देखती हुई ।

छन्द १०३ पिये न अघाइ कै—पीते भी तृप्त नहीं होती । विषाद—रंज । वाद पर्‌यो—विवाद किया ।

छन्द १०७ किसलय—कोमल पत्ते । तलप—तल्प; बिछावन ।

पंचम सर्ग : दमयंती-विरह वर्णन

छन्द २ नल को गुन गुन आनि—नल के गुण को धनुष का गुन (प्रत्यंचा) बनाकर । अनग—कामदेव ।

छन्द ३ अतनु—अनंग, कामदेव । कथा रस—कथा रूपी रस, जल ।

छन्द ४ सुद्धि—स्मरण, सुध । नयन खंजन की गति पंगु है—नयन-रूपी खंजन पगरहित हैं अन्यथा प्रिय नल के समीप पहुँच जाते ।

छन्द ५ दिन के ससि...निदरे—दिन के चन्द्र की शोभारहित समानता को भी मात करती थी ।

छन्द ६ तरुणावस्था ने तरुणी के कुचों को पुष्ट बनाया परन्तु कामदेव-रूपी कुम्हार उसे तपा रहा है ।

छन्द ७ ओज से—जैसे उग्र पाला पड़ने से कमल जलता है ।

छन्द ८ जनु...नयो है—मानो काम ने हृदय को दो टूक होने से बचने के लिए उस पर कुचरूपी दो पत्थर रख दिये हैं । मानो दो कुच उसी अपराध के लक्षण हैं ।

छन्द २० बिसहरनि—विषरूपधारणी ।

छन्द २३ मलैज—मलयागिरि, चन्दन । सुअग—कुच ।

छन्द २५ नरेस.. नहीं—जब नल के हाथ लगेंगे तभी सब संताप मिटैगा ।

छन्द ४५ सिखी—अग्नि ।

छन्द ४६ जोन्हपिसाची—चाँदनी से पीड़ित—पागल ।

छन्द ५१ गेदौरा—छोटा गेंद ।

छन्द ५४ चन्द्रमा में जो कुरंग वा मृग है उसे तमाल दल खिलाओ, इसके चरने से चन्द्र रुक जायगा ।

छन्द ६५ रति क्यों न लहो—क्यों नहीं प्रेम (दया) करते हो। सरागत हो—तपित करते हो, दागते हो ।

छन्द ७० कामदेव को पुष्प बाण अस्त्र मिला है, अगर अन्य अस्त्र मिलते तो न जाने क्या करता, सम्भव है संसार को ही नष्ट कर देता ।

छन्द १४ मुख नयनन्ह—आँखों के मुख अर्थात् पलक।

छन्द १५ कमलकली—नयन से तात्पर्य है ।

षष्टम सर्ग : सुर-संगम

छन्द १ पर्वत नामक ऋषि नारद के साथ चले ।

छन्द ५ रवि.. लेखि—सूर्य ने अपनी किरणें मुनि को देख तापहीन कीं, द्विजराज अर्थात् चन्द्रमा ने रवि की किरणें हर लीं—अर्थात् और चमकने लगा ।

छन्द ६ सुर-सिंधु—आकाश गंगा ।

छन्द २१ समर—युद्ध । सोवत पाँइ पसारि—निश्चिन्त हैं ।

छन्द ४० कश्यपसुता—पृथ्वी ।

छन्द ४२ विदरभ अवनी के सुभट को—विदर्भपति, भीम को ।

छन्द ४३ पारावारै—समुद्र । नरपति—नल ।

छन्द ६२ सिखि—अग्नि । जलनाथ—वरुण ।

छन्द ६३ आयासु [अपासु ?]—थकावट।

छन्द ६८ दर्भयुक्ति...गाथ—वेद यह कहते हैं कि तृण के समान अपने जीवन को माँगने वालों के लिए दान मे देना उचित है।

छन्द ६९ पकज यदि कीचड़ में सना है तो लक्ष्मी का निवास होने योग्य नहीं है। वास्तव मे याजक के कर कमल ही लक्ष्मी (धन, सम्पदा) के योग्य स्थान है—अर्थात् दान देना ही श्रेष्ठ कार्य है।

छन्द ७० भूतल ..को—वास्तव में पृथ्वी के लिए भार पर्वत, समुद्र वृक्षादि नहीं हैं वरन ऐसे लाग जो याचक को दान नहीं देते हैं।

छन्द ७३ अधमरण (अधमर्ण) उधार—मृत्यु के उपरान्त भी लौटाने योग्य उधार।

छन्द ७५ देवता अमृतपान करते हैं इसलिए कहते हैं कि जो जैसा खाता है उसका शरीर वैसा होता है। अपने को देखकर हमारे नयन मानो सुधा पान कर रहे हैं।

छन्द ७८ जीतबहूँ [सम्भवतः जीवन हू पाठ होना चाहिए]—मेरे जीवन पर्यन्त (प्राण तक) जा कुछ आप चाहो। कीबे—करने।

छन्द ८१ भूनल...निहारे—हे नल इस पृथ्वी पर समुद्र एक तुम्हीं मिले और सब नृप तो कूप के समान हैं अर्थात् क्षुद्र हैं।

छन्द ८३ इस प्रकार निर्मल-वंश के गुण को प्रत्यचा बनाकर इंद्र स्वय धनुष बनकर कपट बचन बोला।

छन्द ९६ सीत भासि—चन्द्र। ससक अकु—शशक की छाप वाला (चंद्र को शशांक कहते हैं।)

छन्द १०१ कामधेनु पशु होकर, कल्पवृक्ष जड़ पदार्थ होकर भी माँगने पर देते हैं और तुम मनुष्य होकर नाहीं करते हो।

छन्द १०२ पल भर में मनुष्य मर जाता है अतः मृत्यु को सामने समझ कर दान देना चाहिए।

छन्द १०३ दान के समय गिराये हुए जलधार के मुक्तागन से आभूषित जो लक्ष्मी है वह तुम्हारे योग्य नववधू है। कर्ण ने चर्म, कवच (ढाल) के लिए दिया था। दधीचि ने अपनी हड्डी वज्र के लिए दी थी। ऐसे दानी भी नहीं रहे। तुम्हे धर्म न छोड़ना चाहिए।

छन्द १०४ विन्ध्याचल अपने गुरु की आज्ञा मानकर वचनबद्ध होकर अभी तक वैसे ही पड़ा है।

छन्द १०७ कीर्ति का रंग सफ़ेद माना जाता है। इसलिए कहते हैं कि अन्य वस्तु जो नीले पीले और लाल हैं उनमें भी तुम्हारी कीर्ति का सफ़ेद रंग चढ़ा हुआ है अर्थात् उन पर तुम्हारी कीर्ति का रंग चढ़ा हुआ है।

छन्द १०८ भानुपूत—सूर्य्यपुत्र। शनि पगु माना गया है।

सप्तम सर्ग : दमयन्ती-दर्शन

छन्द २ देवताओं की आज्ञा मान कर दूत कार्य्य करने के लिए उद्यत नल ने वियोगरूपी अग्नि को उसी प्रकार दूर रखा जैसे अगस्त्य ने समुद्र पान करते समय समुद्र के भीतर रहनेवाले बड़वानल को रखा था। दुर्वारदीह—दूर करने योग्य दीह—बड़वानल।

छन्द ३ नल की परनालि—नल रूपी परनाले से दमयंती संवाद का अमृत रस पीने की इच्छा रखते थे।

छन्द ८ गोभा—किरणें।

छन्द १२ रावटी—महल। भेंट भई—सामने आ गई। तासों—दमयंती से तात्पर्य्य है।

छन्द १६ बालन...पसारयो—बालाओं की पंक्ति रूपी गुन (डोरे) से मानो काम ने जाल फैला रखा था।

छन्द २१ फलहीन......तेहिके—काम ने स्त्रियों के कटाक्ष के बहाने शर चलाया वे पुष्पबाण व्यर्थ गये क्योंकि नल अदृश्य थे और उसने अपने मन को वश में कर रखा था।

छन्द २६ सौंधनि—अटारी, सात खंडों के मकान को सौध कहते हैं।

छन्द ३० हेम... जैसी—नल से मिल कर हंस ने जिस प्रकार की दमयंती की आकृति कमल के पत्ते पर बनाई थी वैसी ही नल ने बनाई।

छन्द ३१ कपूर के रज में पद चिह्न पड़ा उसमें उभड़ी हुई उँगलियों की छाप मे चक्रवर्त्ति के लक्षण दिखाई पड़े।

छन्द ३८ नल लेखि .....मेलो—नल के लिए मन मे संकल्प करके जो माला फेंकी वह सचमुच के नल के (जो अदृश्य था) गले में पड़ी।

छन्द ४१ पहुमी—पृथ्वी। झख-केतु—मकर केतु, स्मर।

छन्द ५७ अरध......कुच—सखी ने अर्धचन्द्र तुल्य नख-रेखा देखी। करत ..बासु—शिव (हरि) के भय से भाग कर काम कुच कुंभ पर नेवारा या नौका विहार कर रहा है। अर्धचन्द्राकार नखक्षत मानो नौका है। पयोधर रस समुद्र है।

छन्द ५८ काम संताप देता है इस लिए उसके शर के उपकरण पुष्प को छेद कर सखियाँ माला बनाती हैं।

छन्द ५९ मकरी—मगर जो गंगा का वाहन है।

छन्द ६० सारिका—पासा, सारिका पक्षी।

छन्द ६६ लिपि..... सुजान—सुरलोक की लिपि भूलोक में कोई नहीं पढ़ सकता है।

छन्द ६७ पुरहूत—इन्द्र। हरा—हार।

छन्द ७२ सतमख—इन्द्र, सौ यज्ञ करने वाला। लास—विलास।

छन्द ८१ जब सुरलोक को छोड़ देवता पृथ्वी पर आ रहे हैं और उनके पुण्य क्षीण हो गये हैं तब पृथ्वी को छोड़ वहाँ स्वर्ग लोक कौन जावेगा।

छन्द ९० सरकरा—शक्कर, मिठाई, लाभ।

अष्टम सर्ग : दमयंती-वर्णन

छन्द २ अनुराग रूपी समुद्र में डूबने से बचने के लिए दृष्टि कुच रूपी कनक पर्वत पर चढ़ गई।

छन्द ३ रूप पानिप पियूख—रूप के पानी रूपी सुधा।

छन्द ४ तम हेत भयो दिग भेद कहा—मृगमेद रूपी अंधकार के कारण दिशा भ्रम हो गया और दृष्टि घूम-घूम कर वहीं रह जाती है।

छन्द ५ युगल जंघों को पकड़ कर दृष्टि संभल गई अन्यथा नितंब चक्र पर घूमने के कारण गिर पड़ती।

छन्द ६ बसन ही मानो नेत्र हैं। इस लिए मेरे नेत्रों को वस्त्र समझ कर धारण कीजिए। नेत्र इसलिए उसके पाँव पड़ते हैं।

छन्द १० मानो ब्रह्मा ने जो स्त्रियाँ पहले रची थीं उनके रचते समय उसके हाथ मजे न थे परन्तु दमयंती को रचते समय उनके हाथ साफ थे। अतः दमयंती उनकी श्रेष्ठ रचना थी परन्तु संभवतः आगे और स्त्री रत्न ब्रह्मा के हाथ से बनें इस लिए मानो उनकी सुन्दरता को जीतने के लिए वह पहले ही से ऐंठती हुई खड़ी है।

छन्द ११ उपमानों से दमयंती के अंगों की उपमा दी गई थी अतः वे इसे अपनी प्रतिष्ठा समझ प्रसन्न थे।

छन्द १४ मयूर की पूँछ में 'चन्द्र' होते हैं। मानो इनने चन्द्र इस

हेतु यहाँ एकत्रित हैं कि वे दमयती के मुख की बराबरी कर सकें।

छन्द १६ चाबुक......के— मानो कामदेव राजा के घोड़े पर लगे कोड़े हैं। वेणी को कोड़े से उपमा दी है।

छन्द १८ इसके मुख की समता पाकर शशि ने जो श्यामलता तजी उसे लेकर स्मर ने दो टूक कर भौंह बना दिया।

छन्द १९ स्मर के पाँच बाण माने गये हैं। तीन से तीनों लोक जीते गये। दो से (नेत्र के बहाने) स्मर ने शरीर रूपी कवच को भेद डाला जिसके कारण महा मोह बढ़ा।

छन्द २३ करन कूप (कान रूपी कूप) के भय से तथा नासिका रूपी दीवाल के कारण।

छन्द २६ होंठ बिबा फल (कुंदरू) की समता नहीं चाहते क्योंकि बिंब द्रुम (वृक्ष) की अपेक्षा करते हैं परन्तु होंठ विद्रुम हैं—बिना-वृक्ष के हैं।

छन्द ३१ हीरन की द्युति जीरन होत—हीरों की चमक जीर्ण हो रही है। बतीसी—दाँत। स्वाँस के सुगंध के कारण भौरों की भीड़ लगी रहती है।

छन्द ४१ रसवादु—रस की वार्ता। कानन—कान। विपरीत रति के समय का प्रसंग है।

नवम सर्ग : सुर-संदेश-कथन

छन्द ६ नटवा से—नट के समान।

छन्द २० फले.... . तेरे—संभवतः 'तेरे' के स्थान पर 'मेरे' पाठ होना चाहिए।

छन्द २४ अखबन्ध—दृष्टि बन्ध, क्योंकि द्वार पालों की आँखों को धोखा देकर नल ने प्रवेश पाया था। देश स्वरूप-'देव-स्वरूप'

पाठ अधिक शुद्ध जान पड़ता है। संस्कृत मूल मे 'मत्वामरं' है।

छन्द २६ हर नयन......बनाइ कै—मानो एक शिव के नयनरूपी अग्नि कुंड में अपने को होम करके काम ने (उस पुण्य के पुरस्कार में) नया शरीर धारण किया है। कोस—कोष, निधि। सियरात—शीतल होते हैं।

छन्द २७ सायल—सवाल करने वाले, भिक्षुक। नयन की उपमा कुरंग, हिरन से देते हैं। चंद्र का वाहन हिरन हैं। इस हेतु शशि के समीप रहना चाहते हैं।

छन्द २८ तुमने जग प्रभा को राशि एकत्र कर ली इस कारण चन्द्र को इधर-उधर बचे हुए प्रभा के टुकड़े बीन कर अपने को सजाना पड़ा।

छन्द ३३ बेनु भाव ? मूल का तात्पर्य है जो स्तुति दुर्जन (विरोधियों) के मुख से अच्छी लगती है वह प्रिय जनों के मुख से क्यों न अच्छी लगे। बेनु भाव का संभवतः अर्थ होगा वेणु के सदृश्य अर्थात् बाँसुरी की ध्वनि के सदृश्य, मीठी।

छन्द ३७ सरपंच—पंचशर, पंचबाण, कामदेव। चार देवता थे—इन्द्र, वरुण, यम और अग्नि।

छन्द ३८ तुम्हारे शरीर पर यौवन और शैशव दोनों राज कर रहे हैं अतः एक का राज नहीं है, इसी कारण वे (चारों देवता) भी तुम पर अपना राज करना चाहते हैं।

छन्द ३९ आसा—दिशा।

छन्द ४२ इन्द्र शिव की पूजा इसलिए छोड़ बैठा है कि उनके सम्मुख आने पर उनके मौलि पर विराजमान शशि के कारण उसे कष्ट होगा। विरही जन को चन्द्रमा दुख पहुँचाता है। कवि विलास है।

छन्द ४३ पिक की बोली 'कुहू' ने सचमुच चन्द्र को कलाहीन कर दिया। 'कुहू' का अर्थ संस्कृत कोष में इस प्रकार दिया है— 'कुहूः स्यात्कोकिलालापनष्टेन्दुकलयोरपि' इति विश्वः।

छन्द ५० तात्पर्य है कि हुताशन ने काम को भस्म किया था अब काम स्वयं कटाक्ष में बसकर हुताशन को परास्त करता है अर्थात् इससे अधिक तापमान है।

छन्द ५७ यह छन्द 'दूती बचन' नहीं जान पड़ता। सभवतः यह पाठ अशुद्ध है। इसे नल ही का कथन समझना चाहिए।

छन्द ६८ घटक—? संभवतः घनक (घना + एक) होना चाहिए।

दशम सर्ग : नल-परिचय

छन्द ६ कुल स्यान (?)—संभवतः अर्थ है छल छद्म—छल छद्म वेष। नल दूत बन कर गये थे। इस कारण अपना परिचय छिपाते थे।

छन्द १० मेरो...कुल समल सुन्यो...केहि काज—मेरे कुल का परिचय सुनने से लाभ।

छन्द २० जलपति से वरुण और परेतराजा से यमराज, कौशिक से इंद्र और करभ-मुख सिख से अग्नि तात्पर्य है।

छन्द २७ जैसी...रेखा—पत्थर की लकीर जैसी होती है।

छन्द ५७ खगराज से तात्पर्य हंस से है।

छन्द ११६ पंचम तान—कोकिल।

छन्द १२१ बिदेह—काम, अनंग।

छन्द १२१ मधु—वसंत।

छन्द १३२ सबीह—शबी, तस्वीर।

एकादश सर्ग : स्वयंवर-वर्णन

छन्द ७ धुंधुरि—धूल राशि।

छन्द ११ पुरोहितों द्वारा मंत्रबद्ध होने के कारण उस नगर में कोई अमानवी नहीं पहुँच सकता था। अतः 'नैरिति' दिगपाल कैसे पहुँचते।

छन्द १२ चन्द्रमा क्यों नहीं पहुँचा इस पर कहते हैं क्योंकि उसके बाहन मृग दमयन्ती की आखों से हार खाये हुए हैं अतः डरते हैं।

छन्द १३ कुबेर स्वच्छ शैल में अपनी कुरूपता देख दमयंती की पुण्य सुन्दरता सोच नहीं आये।

छन्द १६ शेषनाग स्वयबर में इस लिए नहीं गये कि भूमि भार कौन सँभालेगा। और दूसरी बात यह थी कि जिसके हजारों आँखें हों वह वहीं से देख सकता है, स्वयंवर मे क्यों जाय।

छन्द १८ आसन पागे—आशा में लीन।

छन्द १९ पहले चन्द्र के समान मुख बनाया, फिर कमल को अच्छा समझ उसे धारण किया।

छन्द २२ अलोक नल—छद्मवेशो नल।

छन्द २३ जिस प्रकार पारिजात के बिना (अन्य देवतरु के होते हुए भी) सुरद्रुमों की शोभा नहीं रहती इसी तरह बिना नल के लोग अच्छे नहीं लगते थे।

छन्द २४ महादेव हिय हार—महादेव के हृदय के हार।

छन्द २५ कुंडिन वासव—कुंडिन के इन्द्र, भीम राजा।

छन्द ३२ देवता और मनुष्य में अतर यही है कि देवताओं के नेत्र 'अपलक' होते हैं और उनके फूल नहीं कुम्हलाते हैं। वहाँ स्वयंवर के लिए उपस्थित देवता, मनुष्य ऐसे मिल गये थे कि पता ही न चलता था। मनुष्यों की आँखें अद्भुत दृश्य देखने में 'अपलक' थीं और उनके फूल चामर के पवन अर्थात्

बराबर हवा करने के कारण कुम्हलाने नहीं पाये थे, इसलिए देवता और मनुष्य आपस में मिलजुल गये थे।

छन्द ४४ गीरवान—देवता, वाणी।

छन्द ४८ तारक रस्मि—तारक रश्मि। रद-छद—होंठ।

छन्द ६० विपची—वीणा।

छन्द ६३ दमयती मानो जाल है जिसमें महीप गण फँस गए।

छन्द ८४ व्याकरण—व्याख्या। आदेश—आदर्श। रूप करि—रूप बनाकर।

द्वादश सर्ग : द्वीपपति-वर्णन

छन्द २० लोकेस नारि—सरस्वती। हरि (लोकेश) की नारी।

छन्द २५ लखत गहैं—तेरी अद्भुतरचना देख ब्रह्मा अपने ऊपर गर्व करते हैं।

छन्द ३२ सिया—श्री, लक्ष्मी। पकज नयन—विष्णु।

छन्द ४८ सुर बारन कुम्भ—एरावत का कुम्भ वा मस्तक। मंदर...... आये—इस कारण दबेगा कि कहीं फिर से मंथन न हो।

छन्द ५५ मानौ... .....धरै—शाल्मली के फूलों के गिरने से मानो भूमि पर मुलायम गलीचा बिछ गया है जिस पर तू बिहार कर सकती है।

छन्द ५५ परमेस्वरी—सरस्वती।

छन्द ५६ इच्छुर . निधि—ईख के रस का समुद्र। तेरे अधरामृत पान के पश्चात् वह मधु रस समुद्र से विरक्त हो जायगा। रावरे.... . घनेरे—तेरे चन्द्रमुख को देख अमावस्या की रात मे भी पूर्णिमा का भ्रम होगा।

छन्द ८१ परदेह—विदेह, स्मर।

त्रयोदश सर्ग : देशपति-वर्णन

छन्द १ निज तरुणी—अपनी स्त्री।

छन्द ६ पारावार—समुद्र। राजा सगर ने सागर खोदा था। अरनव-अर्णव—समुद्र। राम ने समुद्र बाँध कर लंका पर चढ़ाई की थी।

छन्द ९ तूरज—एक बाजा, तूर्य्य। रंभा—केला।

छन्द १३ अरिवर...ठौर—जंगल जंगल फिरते हैं। बनी न एकौ ठौर—कहीं भी न बनी अर्थात् ठिकाना न लगा।

छन्द १४ तेंदु—एक वृक्ष। नराच—वाण।

छन्द १६ काक पताका पै चरन—पताका पर काक के बैठने से उसका वायु में फहराना रुक जाता है इस प्रकार मानों उसमें ग्रह वा प्रतिबंध लग जाता है।

छन्द १९ कीर बानी गुने ते—सोते समय उनके प्रलाप सुनकर उसे तोते दिन में रटते हैं जिसे सुनकर उनके शत्रु भग जाते हैं।

छन्द २० सीतल चंद न गनावैं—शीतल चन्द्रमा को शीतल नहीं मानते।

छन्द २६ हरमै—बेगमें।

छन्द २८ मकरी मनि—लक्ष्मी अपना वाहन (मकरी) छोड़ मणि मकरी के बहाने आ पहुँची है।

छन्द ३२ आसुग—वाण।

छन्द ४० खवासिन—खवास, पानदान सम्हालने वाली परिचारिका।

छन्द ४२ पतान—पत्ते।

छन्द ४९ निंजोस—निसिचौस (?) केशकलाप निसिबासर अन्धकार पुंज के समान रहते हैं।

छन्द ४६ सुखिर—बिमोट, बाँबी जिसमें साँप रहते हैं। सतावैं—दुख देती है (सर्पिणी)।

छन्द ५३ कूरम रमनी के दुगध—कछुए की स्त्री का दूध। कछुए को दूध होना असंभव है।

छन्द ५५ अलीक—असत्य। चार अलीक—चारों नकली नल से तात्पर्य है।

चतुर्दश सर्ग : पंचनली वर्णन

छन्द ४ लेखनि—'लेखा अदिति नन्दना'—देवाः, देवता। इस सर्ग में पचनली वर्णन श्लेषपूर्ण है जिसका आरोप नल और नल रूप धारण करने वाले चारों देवताओं पर होता है।

छन्द ७ पारथीव—पृथ्वी के कार्य; तृण, काष्ठ आदि। हेति—पटुता।

छन्द १६ सोनचिरी—सोने की चिड़िया। पक्षि विशेष।

छन्द २१ कहने का तात्पर्य यह है कि यदि सरस्वती के हाथ से नल के गले में हार पहनाऊँ तो विष्णु ईर्ष्या वश सरस्वती से रुष्ट होंगे कि उसने नल को वरण किया इस तरह दंपति में कलह होने की आशंका है।

पंचदश सर्ग : देव-गमन

छन्द १० सातुक थंभ—सात्विक स्तंभन।

छन्द १४ नल मुख देखते ही दुरे (मुंदे)।

छन्द १८ मघवा—इंद्र। मति—सरस्वती।

छन्द २८ पुही—पिरोई हुई।

छन्द ४० मसी छिपावत और—अपनी कालिमा छिपाते हैं।

छन्द ४६ ओली आदि—अंचल पसार कर, सहर्ष स्वीकार करना।

छन्द ५७ हंस चढ़ी देवी पगु धारे—यहाँ देवी पगु धारे खटकता है, परन्तु कवि ने तुक पूरा करने के लिए 'धारे' लिखा है।

षोड़स सर्ग : वर-यात्रा

छन्द १ अरथिन—याचकों के लिए।

छन्द ४ पाहुनो—जामाता के लिए प्रयोग होता है।

छन्द १४ आकालिक—'छिदाआकालिक' इति—कपड़ों में कटाव करके जो बनाये गये हों।

छन्द १६ घन—नगाड़े। सुखिरै—तूंबी, बीन (मुखवाद्य)।

छन्द १७ बैनुन—बेणु, बसी। झरझर—झाँझ, एक बाजा। ढफनि—ढप, एक बाजा। मर्दल—मृदंग।

छन्द २२ मानौ ....तमधार—मानो अंधकार की धारा ने जो नक्षत्र रूपी रत्नों को निगला था उसे उगल रही है।

छन्द २७ रस हास सिंगार—हास्य रस का रंग सफेद और श्रृंगार रस का लाल माना गया है। इसलिये मुक्ता और कुदंकली की उपमा दी है।

छन्द ४१ दुकूल—दुपट्टा। सोहो—लाल, सूहा रंग।

छन्द ५४ पनरत—परिधान, फैल गई है। करवाल—तलवार।

छन्द ५५ चग—एक बाजा। द्विजराज—ब्राह्मण लोग।

छन्द ६१ रसना—करधनी, मेखला। अवतंसनि—वश वाले। झकै—खीजती है। बंधुवा—बधा हुआ (हाथी)। रखवारेन—रखवालों ने। दै पग कीली—पैरों में अर्गला देकर। कीली—एक प्रकार का काँटेदार जंजीर जो हाथी के पैरों में डाली जाती है।

छन्द ६६ कानन—कानों तक फैले हुए। सिगरी—सभी लोग। संभवत 'नगरी' पाठ होना उचित है।

सप्तदश सर्ग : पुर-प्रवेश

छन्द ४　हवदानि—हौदा जो हाथियों की पीठ पर कसा जाता है।

छन्द १०　चारखी—आतशबाजी की चरखी।

छन्द १७　अहि की लतिका—अहिवल्ली।

छन्द १६　माँडये—मंडप। निकाई—शोभा।

छन्द २२　साखि—साक्षि, गवाह।

छन्द १८　पत्थर भी हाथ लगने से तूल (रुई) की तरह उड़ जाता है परन्तु दमयन्ती पत्थर से भी दृढ रही इसलिए इन्द्र हार गया। ऐसी दृढ दमयन्ती के सामने पत्थर भी दृढता में हीन है इसलिए वह उसे पैर के नीचे रखती है।

छन्द ४०　लाजा—लावा, धान का लावा जो शुभ अवसरों पर काम में आता है।

छन्द ४२　तुच्छ गल—असुन्दर गला। तुम्हारा गला असुन्दर है इसलिए माला ऐंच लेती है।

छन्द ७१　बिन आमिष .. पहचाने—जो आमिष (मांस) नहीं था वह मांस सा लगा।

छन्द ७७　थार में युवती का प्रतिबिंब देख उस पर दो मोदक रख उसे दबा दिया मानो रति में कुच मर्दन कर रहा है।

अष्टादश सर्ग : कलि-समागम

अटोक—बेरोक

छन्द १　धरनि—पृथ्वी पर। समुद्र की लहर की तरह आये और लौट गये।

छन्द १६　ज्वलित—प्रज्वलित, दग्ध।

छन्द ६६　पासिहस्त—वरुण, जलदेवता।

छन्द ७६　सीतभानु—शीतल भानु, चन्द्रमा।

छन्द ३२ संहीतै—समीप ।

छन्द १०० तातेइ—तप्त, गरम, जलता हुआ ।

छन्द ११८ बिभीतक—बहेड़ा वृक्ष । इस सर्ग में कलि का आना और उसका नल की नगरी में कहीं स्थान न पाना वर्णित है । इसे ध्यान में रखकर पढ़ने से अर्थ स्पष्ट हो जाता है ।

एकोनविंश सर्ग : संभोग-वर्णन

छन्द १ दार—(१) देवदारु (एक प्रकार की लकड़ी जिससे नाव बनती है)—(२) स्त्री (दमयन्ती) ।

छन्द १० चित्रसारी का वर्णन है ।

छन्द ४० निधुवन—काम, स्मर, रति । नलिन—नलिनी, पद्मिनी ।

छन्द ५३ पंकरुह—कमल । यहाँ हाथ के लिए आया है ।

छन्द ७६ दूसरे चरण को इस प्रकार पढ़ना ठीक होगा—'अंग-अंग में सानि पार भई सुख सिन्धु के ।'

छन्द १०२ सरटा—कच्छप के लिए आया है ।

छन्द १०३ तूल—तुल्य ।

विंश सर्ग : सूर्योदय वर्णन

छन्द ३ जात पास नितंबिनि—पश्चिम दिशा के लिए आया है । सितभानु—चन्द्रमा । बासवी दिशि—पूर्व दिशा ।

छन्द ४ दीधिति—समुद्र ।

छन्द ६ अर्चाचै—सूर्य्य की पूर्वान्ह किरणों को अर्चा के समान माना है ।

छन्द ७ चरमाचल—अस्ताचल । सरवरी—शर्वरी, रात्री ।

छन्द ८ गल सोइ—एक प्रकार की तकिया ।

छन्द १० सिकार—शिकारी, अहेरी ।

छन्द ११ सस—खरगोश, शशक। चन्द्र अपने शशक की रक्षा के निमित्त भागता है। तारा—मानो पारावत (कबूतर) हैं।

छन्द १२ कोक—कोकशास्त्र।

छन्द १८ इन्द्र की दिसि—पश्चिम दिशा।

छन्द २१ पीत मात (संभवतः पीततम होना चाहिए) जिसने तम अंधकार को पी लिया। सुलकेसरीन—शिशु ?

छन्द २२ विसिनी विरह बलाइ—विसिनी, कोई जिसका सम्बन्ध चन्द्र से है।

छन्द २७ पखानि—पाषाण (?)

छन्द २८ कबरी—रूप वाली। तरहरि—नीचे।

छन्द २९ द्विजपति माइ—शंख सम सुयश मानकर उसे चन्द्रमा का भाई कहा क्योंकि वह भी समुद्र से निकला है। कर छेद—किरण नाश, तेज हानि।

छन्द ३० अरा—आरा। अरकोकनि—अरु + चक्रवाक।

छन्द ३२ पृच्छांसि—प्रश्नवाचक (कौ ? कौ ? करने वाले कौए)। तुही, तुही—करने वाली कोकिल उत्तर देती है।

छन्द ३३ कोक—चक्रवाक। सुअगन—सुआँगन। तमहर—सूर्य।

एकविंश सर्ग : नल-विलास

छन्द ४ वराटक—बीजकोश युक्त कमल।

छन्द ६ सेस......प्यारी—आलिंगन से तात्पर्य्य है।

छन्द २६ दै-हीन—दया रहित।

छन्द ३८ पद......सजाइ—नख चिन्हयुत कुच ने करि कुंभ की शोभा चुरा ली इस कारण मैंने (राजा ने) उसे सज़ा दी है अर्थात पीड़ित किया है।

छन्द ३९ सिर .. तापुहै—सिर ने क्या अपराध किया जो अपना पग नहीं छुलाने देती।

द्वाविंश सर्ग : वासर-कृत्य वर्णन

छन्द २ चीन की चीर—चीन देश के रेशमी वस्त्र, चीनांशुक। गिलमै—गलीचे।

छन्द ८ खिलति—खिलअत।

छन्द १९ अभ्र—बादल। मार—सुन्दर, स्मर। ईरखा—ईर्ष्या।

छन्द २४ पितर......पुनरुक्ति—तर्पण के निमित्त हाथ में लिया हुआ तिल हाथ के तिल से मिलता है यही पुनुरुक्ति सा हुआ। अंभुपति—जलपति, वरुण।

छन्द ३९ पूरि रह्यो बतिया बतिया मे—बत्ती को बत्ती में मिलाया, आरती करने के लिए दीप की बत्ती मिलाया।

छन्द ४१ निवेद—नैवेद्य। नासत—नाशत। अदूर—समीप से।

छन्द ४६ परलाप—प्रलाप, विनती। जड़ बैन—जड़, मूर्ख के बचन।

छन्द ४९ और ५० इनमें अवतारों की वंदना है।

छन्द ५७ इस दोहे का अर्थ स्पष्ट नहीं है। इसमें 'बुद्ध' की बन्दना है। दूसरे चरण का पाठ भी स्पष्ट नहीं है।

छन्द ७१ तुरसाइन—तुर्श, खट्टा।

छन्द ६१ सु-बरन—सुन्दर बचन (अक्षर), स्वर्ण।

छन्द ६४ बानि—वाणी। पुलिन—सिकता, बालू।

छन्द ६९ विदित..... उछावरो—यह पाठ स्पष्ट नहीं है। संभवतः अर्थ है कि 'तिहारे बचन' अहेरी के समान कोकिल आदि .. पक्षियों को बींधते हैं अर्थात् उनसे अधिक मधुर होने के कारण उन्हें कष्ट दते हैं। 'विदित बिंधे री जीव उदित उछावरो'—पाठ कदाचित हो।

त्रयोविंश सर्ग : चन्द्रोदय वर्णन

छन्द १ बारुनी—पच्छिम दिशा। राग—लालिमा।

छन्द २ पासिकी—वरुण की, पच्छिम दिशा। दुरकात—ढुरकात, गिराता है। गौरिक—गैरिक, गेरू नामक लाल पत्थर।

छन्द ४ भीलनि—भिल्लिनी, भील कुमारी। अरुनचूड़—अरुण शिखा।

छन्द ५ पासा—दंड।

छन्द ६ किरातु काल—काल, संध्याकाल रूपी किरात। पदम्रुक—रक्त बिंदु। पसारा—फैलाव।

छन्द ८ तुचा—छिलका। अर्थ है मानो सन्ध्या ने दाड़िम के समान रक्त-वर्ण रवि किरणों को चाभ कर उसके दानों का रस लेकर उनके बीज उगल दिये हैं—वही तारागण आकाश में फैले हैं।

छन्द १० फटिक चटानि—स्फटिक शिला।

छन्द १२ उदन्व—जलधि, समुद्र।

छन्द १४ झख—मछली। राशियों की ओर इशारा है।

छन्द १६ सची सौति—प्राची दिशा।

छन्द १७ दिसिपति बाहन—यम-वाहन, भैंसा। रबि के बाजि अनूप—सूर्य्य के घोड़ों को देखकर भैंसा रूपी अन्धकार भगा।

छन्द २६ बासव बाहनै—इन्दु का वाहन। सिधुर—घोड़ा।

छन्द २८ सज्जवासक—वासक शय्या, एक नायिका।

छन्द ३० चकई—हिरन, एक खिलौना। छपाकर—चन्द्रमा।

छन्द ३६ जटा बल्लि—जटा रूपी बल्ली, लता।

छन्द ३८ सिंहिका सुअन—राहु।

छन्द ४४ किल—पक, कीचड़।

छन्द ४५ रकु—हिरण, मृग। औषधि को गन—औषधिपति चन्द्र को कहते हैं।

छन्द ४६ निसीस—निशापति।

छन्द ५४ तात्पर्य्य यह है कि शशि के उदर में (बाप के उदर में) शशक है क्योंकि इसके पिता समुद्र के उदर से ही वाजि (उच्चैः श्रवः नामक इन्द्र का घोड़ा) वा करीर एरावत नामक हाथी निकला था। पिता के समान पुत्र का होना उचित है।

छन्द ५७ चन्द्रमा में पीयूष नहीं है।

छन्द ६२ रजकी—धोबी।

छन्द ७८ सिंहिका तनूज—राहु।

छन्द ८८ खुरजय—हयचय, घोड़े का सुम।

छन्द ६० हनीकर (हिमकर ?)—तुषार द्युति।

